श्री दि० जैन सरस्वती भवन–कोलारस का प्रथम

श्री मंगलपाठ विधान

(लघु त्रिलोकपूजन पाठ)

— लेखक —
स्व० श्री नन्दराम जी कवि, ताजगंज वाले

—: सम्पादक :—
पं० सिद्धसेन जैन गोयलीय
(जैन सि० रत्न, सा० रत्न, शास्त्री, जातिभूषण)
संयोजक—अ० वि० जैन मिशन व
प्र० अध्यापक श्री ज्ञा० दि० जैन संस्कृत-हिन्दी पाठशाला
कोलारस (म० प्र०)

—: प्रकाशक :—
श्री दिगम्बर जैन सरस्वती भवन
कोलारस (शिवपुरी) म. प्र.

卐

प्रथमवार } ५०० | अष्टाह्निका वीर सं० २४८८ | { मूल्य २।)

इस पुस्तक में कहाँ क्या है ?

क्र०	विषय	पृष्ठ
१.	मङ्गलाचरण-पीठिका	१
२.	चतुर्विंशति जिन समुच्चय पूजा	९
३.	अधोलोक सम्बन्धि चैत्यालयस्थित जिनबिंब पूजा (भवनवासी लोक जिनचैत्यालय पूजा)	१९
४.	व्यन्तरलोक जिन चैत्यालय पूजा	३२
५.	जम्बूद्वीप अकृत्रिम जिनालय पूजा	५३
६.	धातकीखण्ड पूर्वमेरु सम्बन्धि पूजा	६९
७.	अचलमेरु सम्बन्धि पूजा	८७
८.	पुष्करार्द्ध द्वीप पूजा	१०५
९.	विद्युन्माली मेरु सम्बन्धि पूजा	१२२
१०.	तिर्यक् क्षेत्र अकृत्रिम जिनग्रह पूजा	१४२
११.	ज्योतिष लोक जिनग्रह पूजा	१६१
१२.	ऊर्द्धलोक जिनग्रह पूजा	१७५
१३.	सिद्धक्षेत्र पूजा	२१५
१४.	श्री पार्श्वनाथ जिनपूजा	२२७
१५.	अन्तिम (शान्ति···) मंगल	२३७

दानी का आभार—श्री० घासीराम जी जैन 'कवि' की मातेश्वरी श्री० गुलाबबाई ने श्री दि० जैन सरस्वती भवन कोलारस को १०१) प्रदान किये हैं । आभार ।

दो शब्द

प्रध्वस्तघातिकर्माणः केवलज्ञानभासुराः ।
कुर्वन्तु जगतः शान्तिं वृषभाद्याः जिनेश्वराः ।।

संसार अशान्तिका घर है । सुख-शान्ति प्राप्त करने के लिये प्रत्येक जीव लालायित रहता है परन्तु सुख-शांति किसी मन्द कषायी को ही नसीब होती है । जिन्होंने पूर्णरूपेण कषायों पर विजय प्राप्त कर लिया है—वे वीतराग हैं-पूर्ण सुखी हैं । पूजन व्यवहार धर्म है परन्तु वीतराग की पूजन परम कल्याणकारक, शांति प्रदायक है, सम्यक्त्व का कारण है । व्यवहार निश्चयाश्रित है, अतः वीतरागता के अतिरिक्त अन्य पूजन हेय हैं ।

प्रस्तुत श्री पूजन-मंगलपाठ में त्रिलोक सम्बन्धी वीतराग देवों के अकृत्रिम जिन चैत्यालयों का पूजन है । पूजन की रचना 'सत्यं शिवं सुन्दरं' की उक्ति को चरितार्थ करती है । तीन लोक पूजन के बड़े बड़े कवियों द्वारा रचित विशाल पाठ है, किन्तु यह लघु होते हुए भी अपनी सुन्दर रचना से पूजकों को आनन्द-मंगल देने वाला है ।

इसके कर्त्ता हैं-श्री नन्दराम जी कवि । आप ताजगंज के निवासी थे । आपकी वाणी में धार्मिकता, सरलता थी जो आपकी कविता से स्थान-स्थान पर प्रगट होती है । इस पाठ से करणानु-योग का पूर्ण ज्ञान भी प्राप्त हो सकेगा । कवि की रचना ज्यों की त्यों प्रकाशित की गई है । लिखाई की पर्याप्त अशुद्धियों को दूर करने का प्रयास किया है, फिर भी पाठक शुद्ध करके पढ़ें ।

यह पाठ कोलारस (कविलास) के शास्त्र भंडार में था। अभी तक यह कहीं से प्रकाशित नहीं हुआ था। यहां की धर्मप्रेमी समाज की तीव्र उत्कंठा थी कि प्रकाश मे आने पर अधिक जीवों को लाभ मिल सकेगा। समाज की आज्ञा अथवा प्रेरणा से ही यह कार्य सम्पादित हुआ है, अतः इसका श्रेय यहां की समाज को ही है।

यहां की महिला समाज ने ४५१) की सहायता सर्व प्रथम देकर श्रुतभक्ति का परिचय दिया है, अतः उनका अभिनन्दन।

'कोलारस, शिवपुरी जिले मे एक प्रख्यात स्थान आगरा, बम्बई रोड पर स्थित है। प्रथम ग्वालियर महाराज का रुचिकर स्थान था। यहीं से ८६ माल दूरी पर महाराज के लिये जल जाता था। यहां अग्रवाल समाज के १२५ घर हैं। विशाल जिनमन्दिर व दो चैत्यालय हैं। पंचमेरु व पांडुक शिला पत्थर की बनी हैं। मूर्त्तियां १० विशालकाय की हैं। मूल प्रतिमा श्री चन्द्रप्रभु भगवान की है। जैनियों की 'श्री ज्ञान सागर दिगम्बर जैन संस्कृत-हिन्दी पाठशाला है। पाठशाला में लगभग सभी विषयों का अध्ययन कराया जाता है। इसी के साथ व्यायामशाला व पुस्तकालय भी हैं। 'अकलंक मंडल' युवकों का एक ग्रुप है, जिसके द्वारा धार्मिक एवं सामाजिक उन्नति के कार्य सदैव होते रहते हैं। शास्त्र भंडार में काफी हस्तलिखित व प्रकाशित शास्त्र हैं। वार्षिक रथ यात्रा का उत्सव दर्शनीय होता है। भगवान से प्रार्थना है—यहां की समाज दिन प्रति धार्मिक भावों की ओर सलग्न हो।

समाज सेवक:—

सिद्धसेन जैन गोयलीय.

श्री मंगलपाठ-विधान

मंगलाचरण

दोहा

नमन जुगल कर[1] जोरिके, धरों शीस नय[2] भाल[3] ।
श्री पारस परमेश तुम, सेवा वर द्यो हाल ॥ १ ॥

पंच परमगुरु[4] परमपद[5] नमि जिनवानि विशुद्ध ।
जिन प्रतिमा श्री जिनभवन नमि जिनवृष[6] अविरुद्ध[7] ॥ २ ॥

वृषभ आदि अतिवीरलों, पट्चतुष्क[8] तीर्थेश ।
केवलि श्रुतकेवली मुनि गणधर नमों रिपेश ॥ ३ ॥

तीनलोक मधि[9] जिनभवन[10] अकृतम[11] जिनगेह[12] ।
या कृत्रिम[13] नरक्षेत्रमें[14], भव्यनि रचे सुजेह ॥ ४ ॥

---

१ दोनों हाथ. २ नमाकर ३ माथा ४ पंचपरमेष्ठी. ५ उत्कृष्ट-स्थान. ६ धर्म. ७ विरोध रहित. ८ चोवीस. ९ में. १० जिनमंदिर ११ बिना बनाये गये (स्वाभाविक). १२ जिनमंदिर. १३ किसी के द्वारा बनाये गये. १४ मनुष्यलोक (ढाई द्वीप अथवा मध्यलोक) में ।

मनुष्य क्षेत्र में भरत पण, ऐरावत पण जान ।
भूत भविष्यत वर्तते[1], तीर्थेश्वर भगवान ॥ ५ ॥
नमो तीस चौवीस जिन, सप्तशतक अरु बीस[2] ।
नाम लेय पूजन करो, अल्प बुद्धि नय शोस ॥ ६ ॥
पंचमेरु जिन बीस[3] प्रभु, विहरमान सुविदेह ।
तिनके पद-पंकज[4] नमो, उरमें[5] धारि सनेह[6] ॥ ७ ॥

卐

रोटक छन्द

अस्सी जिनग्रह गिरिराज[7] विषै ।
अस्सी ही नग[8] वक्षार दिषै ॥
गजदन्त बीस कुल[9] तीस अखै ।
सौ सत्तरि गिरि वैताड्य लखै ॥ ८ ॥
दश कुलद्रुम[10] इक्ष्वाकार मनौ ।
मनुषोत्तर जिनग्रह चारि जनौ ॥
नंदीश्वर बावन कुंडल पै ।
चव चव रोचकवर गिरवर पै ॥९॥
सब मध्यलोक जिन जान भवन ।
'अट्ठावन चारि शतक' प्रनमन ॥
शत आठ अधिक जिनबिंब रचन ।
सम्यक रचना सु अनादिनिधन[11] ॥१०॥

---

१ वर्तमान. २ सातसौ बीस ३ पंचमेरु संबंधी विद्यमान बीस तीर्थंकर. ४ चरण कमल ५ हृदयमें ६ स्नेह-प्रेम-अनुराग या भक्ति. ७ सुदर्शनादि पंच मेरु. ८ पर्वत. ९ कुलाचल १० जम्बूवृक्ष. ११ स्वयंसिद्ध-आदि अंत रहित

कवित्त

सप्तकोटि अरु लक्ष बहत्तरि[१], जिनग्रह अधोलोकमें जान ।
भवनवास असुरनिके मंदिर, राजैं जिन प्रतिबिम्ब महान ॥
लाख चौरासी सहस सत्याणव, तेइस[२] ऊरधलोक वखान ।
व्यन्तर ज्योतिष असंख्यात ग्रह, आठ अधिक शत चैत्य प्रमान ॥११॥
कंचन सहस गिरिनिपरि जिनग्रह, अथवा और जिनालय जान ।
इक जिनबिम्ब विराजै जिनमें, स्वयंसिद्ध हैं श्री भगवान ॥
सिंहासन सिरछत्र फिरें अर, चंवर ढरैं भामंडल आन ।
पुष्पवृष्टि सुर दुंदुभि बाजै, वृक्ष अशोक रु जै जैवान ॥१२॥

दोहा

अर्हत् सिद्ध सु सूरि[३] नमि, बहुश्रुत[४] यति[५] जिनवानि ।
जिनवृष[६] जिनप्रतिमा भवन, चारि संघ[७] मन आनि ॥१३॥

मंगलमय मंगलकरण, उत्तम सरण जु एह ।
पाठ रचौं मंगल निमित, श्रुतिमाता[८] वर देह ॥१४॥

कवित्त

विघन हरनकौ बुद्धि करनकौ, शास्त्रोदधि[९]के गाहनसाज ।
पूरणता नास्तिक[१०] हरताकूं, शिष्टाचार पालने काज ॥

---

१ सातकरोड़ बहत्तर लाख जिनमंदिर अधोलोक सम्बंधी. २ चौरासी लाख सत्यानवे हजार तेइस जिनमन्दिर ऊर्ध्वलोक सम्बंधी. ३ आचार्य. ४ उपाध्याय. ५ मुनि. ६ जिनधर्म. ७ ऋषि, यति, मुनि, अनगार. ८ सरस्वती माता. ९ शास्त्रसमुद्र १० नास्तिकत्वस्य परिहार–शिष्टाचारप्रपालनम्, पुण्यावाप्तिश्च निर्विघ्नशास्त्रादौ तेन संस्तुतिः.

उपकारयादिको स्वसुख स्वादकौ, मोक्षनगरके गमन इजाज ।
मंगल करौं अष्टअग[1] नयके, मुखतैं जय जय शब्द सुगाज ॥१५॥
मंगल षट्विधि कह्यौ जिनागम, नाम थापना द्रव्य रु भाव ।
क्षेत्र काल विधि बता चिंतनकरि, पाठ रचौ संक्षेप उपाव ॥
जुगकर जोरि भजौं पारसप्रभु, फुन तिनके चरनों सिर नाय ।
अरहत सिद्ध यती जिनवाणी रत्नत्रयवृष[2] हृदय सुलाय ॥१६॥

॥ इति पीठिका ॥

卐

अथ सिद्धस्तुति—

कवित्त

नभ[3] अनन्तको अन्त नहीं है, तामै लोकाकाश सु जान ।
पुरुपाकार रच्यौ अनादिकौ कर्त्ता हर्त्ता नहि रक्षान ॥
ऊरधलोक ऊपरै राजै, मध्यलोक पाताल सुठान ।
चौदहराजु तुंग[4] शतकत्रय, तेतालीस[5] घनाकर मान ॥१७॥

लोक शिखरपै सिद्धक्षेत्र है, सिद्धशिला तिध राजै सार ।
सुद्ध बुद्ध निर्लेप निरंजन, अक्षातीत अखै सुखकार ।
अविनाशी अविकार परम रस, मंन्दिर ज्ञानमई अघहार[6] ॥
है अनन्त धारैं अनन्तगुण, तिनके चरण नमौं मनहार ॥१८॥

---

१ दोनो हाथ, दोनों पैर, भूमिमे मस्तक नवाना, मन वचन काय की शुद्धि, इस प्रकार प्रणाम के आठ अग हैं. २ रत्नत्रयधर्म ३ आकाश. ४ ऊंचा. ५ तीन सौ तेतालीस घन राजू. ६ पापके नाश करने वाले.

कृतकृत[1] सिद्ध किये काज भव, पुरुषाकार विराज ऊन[2]।
सर्व द्रव्यगुणपर्ज[3] कालत्रय, एक समय जानै अविनूत[4] ॥
आत्मीक सुखपिंड निराकुल, अजर अमर निवसै नभसून ।
निश्चयनय अनन्तगुण धारै, अष्टगुणा[5] व्यवहारै हून ॥१९॥

卐

अथ जिनस्तुति—

छन्द–अडिल्ल

श्री श्रीमान अनन्तचतुष्टयको लहा ।
और स्वयंभू अपनो शक्ति प्रगट गहा ।
वृषभधर्मके कर्त्ता निह्चै जानिये ।
संभव सुख करि उपजे प्रगट बखानिये ॥२०॥

छन्द–पद्धरि

प्रणमौं स्वयंभू सुखमय सुजान, उपजे सु आप आतम प्रमान ।
तुम स्वयं प्रकाश स्वयंभु जान, सबके स्वामी इम प्रभू आन ॥२१॥
तुम नाम विश्वभू विश्वजान, अपुनर्भव भवतै रहित मान ।
तुम विश्वहितू जगबंधु होइ, तुम विश्व ईश ईश्वर जु जोइ ॥२२॥
तुम विश्वनेत्र जग चक्षुवान, तुम अक्षय अविनाशी बखान ।
तुम विश्वतत्त्व ज्ञाता महेश, तुम विद्यापति विद्या गणेश ॥२३॥
तुम विश्वयोनि जग जोनि जान, तुम विभू सकलपति सुखनिधान ।
तुम नाम विधाता धर्मकार, विश्वेश नाम ईश्वर अधार ॥२४॥

---

१ कृतकृत्य. २ अन्तिम शरीरसे किंचित् कम. ३ पर्याय. ४ स्पष्ट ५ सम्यक्त्व, अनन्तदर्शन, केवलज्ञान, अगुरुलघु, अवगाहन, सूक्ष्मत्व, वीर्यत्व, अव्याबाधत्व ।

तुम विश्वनेत्र जगचक्षु जान, तुम विश्वव्याप जग व्याप्त आन ।
जगमें व्यापी जग व्याप्त होइ, विधिरू विधानकर्त्ता जु सोई ॥२५॥

छन्द—अडिल्ल

शाश्वत नाम तुम्हारो शाश्वतता धरौ ।
विश्वमुखी जग सन्मुख सब हितकौ करौ ॥
विश्वकर्तृ तुम नाम जगतमें सार जी ।
भले बुरे सब कर्मनि जाननहार जी ॥२६॥

सवैया इकतीसा

जगतजेष्ठ विश्वमूर्ति हो जिनेश सर्वदर्श,
विश्वदृक् नाम गणधर वखानिये ।
ईश्वर सकलपति विश्वजोति स्वामीभूत,
जिन सब कर्मनि को नाशि शिव थानिये ॥
जिष्णु है प्रकाशज्ञान जगमें विकासविष्णु,
जगमें सुव्याप विश्वपति जानिये ।
जीति संसार घोर अद्भुत अचिंत जोर
भव्य वधु कर्म तोर आन तुम आनिये ॥२७॥

दोहा

कर्मभूमिकी आदितें, आदि जुगादि विचार ।
पंच ब्रह्मपर निष्ठते, शिव कल्यानन सार ॥२८॥

चौपाई—१५ मात्रा

सर्वोत्कृष्ट परम तैजान, वरतै वर परतर जु बखान ।
सूक्षम कहिये ज्ञान सरूप, अवधिगम्य नहि जिनको रूप ॥२९॥

परम इष्ट परमेष्ठी जान, नाम सनातन नित्य बखान।
स्वयंज्योति स्वयमेव प्रकाश, अजते आयु भयो परकास ॥३०॥
रहित शरीर अजन्मा जान, ब्रह्मज्योति निज ज्योति बखान।
अक्षयोनि कहिये तुम देव, योनि रहित उपजे स्वयमेव ॥३१॥
विजयी मोह महारिपुहान, जेता सर्वजीत भगवान।
चक्री धर्म धर्मरथधार, दयाध्वजा ध्वजकरुणा लार ॥३२॥
प्रशांतारि रागादि विनाश, अनन्तात्मगुणऽनंत सुभास।
जोगी ज्ञानारूढ सुजान, अर्थ सहित इह नाम बखान ॥३३॥
योगस्वरार्चित योगी जान, पूजत पद करि भक्ति महान।
वेत्ता ब्रह्मतत्त्व बिन भर्म, ब्रह्मत्वज्ञ मोक्ष लहि मर्म ॥३४॥

छन्द—अडिल्ल

ब्रह्मोद्यावित ब्रह्म बचनको जानही।
ब्रह्म वचन कहिये जिनवचन समान ही॥
नाम यतीश्वर यतिके ईश्वर जानिये।
नाम सिद्ध कृतकृत्यन कार्य बखानिये ॥३५॥

चौपाई—१५ मात्रा

बुद्धि कही है ज्ञान महान, प्रबुद्धात्म कहि आतम जान।
सिद्धारथ सब कारज सिद्ध, शासन सिद्धि अज्ञान विरुद्ध ॥३६॥

अडिल्ल

नाम सिद्धसिद्धान्त विभू तुम जानिये।
अनादि सिद्ध जो नेम सिद्धान्त वखानिये॥
अरु अध्येय तुम नाम ध्यायवे योग्य हो।
सिद्धिसाध्य मुनि साधन करत मनोज्ञ हो ॥३७॥

नाम हितंतर जगके हितू बखानिये ।
और सहिष्णु रसील सहन परमानिये ॥
नाम अच्युततैं जिनको खंड न जानिये ।
अन्त रहित तैं नाम अनंत बखानिये ॥३८॥

छन्द—चाल

प्रभुविष्णु सुनाम कहीजे, उत्कृष्ट समर्थ लहीजे ।
भव उद्भव नाम सुजानो, उद्भव संसार बखानौ ॥३९॥
परभूष्ण जु नाम तुम्हारा, परनाम स्वभाविक धारा ।
कह अजर बुढापा नाहीं, आजर्य ग्रस्यो नहि जाही ॥४०॥
भ्राजिष्णु कहैं परकासा, आधीश्वर ईश्वरभासा ।
अव्यय तुम नाम सु जानो, अविनाशीपद गहिरानो ॥४१॥
अर नाम सुभास कहीजे, जामैं वह प्रभा लहीजे ।
असंभूष्णु नाम तुम्हारा, प्रत्यांग प्रकाश सुधारा ॥४२॥
स्वयंभूष्णु नाम तुमारो, स्वयमेव प्रकाश सुधारौ ।
पुरातन नाम बखानो, आनन्द सिद्ध परमानो ॥४३॥
परमातम नाम तुम्हारा, उत्कृष्ट सु आतम धारा ।
तुम वचन सुधारस[1] पाई, भवसंतति[2] दाह नसाई ॥४४॥

चौपाई १५ मात्रा

परम ज्योति को अर्थ सुजान, महाज्योति धारक भगवान ।
परमेश्वर त्रय जगत प्रधान, तीन जगत परमेश्वर जान ॥४५॥

दोहा

अर्थ सहित जिन नाम की, माला परम रसाल ।
जे भवि धारैं कंठ में, पावें सुर शिव हाल ॥४६॥

१ अमृत. २ संसार—परिपाटी.

गुण रतननिकी माल को, हृदय माहि जो धार ।
स्वर्ग मोक्ष सुख सो लहे, भव्य जीव हितकार ॥४७॥
पंच महाव्रत आदरे, तीन गुप्ति पालेह ।
पांच समिति पाले सदा, कर्म-काष्ठ जालेह ॥४८॥
रत्नत्रयनिधि उर धरें, त्यागें विषय कषाय ।
दशलक्षणवृष को धरें, सो मुनि शिवपुर जाय ॥४९॥

अथ समुच्चय पूजा

स्थापना (अडिल्ल)

वृषभ आदि अतिवीर चतुर्विंशति जिना ।
ध्यान अग्नि करि हने कर्म वसु[1] दुर्जना ॥
वसु गुण जुत शिव गये छारि[2] वसु कर्म को ।
वसु अंगको नय[3] थापन करि हरि भरम[4]को ॥

ॐ ह्रीं श्री वृषभादिमहावीरपर्यंत चतुर्विंशतितीर्थंकरदेवाः अत्र अवतरत अवतरत संवौषट् (आह्वाननं)
अत्र तिष्ठत तिष्ठत ठः ठः (स्थापनं)
अत्र मम सन्निहिताः भवत भवत वषट् (सन्निधीकरणं)

अथाष्टक—(चाल नंदीश्वर पूजन)

पद्मद्रह[5]को ले नीर, मिष्ट सुगध महा ।
अति निर्मल तिस[6] हर पीर, पूजत सुक्ख लहा ॥
षट्चतुक[7] जिनेश महान, सब सुखकारक हैं ।
हम जजत प्रीति उर आन, भवदधि[8] तारक हैं ॥१॥ जलं॥

१ आठ. २ नष्ट करके ३ नमाकर. ४ संशय. ५ पद्म सरोवर. ६ तृषा. ७ चौबीस. ८ संसार-समुद्र ।

मलयागिर चंदन सार, केशर मांहि घसौ।
जिनपद चरचों सुखकार, भवतप दाह नसौ॥
षट् चतुरु०, हम० ॥ चन्दनं ॥ २ ॥

मुक्ताफल अक्षत धार, चन्द्रकिरन सम जो।
ले कनक थाल भरि साल, पुज अनूपम जी॥
षट् चतुरु०, हम० ॥ अक्षतं ॥ ३ ॥

जूही मचकुंद गुलाब, सार सु पुष्पनितैं।
सब काम व्रिथा नसि जय, छूटौं दुःखनितैं॥
षट् चतुरु०, हम० ॥ पुष्पं ॥ ४ ॥

लाडू फेगी रस धार, घृत मिष्ठान सनैं।
इह[1] रोग क्षुधा निरवार, वेदन दुःख हनैं॥
षट् चतुरु०, हम० ॥ नैवेद्य ॥ ५ ॥

वाती कर्पूर वनाय, आरति हर्ष मनौं।
अज्ञान अंधेरो जाय, करन अनंद घनौं॥
षट् चतुरु०, हम० ॥ दीपं ॥ ६ ॥

कृष्णागर धूप सु खेय, अग्नि धुपायनिमैं।
वसु कर्म जलैं स्वयमेव, सुक्ख अथायनिमैं॥
षट् चतुरु०, हम० ॥ धूपं ॥ ७ ॥

मीठे सुवरण रसधार, फल अति उत्तम ले।
भेटे तुम चरन निहार, शिवफल तुरत मिले॥
षट् चतुरु०, हम० ॥ फलं ॥ ८ ॥

जल फल आदिक वसु धार, अर्घ बनाय जजौं।

---

१ यह।

श्री जिनवरजी सुखकार, हरषत चित्त सजौं,
षट् चतुक०, हम० ॥ अर्घं ॥ ९ ॥

कवित्त–

वृषभ अजित संभव अभिनंदन, सुमति सुपद्म सुपारस चन्द ।
पुष्पदन्त शीतल श्रेयांसवर, वासुपूज्य जिन विमल अमन्द ॥
श्री अनन्त अरु धर्म शान्ति प्रभु, कुंथु अरह मल्लि सुव्रत[1] जिनन्द ।
नमि नेमीश्वर पार्श्व वीर जिन, मन वच तन पूजत शत[2] इन्द ॥१॥
वर्तन[3] लक्षण काल नित्य है, समयादिक घटि[4] पहर सुजान ।
अहोरात्रि[5] पुनि पक्ष महीनौं, ऋतु[6] षट् मास अयन[7] रखान ॥
शत, सहस्र, लख, कोड़ि, संख्य, पल, सागर परे गिनत संख्यान ।
कोडाकोडो विंशति सागर, कल्पकाल[8] मर्याद बखान ॥ २ ॥
बीतें काल कल्प बहु संखित, हुंडा[9] कल्पकाल जब होइ ।
रीति अनीति[10] बहुत प्रगटै जब, ऐसौ कथन कियो मुनि सोइ ॥
भरतखंड में अवसर्प्पणि[11] षट् कालनिको[12] रचना सुहमोह ।
पहले दूजे तीजेमें लखि भोगभूमि चवथे[13] करमोर ॥ ३ ॥

---

१ मुनिसुव्रत. २ सौ इन्द्र—भवनवासियोके ४०, व्यन्तरोके ३२, कल्पवासियों के २४, ज्योतिषी देवोंके २, मनुष्योंका १ (चक्रवर्ती), पशुओंका १ (सिंह). ३ वर्त्तन–पलटना–फेरफार. ४ घड़ी. ५ दिनरात. ६ दोमास. ७ छहमास. ८ बीस कोड़ाकोडी सागर का एक कल्प काल होता है। ९–४६ कल्पकाल (उत्सर्पिणी-अवसर्पिणी) बीत जाने पर हुँडाकाल आता है। १० हुंडाकाल में अनेक विपरीत बातें हो जाती हैं--जैसे, तीर्थकरके पुत्री होना, चक्रवर्ती की हार, त्रशठ शलाका पुरुषोंकी संख्यामें कमी, आदि। ११ जिसमें आयु, सुख, ऊंचाई आदि घटते जावें। १२ सुखमा सुखमा, सुखमा, सुखमा दुखमा. दुखमा-सुखमा दुखमा, दुखमा दुखमा। १३ चतुर्थकाल में कर्मभूमि।

कुलकर चवदह तीजेमें भए चौथे तीरथपति[१] चक्रीश[२] ।
बलि[३] नारायण प्रतिनारायण नारद रुद्र काम[४] अधिक्रीस ॥
शिवनामी नरनामी बहु भए कथन कियो जिन पूज शक्रीश[५] ।
पूजन करौं नाम ले भिन भिन सुनौं भविक तजकैं वक्रीश[६] ॥४॥

अथ प्रत्येक पूजा—(दोहा)

आदि जगत गुरु आदि ऋषि, धर्मतीर्थ करतार ।
पिता नाभि मरुदेवि सुत, पूजौं ऋषभकुमार ॥१॥
ॐ ह्रीं श्री ऋषभदेवाय अर्घं० ॥

अजितनाथ अरि जीतकै, केवल लक्ष्मी पाय ।
बोधि[७] भव्य सम्मेदतैं, पहुंचे शिवपुर जाय ॥ २ ॥
ॐ ह्रीं श्री अजितनाथजिनाय अर्घं० ॥

चौपाई (१५ मात्रा)

संभव स्वामी हरि संसार, निज आतमकी शक्ति सम्हार ।
लोकालोक निहारत भये, पूजौं चरण-कमल हरषये ॥ ३ ॥
ॐ ह्रीं श्री संभवनाथजिनेन्द्राय अर्घं० ॥

सुन्दरी—छन्द—

श्री अभिनन्दन चतुर्जिनेशजी, पुनि वंदित सुरनि महेशजी ।
पंचकल्याणक ऋधि पाइकें, थए शिवपुर जिन प्रभु जाइकै ॥ ४ ॥
ॐ ह्रीं श्री अभिनन्दनजिनाय अर्घं० ॥

---

१ तीर्थंकर, २ चक्रवर्ती, ३ बल्देव ४ कामदेव, ५ इन्द्र, ६ कुटिलता, ७ उपदेश देकर ।

भुजंगप्रयात[1]—छन्द —

सुमतिनाथ ! द्यो कुमति नासिके जी,
करूं अरज मैं मोक्षघर आसकैं जी ।
तुमी दिव्यध्वनितैं घने भव्य तारे,
ठए मोक्ष थलमें, लहे गुण अपारे ॥ ५ ॥
ॐ ह्रीं श्री सुमतिजिनाय अर्घ्य० ॥

शिखरिणी[2]—छन्द—

तुम श्री जिन स्वामी पद्मप्रभु पद्माभा समान ।
तुमैं सेवैं निशदिन गणधरादि ऋषिपती ॥
धरौ अद्भुत महिमा त्रिभुवनतिलक अनुपमं ।
प्राप्ते मोक्षालं जजत तुम चरण कमलं ॥ ६ ॥
ॐ ह्रीं श्री पद्मप्रभुदेवाय अर्घ्य० ॥

आर्या—छन्द—

सप्तम तीरथ करता, पूजत सुर इन्द्र खग मुनीद्रं च ।
नाम सुपारस जिनवर, पूजौं नयन अष्ट अंग धरनीयं ॥ ७ ॥
ॐ ह्रीं श्री सुपार्श्व जिनाय अर्घ्य० ॥

चन्द्रप्रभु शशिवदनं, निर्मल अविकार दोष आवरनं ।
रहितं, सहित ज्ञानं, पूजित त्रैलोक्यपूजतं चरनं ॥ ८ ॥
ॐ ह्रीं श्री चन्द्रप्रभुजिनेन्द्राय अर्घ्य० ॥

---

१ "भुजंगप्रयात चतुर्भिः यकारै." लक्षण से प्रस्तुत पद्य अशुद्ध है । २ रसैरुद्रैश्छिन्नाः यमनसभलागः शिखरिणी' यह स्वरूप शिखरिणी छन्दका है । ऊपर का पद्य कवि की भावना को लेकर ज्यों का त्यों रख दिया है, वास्तव में अशुद्ध है । —सम्पादक ।

त्रोटक-छन्द—

वली काम रिपु मदन किय जिन, पुष्पदंत जिन पूजत सुरतिन ।
केवल लहिकै बोधे भविजन कर्म हत शिव लिय पूजित मुनिजन ॥९॥

ॐ ह्रीं श्री पुष्पदन्तजिनाय अर्घं० ॥

अडिल्ल-छन्द—

शीतल वचननि करि जिनवृष उपदेसिया ।
भवदधितैं तरि मोक्षनगर में पैठिया ॥
ऐसे श्री शीतलप्रभु सुरपति पूजिया ।
हम पूजैं मन वच तन सन्मुख हूजिया ॥१०॥

ॐ ह्रीं श्री शीतलनाथजिनेन्द्राय अर्घं० ॥

सोरठा—

श्रेय[१] करहु श्रेयांस, पंच कल्याणक ऋद्धि लहि ।
शिखरसमेद गुणांश, मोक्ष लियौ पूजित चरण ॥११॥

ॐ ह्रीं श्री श्रेयांसनाथजिनेन्द्राय अर्घं० ॥

गीता-छन्द—

श्री वासुपूज्य सुत्रिजग पूजित, सुर असुर खग[२] नरपती[३] ।
जिन पंचकल्याणक[४] सु हूवे, चंपापुरमें[५] शुधमती ॥
बारमै शुभ तीर्थंकर्ता[६], कमलसम अंग लाल जी ।
मैं स्वच्छ मन वच काय करिकै, पूजि तजि जजाल जी ॥१२॥

ॐ ह्रीं श्री वासुपूज्यजिनाय अर्घं० ॥

---

१ कल्याण २ विद्याधर. ३ चक्रवर्त्ती ४ गर्भ, जन्म, तप, ज्ञान, मोक्ष. ५ वासुपूज्य भ. का निर्माण क्षेत्र. ६ तीर्थंकर (तीर्थं धर्मं करोतीति तीर्थंकरः) ।

मालिनी छन्द—

विमल विमलनाथं, तीर्थकर्त्ता सुपूज्यं ।
विमल मति सुधारं, बोधये भव्यलोकं ॥
शिवमग उपदेशं, कर्मकाष्ठप्रदग्ध ।
मन वच तन योगं, पूजितंऽहं जिनेन्द्रं ॥१३॥
ॐ ह्रीं श्री विमलजिनेशाय अर्घ० ॥

दोहा—

अन्तकाल मैं भटकतैं, भाग[1] योग अवलोइ[2] ।
श्री अनन्तप्रभुजी हमें, सुख अनन्त निज[3] दोई[4] ॥ ४॥
ॐ ह्रीं श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्राय अर्घ० ॥

धर्म द्विविधि[5] कहि भविकजन, कीने जिन भवपार।
धर्मनाथ सोई हमे, आत्मधर्म द्यौ सार ॥१५॥
ॐ ह्रीं श्री धर्मनाथजिनेन्द्राय अर्घ० ॥

ढाल-त्रिभुवन गुरु स्वामी की—

श्री शान्ति जगतपतिजी वसुकर्म विकट[6] हत जी ।
लहि पंचकल्याणक शिवपुर थिति करी जी ॥
तुम पूरे साहिबजी जगमाहि विख्यात हो जी ।
हम पूज रचावैं, गुणगण गाइये जी ॥ १६ ॥
ॐ ह्रीं श्री शान्तिनाथजिनेन्द्राय अर्घ० ॥

---

१ भाग्य-संयोग २ देखकर. ३ अपना. ४ दो. ५ दो प्रकार का धर्म-मुनि तथा, श्रावक का ६ भयंकर ।

ढाल सेठानी—

कुंथुप्रभुजी कुंथु[१] प्रमुख रक्षा करी ।
तीरथपति जी चक्र-ईश सुरपति नमैं ॥
केवल लहि जी भव्य जीव तारे घने ।
हम पूजैं जी अष्ट अङ्ग नय भगतितैं ॥१७॥

ॐ ह्रीं श्री कुंथुनाथजिनेन्द्राय अर्घं० ॥

दोहा—

अरह जिनेश्वर कर्म हत, ज्ञानादिक गुण पाइ ।
बोध भव्य सम्मेदतैं, मोक्ष ठए सुख जांइ ॥१८॥

ॐ ह्रीं श्री अरहनाथजिनेन्द्राय अर्घं० ॥

मल्लि सल्लि-अरि चूरकैं[२], केवल लक्ष्मी पाइ ।
आठों[३] द्रव्य संजोयकै[४], पूजौं अङ्ग नवाइ ॥१९॥

ॐ ह्रीं श्री मल्लिनाथाय अर्घं० ॥

छन्द—जोगीरासा

मुनिसुव्रत बीसम जिनवरकौ जन्म होत सुर लाई ।
गिरिराजाके[५] पांडुकवनमे थापि सु न्हवन कराई ॥
लाय मातपितु सौंपि सुराधिप[६] आनन्द नाट नटाई ।
तप धरि ज्ञान पाइ शिव पहुंचे हयां[७] पूजैं हरषाई ॥२०॥

ॐ ह्रीं श्री मुनिसुव्रतजिनाय अर्घं० ॥

दोहा—

नमैं सुरासुर खग नये, नमि जिन जग जयवन्त ।

१ सूक्ष्म द्वीन्द्रिय जीव. २ शल्यरूपी बैरी नष्ट करके. ३ जल गंध... ४ इकट्ठा करके. ५ सुदर्शनमेरु ६ इन्द्र. ७ यहा ।

तीन जगतपति दयाकर, शिव प्रभु पूज रचंत ॥२१॥

ॐ ह्रीं श्री नमिनाथजिनेशाय अर्घं० ॥

राजुल[1] तजि गिरनारि[2] पै, धार योग हत मोह ।
नेमिनाथ लहि ज्ञानकौं, पूजौं तज मन छोह[3] ॥ २२ ॥

ॐ ह्रीं श्री नेमिनाथजिनेन्द्राय अर्घं ॥

पार्श्व पास[4] छेदी तुरत, दैत्यमान हरि देव ।
मोक्ष शिवालय थिर ठये, जजत देहु निज सेव ॥ २३ ॥

ॐ ह्रीं श्री पार्श्वनाथदेवाय अर्घं ॥

चरम[5] देह, जिनवर चरम[6], महावीर अतिवीर ।
वर्द्धमान सन्मति यजौं, वीर यजौं जग धीर ॥ २४ ॥

ॐ ह्रीं श्री वीरजिनेशाय अर्घं ॥

वृषभ आदि अतिवीर लौं, पूजन कर जयमाल
रचौं, सुनौ भवि कान दे, कटैं कर्म--वन—जाल ॥ २५ ॥
ॐ ह्रीं श्री वृषभादिवीरपर्यंतचतुर्विंशतिजिनेभ्यो पूर्णार्घम् ।

जय—माल

घत्ता--चौवीस जिनेश्वर नमित सुरेश्वर, भक्ति लाय मुनिजन ध्यावैं ।
हम पूजैं, नावैं, गुणगण गावैं, साज बजावैं सुख पावैं ॥

पद्धरी—छन्द —

जय नमौं आदि आदीश देव, जय नमौं अजित मुनि करत सेव ।
जय नमि श्री संभव भव हरन, जय नमि अभिनन्दन जग सरन ॥२॥

---

१ उग्रसेन राजाकी पुत्री. २ भ० नेमिनाथ की निर्वाणभूमि. ३ मैल, पाप, कषाय या क्रोध. ४ कर्मपाश. ५ अन्तिम शरीर. ६ अन्तिम तीर्थंकर.

जय नमि श्री सुमति सुबोध दाय, जय नमि पद्मप्रभु पद्म भाय ।
जय नमौं सुपारस देव देव, जय चन्द्रप्रभ दे सेव सेव ॥२॥

जय पुष्पदन्त किय पुष्पदन्त, जय शीतल कीने करम अन्त ।
जय नमि श्रियांस शिव देय श्रेय, जय वासुपूज्य पूजत सुरेय ॥३॥

जय नमौं विमल श्री विमल स्वामि, जय नमि अनन्त जिन विगत काम[1]।
जय धर्मनाथ वृष[2] द्विविधि[3] भाष, जय शांति २ करि तजभिलाष[4] ॥४॥

जय कुन्थु कुंथ रक्षक सदीव, जय अरह जिनेश्वर जगत पीव[5] ।
जय नमौं मल्लि जिन तजी सल्ल, जय मुनिसुव्रत व्रत धरि निसल्ल ॥५॥

जय जय नमि नमिय सुराधिदेव, जय जय नेमीश्वर दया टेव[6] ।
जय पार्श्वनाथ नमि जोर हाथ, जय वर्द्धमान नमि धरणि[7] माथ ॥६॥

घत्ता —

जय तीरथ करता, भवदुख हरता, भरता ज्ञान सुमुक्ति वरं ।
जय गुणकरि पूरा, करि मन सूरा, चतुर्विंश[8] जिन उक्ति वरं ॥७॥

महार्घम् ॥

अथ आशीर्वाद—(दोहा)

चौबीसौं जिनराजके, गुणरतननि की माल ।
कंठ धरैं जे भव्यजन, कटैं कर्म जंजाल ॥८॥

(इत्याशीर्वादः)

॥ इति चतुर्विंशति समुच्चय पूजन ॥

---

१ काम रहित. २ धर्म. ३ दो प्रकार. ४ अभिलाषा—इच्छा. ५ पति—स्वामी. ६ आदत. ७ पृथ्वी ८ चौबीस

अधोलोक चैत्यालयस्थ

— श्रीजिनबिम्बपूजन —

दोहा—अधोलोक जिनभवनमें,[1] श्री जिनबिम्ब[2] रसाल[3] ।
पूजा संस्तुतिपाठको[4], रचौं पूर्व[5] नय[6] भाल[7] ॥

पीठिका (कवित्त)—

अधोलोक की रचना माहीं, सप्त नरक में नारक जीव ।
[8]रत्न शर्करा द्वितिय, वालुका, पंक धूम तम प्रभा सदीव ॥
महा अंधतम अंत नरक मे, नीचे नीचे हैं पृथ्वीव ।
वातवलय तीनों कर वेढित, वेठनवत[9] जानो भविजीव ॥ १ ॥

एकशतक छिनवै[10] घनराजू, भाषा श्रीजिनवर जगदीश ।
दश[11] सोलह बाईस अठाइस, चौंतिस चालिस अर छयालीस ॥
घनाकार सातों पृथ्वीका, रतनप्रभा मधि हैं भवनीस[12] ।
दसविधि जानि कही जिन आगम, कथन कियो गणधर मुनि ईस ॥२॥

असुर नाग विद्युत सुपर्णवर, अग्नि वात शुभ स्तनित कुमार ।
उदधि दीप दिग् दश विधि बरने, इकमें दश दश विबुध प्रकार ॥
इन्द्र समानिक त्रयत्रिंशत सुर, परिषद आत्मरक्ष अधिकार ।
लोकपाल आनीक प्रकीर्णक, आभियोग्य किल्विष दश सार ॥३॥

---

१ अकृत्रिम जिन चैत्यालय. २ जिनप्रतिमा. ३ मनोहर. ४ गुण-कथन, स्तुति ५ प्रथम ६ नमाकार. ७ मस्तक. ८ रत्नप्रभा आदि नरकके नाम, वहां की प्रभा आदि के कारण हैं. उनके असली नाम ये हैं— घम्मा, वंशा, मेघा, अंजना, अरिष्टा, मघवी, माघवी । ९ मूढ़ेके समान. १० एक सौ छयानवे घनराजू कुल अधोलोक का विस्तार है. ११ दशादि प्रत्येक भूमि का विस्तार है १२ भवनवासी

एक भेदमे[1] इन्द्र दोइ कहे, दो प्रतेंद्र भाषे भगवान ।
रतनमई मन्दिर तिन राजैं, चित्र विचित्र भीति उर आन ॥
वापी सुधा अम्बुकर पूरित, रतन सुवर्ण रची सोपान[2] ।
फुलवाड़ी कल्पनितरु पंकति, पवन बसन्ततनी सुखपान ॥४॥
शीत उष्ण पावस[3] की बाधा, रोग शोक दुश्मन नहिं जान ।
चोर चुगल विसनी दुखदायक, पशुकृत दुःख नहीं उर आन ।
क्षेत्र काल चल रीत नहीं जहं, विभव न विनसै आयुप्रमाण ।
सुखमय सागर काल वितीतै, मानूं एक महूरत जान ॥५॥
इन्द्राणी देवी अति सुन्दर, रतनमयी भूषण पहनीय ।
नेत्र कटाक्षनिकरि जग मोहे, पग-जेवर[4] बाले[5] रमनीय[6] ॥
श्रीजिनवरके गुणगण गावैं, ध्यावै नावैं सिर भुवनीय[7] ।
स्वर्गलोक के ये अनूप[8] सुख, भोगैं हैं जगमें पुननीय[9] ॥६॥
भवनवासि सुरमन्दिर[10] पंकति, तिन पै जिनमन्दिर सोभेइ ।
मंगल द्रव्यतनै अति राजै, वंदनमाला लटकैं तेइ ॥
घंटा झालर पटहा बाजै, शंख मृदंग किंकनी जेइ ।
हाव भाव विभ्रम विलास लय, नाचै गावैं अपछर[11] तेइ ॥७॥
एक शतक अठ अधिक विराजै, जिनवर बिंब रतनमयसार ।
इक जिनगृह मे इह प्रमाण ले, गिनति करौ भवि उरम धार ॥
सप्तकोटि गिनि लक्ष बहत्तरि, प्रतिमा जोड धरौ सुखकार ।
अष्ट शतक तेतीसकोडि अर, लक्ष छिहत्तरि नमन हमार ॥८॥

१ प्रत्येक में. २ सीढियाँ. ३ वर्षा ऋतु ४ पैरका आभूषण. ५ कुण्डल. ६ सुन्दर. ७ पृथ्वी तक. ८ अनोखे, अनुपम, उपमा रहित. ९ पुण्यात्मा. १० देवगृह. ११ अप्सरा ।

॥ इति पीठिका ॥

अथ पूजा आरम्भ

स्थापना (दोहा)—

अधोलोक सुर अहनिमें, सप्तकोडि लख और ।
जानि बहत्तरि गेह जिन, थापन कर, कर जोर ॥१
रतनमई जिनबिंब हैं, शोभा अधिक अनूप ।
दर्शन करत सुभव्यजन, पावैं निज गुण रूप[1] ॥

ॐ ह्रीं श्री अधोलोकस्थित दशजाति भवनवासी देवनके मंदिर में सप्तकोडि बहत्तरिलक्ष चैत्यालय शाश्वते एक मंदिर प्रति एक शतक आठ जिनबिंब रतनमई पांचसौ धनुष तुंग समस्त मंदिरके आठशतक तेतीसकोटि छिहत्तरिलक्ष जिनबिंब अत्र अवतरावतर संवौषट् (आह्वानन) अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः (स्थापनं) अत्र मम सन्निहितो भव भववषट् (सन्निधीकरणं)

अथाष्टकं

(छन्द—जोगीरासा)

पद्मद्रहको नीर सुउत्तम, रत्न कटोरी भरिकै ।
धार तीन दे जिन पद आगे, जन्म मृत्यु दुख हरि कै ॥
अधोलोक असुरनिके मंदिर, जिन मंदर अति सोहै ।
सप्तकोटि[1] गिनि लक्ष बहत्तरि, जिन प्रतिमा मन मोहै ॥१॥
ॐ ह्रीं अधोलोकस्थित श्री जिनमन्दिरजिनेभ्यो जलं० ॥

---

१ स्थान, ब्रह्मोत्तर दिगम्बर पर्वत का, दे—७७,००,०० मंदिर ।

मलयागिर चन्दन शुभ पावन, केशर में घसि लाऊं ।
सुरभिततासो[१] अलिगण[२] गुंजत, जिनपद को चरचाऊ ।
अधोलोक०, सप्तकोटि० ॥२॥ चन्दनं० ॥

मुक्ताफल[३] वा चन्दकिरण सम, अक्षत पुञ्ज धरी कै ।
श्री जिनवरके चरणन आगे, अक्षय सुक्ख सुमरि कै ॥
अधोलोक०, सप्तकोटि० ॥३॥ अक्षत० ॥

जुही चमेली फूल सुवासो[४], सौरभितैं अलि गुंजैं ।
कामबाण के नासन कारण, श्रीजिन चरणन पूंजैं ॥
अधोलोक०, सप्तकोटि० ॥४॥ पुष्प० ॥

फेणी घेबर बाबर लाडू, षट्रस जुत अति ताजे ।
विंजन विविध प्रकार सु लेकै, पूजि क्षुधा दुख भागे ॥
अधोलोक०, सप्तकोटि० ॥५॥ नैवेद्यं ॥

रतनदीप अथवा कपूरकी, वाली स्वर्ण रकाबी ।
ले जिन चरण पूज घट तमको,[५] तुरतहि देत नसावी[६] ॥
अधोलोक०, सप्तकोटि० ॥६॥ दीपं० ॥

कृष्णागर करपूर सु चन्दन, धूप सुगंधि बनाऊं ।
अग्निमाहि जिन आगे महके, आठौं कर्म नसाऊं ॥
अधोलोक०, सप्तकोटि० ।७। धूपं० ॥

---

१ सुगंधिसे, २ भ्रमरोंका समूह. ३ मोती. ४ सुगंधित ५ गाढ़ांधकार को. ६ नष्ट करदेता है ।

फल अति मिष्ट सुरसकरि पूरे, अति सुगंधु सुंदारे ।
उत्तम प्राशुक ले जिन पूजौं, शिव फल तुरत सम्हारे ॥
अधोलोक०, सप्तकोटि० ॥८॥ फलं० ॥८॥

जल चंदन अक्षत प्रसून चरु, दीप धूप फल लेकै ।
अर्घ बनाई देइ जिन चरण, नाच गाय बल लेकै ॥
अधोलोक०, सप्तकोटि० ॥९॥ अर्घम् ॥६॥

कवित्त–

असुर भवनवासी देवनके, इन्द्र चमर वेरोचन दोइ ।
विभव सुराजत रतनमई अति, तिनमें श्रीजिन मन्दिर होई ॥
तिनकी सख्या चौंसठ लाख है, महादीप्निकरि राजत सोइ ।
बिब उनहत्तरि कोड जु तिनमे, द्वादश लक्ष अधिक शुभ जोई ॥

ॐ ह्रीं भवनवासी देवनि में, असुरकुमारनिके चौसठ लक्ष-जिन—मन्दिर स्थित उनहत्तरि कोडि बारह लक्ष जिनबिंबेभ्यो अर्घं० ॥

नागकुमार भवनवासी सुर, भूतानंद धरनी धर सार ।
सामानिक आदिक दस विधि हैं, मन्दिर रतननके मनुहार ॥
लक्ष चौरासी जिनग्रह माही, प्रतिमा रतनमई अविकार ।
पूज अष्ट द्रव्य ले उत्तम मांगू मैं तुम सेवा सार ॥२॥

ॐ ह्रीं नागरकुमार देवनिके मन्दिर में चौरासी लक्ष जिनग्रहनि में कोड़ि बहत्तरि लक्ष जिनबिंबेभ्यो अर्घं० ॥

सुवर्णकुमार देव देवनिपति, वेणुवेणुधर कहे सुमरीस ।
पंच कल्याणक समया साधै, सुनि मुख धर्म गहै नय सीस ॥
देवलोक अद्भुत अनुपम सुख, भोगें जिन सेवैं सुर ईस ।
तिनके मन्दिर में जिन मन्दिर, अष्ट द्रव्य पूजौ हरषीस ॥३॥

दोहा –

लक्ष बहत्तरि भवनमें, तेते ही जिनगेह ।
कोड़ि सतहत्तरि लक्ष गिन, छिहत्तरिं बिंबेह ॥४॥

ॐ ह्रीं सुपर्णकुमार भवनवासी देवनि के मन्दिरनिमें बहत्तरि लक्ष जिन मन्दिर तिनमें सतहत्तरि कोडि छिहंतरि लक्ष बिंबेभ्यो अर्घं० ॥

कवित्त–

दीपकुमार भवनवासी सुर, अधोलोक में जिनका वास ।
लक्ष छिहंतरि जिन मंदिर हैं: प्रतिमा कोडि बयासी जास ।
अष्ट लक्ष अधिकी रतननिमय, वीतराग छवि अती हुलास ।
सुमरण करिं पूजौ वसुविधि सौं, मोक्षनगर की धरि कै आस ॥४॥

ॐ ह्रीं दीपकुमार भवनवासी देवनिके घर विषें छिहंतरि लक्ष जिन-मन्दिर में बियासीकोडि अष्ट लक्ष जिनबिंबेभ्यो अर्घं० ॥

उदधिकुमार भवनवासी सुर, मन्दिर अति रमनीक सुजान ।
मुकुट आदि भूषण करि भूषित, प्रीतवंत अति चतुर बखान ॥
लक्ष छिहंतरि हैं जिन मंदिर, प्रतिमा संख्य सुनौ भवि कान ।
कोडि बयासी लक्ष अष्ट हैं, पूजौं मन वच तन हितवान ॥

दोहा–

इन्द्र जुगल[1] इनमे कहे, जलप्रभ अर जलकांत ।
तिन करि पूजित जिन भवन, मैं पूजौं हरषांत ॥५॥

ॐ ह्रीं उदधिकुमार देवनि के पूर्वोक्त जिनमन्दिरजिनबिंबेभ्यो । अर्घं० ॥

---

1. दो ।

कवित्त—

तडितकुमार भवन सुरवासी, पूरब विधिवत भेद सुजान।
तिनके मंदिर में जिन मंदिर, मंगल द्रव्य धरे उरमान ॥
पंचशतक[१] धनु[२] उन्नत[३] तन है दर्शन तैं दर्शन सिधि ठान।
रतनमई प्रतिमा पद्मासन, वीतरागता हिये सु आन ॥६॥

दोहा—

घोष घोषमय इन्द्र जुग[४], छिहंतरि लख गेह।
कोडि बयासी लक्ष अठ, जिन प्रतिमा बंदेह ॥६॥

ॐ ह्रीं विद्युतकुमार देवनिके मंदिरनमें जिनमंदिर स्थित जिनबिंबेभ्यो अर्घं ॥

कवित्त—

स्तनितकुमार भवनवासी सुर, सप्तम भेद कह्यौ भगवान।
तिन गृह में जिन गृह अति उत्तम, अतिशय जुत[५] जिनबिंब महान ॥
लक्ष छिहंतरि हैं अनादि[६] के, अस्सी कोडि लक्ष वसु जान।
जल चन्दन आदिक वसु विधि सौं, पूजौं अति हरषित उर आन ॥७॥

दोहा—

हरिषेण इन्द्र हरिकान्त पुनि, सुभग सु सुन्दर देह।
पूजैं नित प्रति जिन भवन, में पूजौं धरि नेह ॥ ७ ॥

ॐ ह्रीं स्तनितकुमार देवन के मंदिर स्थित जिनमंदिरेभ्यो अर्घं ॥

कवित्त—

दिगकुमार देवन में उत्तम, भवन अधो जिन गृह सोभंत।
मुक्ताफल रत्ननि की माला, लूंवत[७] है तमकौ सोपंत[८] ॥

---

१ पाँच सौ. २ धनुष. ३ ऊंचा. ४ दो. ५ सहित. ६ अकृत्रिम. ७ लटक रही है. ८ हटा देने वाली।

लक्ष छिहंतरि जिन मंदिर है, ब्यासी कोटि लक्ष वसु संत।
दर्शन स्वर्ग मोक्ष सुख कारण, पूजौं मन वच तन श्रीमंत ॥८॥
ॐ ह्रीं दिग्कुमार देवनि गृह स्थित जिनमंदिरेभ्यो अर्घं ॥
अगनिकुमार भवनवासी सुर, मुकुटनि की आहुत तैं सोइ।
केवलज्ञानी जिनवरस्वामी, तन तजि जाय मुक्ति जब जोइ ॥
तन संस्कार करे भस्मी को, मस्तक नैन हृदय में जोइ।
इन्द्रादिक सुर पूजैं ध्यावैं, उत्तम यातैं यह सुर गोइ[1] ॥९॥

दोहा—

लक्ष छिहंतरि जिन भवन, सुर मंदिर मधि[2] जान।
कोटि वियासी लक्ष वसु, जिन वर पूजों मान ॥ ९ ॥
ॐ ह्रीं अग्निकुमार देवनिके गृहनिमें श्रीजिनमंदिर स्थित जिनबिंवेभ्यो अर्घं ॥

कवित्त—

वातकुमार भवनवासो सुर, इन्द्र विलंब प्रभंजन जान।
हीरा पन्ना माणिक मूंगा, पद्मराग लीलाक रचान ॥
ऐसे मंदिर में निवसे सो, तिन मधि जिन मंदिर विंबान।
छिनवै लक्ष विंब कोडी शत, त्रय ऊपरि अडसठ लक्षान ॥१०॥
ॐ ह्रीं वातकुमार देवनि के गृहिन में छिनवै लक्ष जिन मंदिर में एक शतक तीन कोडि अडसठ लक्ष जिनबिंवेभ्यो अर्घं ॥

छन्द अडिल्ल—

चौसठि चौरासी वहत्तरि लक्ष हैं।
छिहतरि षट जागै छिनवै स्वच्छ हैं ॥
सब मिलि जिनवर मंदिर सप्त करोड हैं।
लक्ष बहत्तर उपरि जानौ जोड़ है ॥

---

१ गोत्र, जाति, पर्याय २ में ।

प्रतिमा संख्या भव्य सुनौ इक चित्त सौं ।
कोडि उनहत्तर द्वादश लख शुभ मित्त सौं ॥
नव्वे कोडि अरु लक्ष बहत्तरि लीजिये ।
कोडि सतहत्तरि लक्ष छिहंतरि कीजिये ॥
कोडि बियासी लक्ष अष्ट मन लाइये ।
छह जागे धरि और गणति इम गाइये ॥
इक शत त्रय शुभ कोटि जु और गनीजिये ।
अडसठि लक्ष मिलाइ सबै जु भनीजिये ॥

दोहा—

अष्ट शतक सेतीस कुल, लक्ष छिहंतरि जान ।
रतनमई प्रतिमा यजौं, अधोलोक थितिमान ॥

॥ इति पूर्णार्घं ॥

कवित्त—

दश विधि देव कहे धरणीगृह, जिन मंदिर तिनके सोभेइ ।
जिन प्रतिमा सुंदर रतननि मय, पंच शतक धनु की ऊंचेइ ॥
लक्षण चिह्न सुभग मूरति वर, वीतरागता रूप सुहेइ ।
मैं तिनकौ आठौं अंग नयकैं, पूजौं जल चंदन तैं थेइ ॥

ॐ ह्रीं अधोलोक स्थित जिनमंदिरेभ्यो अर्घं ॥

जयमाल (घत्ता)—

जय जय जिन स्वामी अंतरजामी त्रिभुवन नामी जगतपती ।
सुर नर खग ध्यावैं मुनि जस गावैं शीश नमावैं शुद्धमती ॥

दोहा—

अधोलोक सुरभेद दस, तिनके गृह में जान ।
सात कोडि लख बहत्तरी, जिन चैत्यालय आन ॥२॥

रत्नमई जिन बिंब हैं, अष्ट अधिक शत एक ।
चैत्यालय प्रति जानियो, जोडि बिंब तजि टेक ॥३॥

सोरठा—

अष्ट शतक तेतीस, कोटि छिहंतरि लक्ष हैं ।
पंच धनुष शत ईश, तुंग नमौं करि जोरिकैं ॥
जयवंते जिन होहु, दिव्यध्वनि मुख तैं खिरी ।
सरस्वती माता सोहु, मति द्यो जिनगुन गावना ॥५॥

कवित्त—

रत्नप्रभा पृथ्वी के भागत्रय खर अरु पंक भू बहुल कराइ ।
मोटाई सोलह चौरासी अस्सी जोजन क्रम तैं थाइ ॥
खर में सोलह पृथ्वी वरनी चित्रा आदिक भेद बताइ ।
खर अर पंक वन व्यंतर सुर तिनमैं जिनगृह वंदौं ताइ ॥६॥

सप्त कोडि फुनि लक्ष बहत्तरि भवनपती देवन के धाम ।
गृहप्रति मध्य सुगिर अति राजत शिखर विषै जिनगृह सोभाम ॥
सौ योजन विस्तीरण चौड़ा अर्ध पौन अति तुंग सुहाम ।
दरवाजे वसु जोजन चौड़े, तुंग सु सोलह द्युति अभिराम ॥७॥

आर्या—

तेवीसम जिन स्वामी, द्वीप जंबू भरत आर्यखंडेन ।
आगर ताज सु गंजे, जिन गृह में राजतैं सु वंदामी ॥८॥

रोडक छन्द—

असुर देवनपती चमर वैरोचनं ।
दिशा दक्षिण सु उत्तर भवन सोहनं ।

लक्ष चौसट्ठि जिनबिंब संख्यासुनं ।
कोटि उनहत्तरं लक्ष द्वादश भनं ॥
नाग देवेन्द्र जुग भूतनंद आदि ही ।
दूसरा जाति धरनीधरं जादिही ॥
भवन चतु असिय लखि बिंब अति सोहही ।
कोटि नव्वैह लाख बहत्तरि मोह ही ॥
देव सुपर्णपति वेणुवेणाधरं ।
भवन जुग सत्तरं लक्ष दखनोत्तरं ॥
कोटि सतहत्तरं लक्ष छिहत्तरं ।
रतनमय बिंब कर जोर मस्तक नयं ॥
दीप सुर भवनपति पूर्ण विशिष्ट जी ।
मन्दिरं लक्ष छिहंतरं जिनगृहं ॥
बिंब अति राजही रतनमय दुतिधरं ।
कोटि व्यासीय वसु लक्ष संख्या भनं ॥
उदधि देवेन्द्र जुग जलप्रभं जलकथं ।
कान्ति अति रूप शुभ सुन्दरं अतिवरं ॥
लक्ष छिहंतरं सुभग जिन मन्दिरं ।
बिंबकोटीय व्यासी वसु लक्षयं ॥
देव विद्युतकुमाराभ्रपति घोष ही ।
घोषमह भवनदक्षन्न वा उत्तरं ॥
लक्ष छिहंतर सुभग जिन मन्दिरं ।
बिंब कोटीय व्यासीय वसु लक्षयं ॥
भवनपति स्तनितमें नाम अब सुन भवं ।
प्रथम हरिपेण हरिकांत जगमें प्रियं ॥

लक्ष छिहंतरं सुभगजिन मन्दिरं ।
बिंब कोटीय व्यासीय वसु लक्षयं ॥
देव धरणीधरं दिक्कुमारानयं ।
अमितगति अमितवाहन सु जुग ईश्वरं ॥
लक्ष छिहंतरं सुभगजिन मन्दिरं ।
बिंब कोटीय व्यासीय वसु लक्षयं ॥
अग्नि देवनपती अग्निशिख वाहनं ।
भवन दक्षिणदिसं उत्तरं जाननं ॥
लक्ष छिहंतरं सुभग जिन मन्दिरं ।
बिंब कोटीग व्यासीय वसु लक्षयं ॥

— मालिनी–छन्द —

पवन[1] भवनवासी इन्द्र वेलंय प्रभंजनं ।
भवन षट् सुनिव्वै लक्ष श्री सुजिनं ॥
त्रिनिव्वै कोटं लक्ष वसु साठ गिन्हं ।
तिन प्रति कर जोरं भूमि नय मस्तकं च ॥

छन्द पद्धरी–

प्रतिमा मणि कंचनमय छाजै, अविनश्वर शुभ रूप विराजै ।
धनुष पाँचसै उन्नत[2] सोहै, अति मनोज्ञ[3] देखत मन मोहै ॥
निराभरण[4] तन तेज प्रकासै, अंबर[5] रहित मनोहर भासै ।
तेज कोटि इक सूरज माही, तातैं अधिक सुतेज लहाही ॥
लक्षण विंजन[6] सहित अनूपा, पद्मासन राजत जिन भूपा ।
पूर्णचन्द सम मुख विगसाई, सकल विकार रहित सुखदाई ॥

---

१. पवनकुमार. २. ऊँचा. ३. सुन्दर. ४. आभूषण रहित. ५. वस्त्र. ६. व्यंजन.

भामण्डल अति दिव्य विकासै, अंतर बाहिर तम छय नासै ।
विगसत पंकज[1] सम मुख जानौ, अरुणवरण[2] पद कमल प्रमानौ ॥
अंजन[3] वरण केशसम शोभै, पाटलवरन नैन[4] चित लोभै ।
विद्रुम[5] वरण अधर[6] मन मोहै, छत्र तीन सिर ऊपरि सोहै ॥
सिंहासन आरूढ दिपै है, भामण्डल तम तेज लसै है ।
इन्द्र अमर[7] पूजा विस्तारै, यक्ष देव चामर सिर ढारै ॥
निरुपम जगत नेत्र पियकारी, पुन्यतनी आकर[8] अघहारी ।
शोभा जुत मुखचन्द हसै है, अथवा मुखतै वचन लसै है ॥
त्रय जग सुरवर पूजन आवै, वदन करि बहुविधि[9] गुन गावै ।
दिव्यमूर्ति जिनप्रतिमा राजै, वंदन करत सवै अघ भाजै ॥
है विभूति अकृत्रिम ऐसी, वृष उपकरण कहौं कछु तैसी ।
तरु अशोक भाषे जिन ईशा, एक शतक अरु आठ गनीसा ॥
फूलनि वरखा[10] सुखकारी, अति सुगंध दशदिश[11] विस्तारी ।
अद्भुत शोभा जुत जिनराजा, दर्शन करत पाप सब लाजा ॥
बहुविधि वरनत विबुध प्रकारा, ग्रन्थनि में भाषो जिनराजा ।
हम मतिमंद पार किम[12] पावैं, चरननि कौ निज शीश नमावैं ॥
अनुमोदन[13] करि हर्ष धरै हैं, बारबार तुम सेव चहै हैं ।
करुणासागर अरज हमारी, तार तार भवदधितैं सारी ॥

---

१. कमल. २. लाल. ३ श्याम, काले. ४. नयन. ५. विद्रुम मणि जैसा. ६ ओष्ठ. ७. देव ८ खान. ९. प्रकार. १०. वर्षा. ११. चार दिशा-चार विदिशा—एक ऊर्द्ध-एक अधः मिलाकर दश दिशा हैं. १२. कैसे. १३. सराहना.

दोहा—

अधोलोक के जिन भवन, जिनकी पूजा सार ।
अष्ट अङ्ग नय भूमि तक, मांगू शिव सुख भार ॥

(महार्घं)

कवित्त—

अधोलोक जिन भवन अकीर्तम[१] सप्त कोडि बहत्तरि लाख ।
प्रतिमा रतनमई तहां राजै अष्ट शतक तेतीस जु साख ॥
कोटि कहे मुनि लक्ष छिहंतर पूजा पढ हित मंगल राख ।
सो प्राणी नर सुर सुख भुगतैं अंत लहै शिव कौ क्रम नाख ॥

(इत्याशीर्वादः)

॥ इति पूजा समाप्त ॥

卐

अथ व्यन्तरलोक जिन चैत्यालय पूजन

दोहा—

परम[२] जोति परमातमा, परम इष्ट परधान ।
सिद्ध सुबुद्ध प्रबुद्ध जिन, नमौं जोरि जुगपान[३] ॥
नेमिचन्द्र[४] आचार्यके, गुण सुमरनि[५] कर सार ।
तीन लोक के कथनकौ, कीनौ जिन विस्तार ॥
ताही क्रमको देखिकै, स्वल्प बुद्धि अनुसार ।
विंतर[६] सुरगृह जिनभवन, पूज रचौं सुखकार ॥

१. अकृत्रिम. २. उत्कृष्ट ज्योतिमय. ३. दोनों हाथ. ४. त्रिलोक-सार के कर्त्ता. ५. स्मरण ६. व्यन्तरदेवगृहस्थित

अष्टजाति०, असंख्य० ॥ फलं० ॥८॥

दोहा—

जल चन्दन अक्षत सुमन,[१] चरुवर[२] दीप सुधूप ।
फल बसु द्रव्य संजोइकै, पूजौं जिनवर[३] भूप ॥
अर्घं० ॥

कवित्त—

तीन[४] शतक जोजनके[५] वर्गकौ जगत प्रतरकौ दीजे भाग ।
क्षेत्र प्रमाण होय ताकेकौ संख्य भागवैं मनमें लाग ॥
व्यन्तर देवनिके गृहमाही जिनगृहमें जिनबिंब सुहाग ।
तिनकौ मैं मन वच तन पूजौं दर्शनका राखौं अनुराग ॥
व्यन्तरदेव अष्ट[६]विधि वरने किन्नर वा किंपुरुष महान ।
त्रितिय[७] महोरग गंध्रव जानौ यक्ष रु राक्षस भूत सुजान ॥
अन्त पिशाच जानि अति उत्तम ग्रहमें जिनगृह बिंब महान ।
तिनकी पूजा करि बसु विधिसौं आस धार शिव की हरषान ॥

ॐ ह्रीं अष्टप्रकार व्यंतरसुरतिनग्रहविषैं जिनगृह रतनमई जिन-बिंब श्रीजिनेन्द्रेभ्यो अर्घं० ॥

सवैया (३१)

किन्नर प्रियंगु[८] तन श्वेत[९] किंपुरुप जानौ,
महोरग श्याम[१०]रूप सुवर्ण[११] गंधर्व है ॥

---

१ पुष्प. २ सुन्दर नैवेद्य. ३ जिनराज. ४ तीनसौ. ५ योजन बड़ा २००० कोस. ६ आठ प्रकारके. ७ तृतीय. ८ प्रियंगु पुष्प जैसा शरीर. ९ सफेद. १० काला. ११ सोने जैसा ।

यक्ष और राक्षस भूत तीन श्यामवर्ण,
पिशाच जु कृष्णवर्ण देहरंग चरवहै ॥
अगरजा इत्यादि लेय कुंडल केयूर[१] कुंड,
कड़े हार बाजूबंध मुद्रि[२] आदि दरव है।
जिनगृह जिनबिंब राजत त्रैलोक्य पूज्य,
पूजत सुरेश[३] पूज हम वसु दरव है॥
ॐ ह्रीं व्यंतरजाति देहरंग जिनस्थित श्रीजिनेन्द्रेभ्यो अर्घं० ॥

— गीता–छन्द —

किन्नर अशोक[४] जु वृक्ष सोहै किंपुरुष चंपा सही।
नागकेसरि सुर महोरग तुंबडी गंधर्व ही ॥
यक्ष वड़ राक्षस सकंटक भूत तुलसी वृक्ष ही।
तरू कदंब पिशाच वसुविधि पूजि जिनगृह स्वच्छ ही ॥

ॐ ह्रीं किन्नरादि वसुजाति व्यन्तरदेवनके भवन अवास भवनपुरनिमें क्रमतें अशोक चम्पा नागकेसरि तुंबडी वड़ कंटक तुलसी कदंब चैत्यवृक्ष जिनबिम्बशोभित श्रीजिनेन्द्रेभ्यो अर्घं० ॥

अडिल्ल–छन्द

जिन चैत्यनिके मूल[ ] वपैं जिनबिंब है।
चारथौं दिशमें चव[५] चव पंकति[६] बंध हैं ॥
पल्यंकासन[७] धरैं वीतरागी छवी।
पूजौं सोलह एक वृक्ष च्यारौं दिवी[८] ॥

ॐ ह्रीं जिनचैत्यवृक्षनिके मूलभागमें चारों दिशि चार चार जिनप्रतिमा सब सोलह हुईं तिन्हैं अर्घेण अर्चयामि ॥

---

१ मुकुट. २ अंगूठी ३ इन्द्र. ४ अशोक चम्पा आदि ये चैत्यवृक्षों के नाम हैं जोकि ८ प्रकारके किन्नरादि व्यन्तरोंके क्रमशः जानना ५ चार चार, ६ पंक्तिबद्ध ७ पद्मासन. ८ दिशा।

गीता–छन्द

अधोलोक विषैं सुजानों भवन वितर सुरनिके ।
द्रह[1] वृक्ष पर्वत धरनि ऊपर वर[2] अवास[3] जु मणनि के ॥
वर दीप मधि शुभ भवन पुर[4] हैं तिन विषै जिन भवन हैं ।
जिन बिंब रतनमई विराजैं नमौं भवि[5] जिय सरन हैं ॥

अडिल्ल–

वितर गृह जिन भवन रतन मई बिंब हैं ।
प्रातिहार्य[6] शोभा युत सुरपति निंबहैं[7] ॥
असंख्यात मित[8] दर्शनतैं दर्शन सही ।
हिये हरष मैं आन थापना थापही ॥

ॐ ह्रीं अष्ट प्रकार व्यन्तर देवनिके भवन–आवास–पुर विषैं असंख्यात जिनबिंब श्री जिनेन्द्र ! अत्र अवतर, अवतर संवौषट् (आह्वाननं), अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः (स्थापनं), अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् (सन्निधिकरणं)

अथाष्टकं (नाराच छन्द)

स्वच्छ मिष्ट इष्ट[9] शीत तृषाको[10] निवार है ।
स्वर्णकुंभ[11] नीर ले जिनेन्द्र चर्न धार है ॥
अष्ट जाति[12] वितरेन्द्र भवनपुर अवास हैं ।
असंख्य जैन गेह जैन बिंब पूजतास हैं ॥

ॐ ह्रीं व्यन्तरलोकस्थित जिनचैत्यालय जिनेन्द्रेभ्यो जलं० ॥१॥

---

१ सरोवर. २ सुन्दर. ३ रहने के स्थान ४ नगर. ५ भव्यजीव. ६ जिनके द्वारा भगवानकी शोभा अधिक हो, ऐसे ८ प्रातिहार्य. ७ नमते हैं. ८ बार. ९ रुचिकर. १० प्यास–गर्मी. ११ सोने के घड़े में. १२ प्रकार.

मलयगिर सु चन्दनादि गंध द्रव्य लेय ही ।
जिनेन्द्र चर्न चरचि[१] भवाताप रोग हेय[२] ही ॥
चदनं० ॥२॥
अष्ट जाति० असंख्य०,
सरद इन्दु[३] किरण जेम[४] अक्षतौघ[५] सार है ।
जिनेन्द्र अग्र पुंज धार अखय[६] सुखकार है ॥
अक्षतं० ॥३॥
अष्ट जाति०, असंख्य०,
सुगन्ध वर्ण पुष्प नेक[७] भांति लेइ आवही ।
काम वाण नास काज लुब्ध[८] भ्रंग ध्यावही ॥
अष्टजाति वितरेन्द्र भवनपुर अवास हैं ।
असंख्य जैन गेह जैन बिब पूजतास हैं ॥ पुष्पं० ॥४॥
चारु[९] मनोज्ञ[१०] उत्तमेन घृत्त मिष्ट सौं सनैं ।
जिनेन्द्र पूजि छुध्यारोग[११] आदि विघ्नकौ हनैं ॥
नैवेद्यं० ॥५॥
अष्टजाति०, असंख्य०,
दीप जोति रतन विस्तरै सुमंदिरादि ही ।
जिनेन्द्र पूजतै मिथ्यात तिमिर[१२]कौ हटादिही ॥
दीपं० ॥६॥
अष्टजाति०, असंख्य० ॥
अगर संग अग्निकौं जराइ धूम जाइये ।
जिनसु पूजि कर्मकाष्ठ मूलतैं नसाइये ॥
धूपं० ॥७॥
अष्टजाति०, असंख्य० ॥
फल सुवर्ण[१३] मिष्ट[१४] गंध पक्व[१५] रस जु सार ही ।
जिनसु पूजि मोक्ष फल लीजिये सुचार[१६] ही ॥

१ पूजकर. २ छूट जाता है. ३ चन्द्र. ४ सदृश. ५ समूह. ६ अक्षय. ७ अनेक. ८ रसिक भ्रमर. ९ सुन्दर. १० मनको प्रिय. ११ क्षुधारोग. १२ अंधकार. १३ अच्छे रंगवाले. १४ सुगन्धित. १५ पके. १६ सुन्दर ।

अडिल्ल

भुजग भुजंगमाली महकाय अतिकाय जी ।
स्कधमाली मनोहर अशनजव लाय जी ॥
महैश्वर्य गंभीर प्रियदर्शी कही ।
ऐसे दशपरकार[१] जजैं[२] जिनवर मही ॥
इन्द्र जुगल[३] महकाय और अतिकाय जी ।
महोरग व्यन्तर जाति भेद दश काय जी ॥
भोगा भोगवती जुग[४] देवी प्रथम की ।
पुष्पगंध अनिंदता वल्लभ[५] द्वितियको ॥

ॐ ह्रीं महोरग व्यन्तर देवनिमें दशप्रकारके तिनमें महाकाय अतिकाय जुग इन्द्र भोगा भोगवती पुष्पगंधा अनिंदिता जुग जुग देवी सहित जिनगृहस्थित जिनबिंबेभ्यो अर्घं० ॥

दशविधि गंधर्व देव भेद अब जानिये ।
हाहा हूहू तूंबर नारद मानिये ॥
कदंब वासव महास्वर गीतरति सोहिये ।
गीतयश देवता जिन पूजत मोहिये ॥

सवैया–(३१)

गीतरति इन्द्र जाके वल्लभा जुगल कही,
सरस्वती स्वरसेना पट्टदेवी[६] जानिये ।
गीतयश द्वितिय इन्द्र ताके भी जुगलदेवी,
नंदनी प्रथम प्रियदर्शनी बखानिये ॥

१ प्रकार. २ पूजैं. ३ दो. ४ दो. ५ स्त्री (वल्लभा). ६ मुख्य इन्द्राणी ।

तिनग्रह कूटनिमें जिनगृह[1] अति सोहै,
बिंब[2] रतननिमय द्युति[3] असमानिये[4] ।
तिनको भगति[5] लाइ आठौं दर्वकौं[6] मिलाइ,
पूजौं वसुविधिसौं[7] जु जोरि जुगपानिये[8] ॥

ॐ ह्रीं गंधर्व व्यन्तरदेवनिमे गीतरति गीतयश जुग इन्द्र तिनके स्वरसेना सरस्वती व नंदिनी प्रियदर्शनी जुग जुग वल्लभा सहित जिनपूज्य श्री जिनेन्द्रेभ्यो अर्घं० ॥

दोहा—

भेद पांच वैभौमि सुर, यक्ष जु बारह भेव[9] ।
इन्द्र जुगल प्रति देवि जुग, करें जिनेश्वर सेव ॥

सवैया (३१)

मणिभद्र, पूर्णभद्र शैलभद्र मनोभद्र,
भद्रक सुभद्र और सर्वभद्र जानिये ।
मानुष वाघन प्रालस्वरूप यक्ष,
यक्षोत्तम मनोहर द्वादशमा भेद जिन वखानिये ॥
माणिभद्र इन्द्रके जुगल देवी वरनई,
कुंदावहु पुत्रावर सुन्दर सुहानिये ।
पूर्णभद्र इन्द्रके भी जुग ही मनोज्ञ लही,
तारा और उत्तमा सुजिन पूजि ठानिये ॥

ॐ ह्रीं यक्षव्यन्तरदेवनिके मणिभद्र पूर्णभद्र इन्द्रके कुंदावहुपुत्रा अरु दूसरेके तारा उत्तमा वल्लभासहित जिनपूज्यश्रीजिनेन्द्रेभ्यो अर्घं० ॥

---

१ जिनमन्दिर. २ प्रतिमाये. ३ द्युति (क्रांति-प्रभा). ४ असमान, अप्रमाण, बेतोल. ५ भक्ति. ६ द्रव्य. ७ अष्टप्रकारसे. ८ हाथ. ९ भेद ।

एक शतक अठाइस[१] वसु वृक्षनतनो[२] ।
प्रतिमा तोरण द्वारनि कर सुवरन मनी ॥
चैत्यवृक्षका वरन जम्बु तरुवत[३] सही ।
अर्द्ध जानि आयाम[४] व्यास पूजौं वही ॥

ॐ ह्रीं अष्टचैत्य वृक्षनिके एकशतक अट्ठाइस जिनबिंबेभ्यो अर्घं० ॥

इक इक जिन बिंब आगे मानस्तंभ ही ।
तीनि पीठि पर शोभित शालत्रय[५] युत लही ॥
मोती माला घंटा किंकिनमाल ही ।
बहु शोभायुत पूजौं तजि जग जाल ही ॥

ॐ ह्रीं श्रीजिनप्रतिबिंत प्रति प्रति एक एक मानस्तंभ, तीन पीठ उपरि तीन कोटयुत तोरण पर पंच पंच जिनप्रतिमा मंडित, अनेक रचना कर भूषित श्रीजिनेन्द्रेभ्यो अर्घं० ॥

कवित्त–

अष्टजाति व्यंतरदेवनिकी चार जाति दश दश परकार ।
यक्षदेव द्वादशविधि[६] वरने राक्षस भूत सात[७] सातार ॥
चवदह[८] भेद पिशाच कहै तिन बंदौं पूजौं जिन आगार[९] ।
कुलनि अष्टमे असी[१०] भेद भनि नेमि पंच स्वामी जी सार ॥

ॐ ह्रीं अष्टप्रकार व्यन्तरदेवनिविषै अवान्तर अस्सीभेदयुत इन्द्र-देवपूजित श्रीजिनेन्द्रेभ्यो अर्घं० ।

छन्द–चौपाई (१५ मात्रा)

भेद प्रथम किंपुरुष सुजान, किन्नर हृदयंगम करुपान ।

---

१ एकसो अठाइस २ आठौ वृक्षोंकी, ३ जम्बूवृक्षके समान, ४ विस्तार, ५ तीन कोट, ६ बारह भेद, ७ सात सात, ८ चौदह, ९ मन्दिर, १० अस्सी ।

पाली किन्नर किन्नर सोइ, आनिंदित सु मनोहर होइ ॥
किन्नरोत्तम रत्तप्रिय जेष्ट, दशविधि मंदिर जिनपरमेष्ट ।
प्रथम भेद वरनन इह कियो, आगे और कथन सुनि हियौ ॥

अडिल्ल

किन्नर अरु किंपुरुष जुगल[1] सुरपत्ति[2] कहे ।
जुग जुग[3] देवी कही तिन्हौंके सुख लहे ॥
अवतंसा अरु केतुमती प्रथम लही ।
रतिषेणा रतिप्रिया देवि दूजी गही ॥

ॐ ह्रीं व्यन्तरदेवनि में प्रथम किन्नर जातिमें दशप्रकार किंपुरुष किन्नर हृदयंगम करुप पाली किन्नरकिन्नर अनिंदित मनोरम किन्नरोत्तम रतप्रिय जेष्ठ तिनमैं किन्नर किंपुरुष जुग इन्द्र तिनके अवतंसा केतुमती पुनि रतिषेणा रतिप्रिया क्रमतें वल्लभा सहित श्री जिनबिंब पूजित श्रीजिनेन्द्रेभ्यो अर्घं० ॥

चौपाई (१५ मात्रा)

पुरुष और पुरुषोत्तम जान, सत्यपुरुष महापुरुष प्रधःन ।
पुरुषप्रभ अतिपुरुष मरून, मरुदेव मरुप्रभ यजस्वान ॥
पुरुष और पुरुपोत्तम इन्द्र, रोहण नवमी देवी मिंद्र ।
पुरुषोत्तमके जुग वरनई, ह्रो अरु पुष्पवती सुखमई ॥

ॐ ह्रीं किंपुरुषजाति व्यन्तरनिमें पुरुष पुरुषोत्तम सत्पुरुप महापुरुष पुरुषप्रभ अनिपुरुष मरुत् मरुदेव मरुत्प्रभ यशस्वान् दशजाति विषैं पुरुष पुरुषोत्तम जुग इन्द्रकैं रोहण--नवमी जुग वल्लभा पहिलै ह्री--पुष्पवती दूसरे इन्द्रके तिन सहित पूजनजिनगृहस्थितजिनबिम्बेभ्यो अर्घं० ॥

---

१ दो २ इन्द्र ३ दो दो ।

दोहरा—

भीम भीममह भेद है, विघ्नविनाशक देव ।
उदयक राक्षस जुगल बहु, ब्रह्म राक्षस जिन सेव ॥
सप्तभेद राक्षस तने, भीम भीममह इन्द[1] ।
जुग जुग देवी जासके, नाम कहूँ सुनि मिंद ॥
पद्मा वसुमित्रा प्रथम रत्नाढ्या कनकान[2] ।
सब जिन पूजैं भक्तितैं, हम पूजैं इह थान ॥

ॐ ह्रीं राक्षसव्यन्तरदेवनिके भीम महाभीम जुग इन्द्र सप्तभेद अवान्तर पद्मा वसुमित्रा रत्नाढ्या कनकाभा जुग जुग वल्लभा सहित श्री जिनेन्द्रपूजित श्री जिनेन्द्रेभ्यो अर्घं ॥

अडिल्ल

भेद व्यन्तर सप्तम सप्तम भेद है ।
भूत जाति शुभ नाम जु भरम उछेद है ॥
स्वरूप एक प्रतिरूप भूतोत्तम जानिये ।
प्रतिभूत महाभूत प्रतिछन मानिये ॥

दोहा—

इन्द्र जुगल स्वरूप है, प्रतिरूपक जू नाम ।
रूपवती बहुरूपका, सुसीमा स्वमुखा नाम ॥

ॐ ह्रीं व्यन्तरदेवनिमें सातप्रकार भूत तिनमें स्वरूप प्रतिरूप जुगल इन्द्र रूपवती बहुरूपा अरु सुसीमा स्वमुखावल्लभासहितजिन-ग्रहपूजित श्रीजिनेन्द्रेभ्यो अर्घं ॥

---

१ इन्द्र. २ कनकाभा ।

सवैया ३१

पिशाचनिके इन्द्र जुग भीम महाभीम कहे,
भेद दश—चारि[1] जिनदेवजी वखानिये ।
कूष्मांड रक्ष यक्ष सम्मोह तारक अशुचिकाल,
महाकाल शुचि सतालिक जानिये ॥
देह महादेह अर कूष्मांड प्रवचन भेद,
इस भांति अन्त चौदवा प्रमानिये ।
कमला कनकप्रभो उत्पला सुदर्शना,
इन्द्र जू के देवी जिन पूज गुण गाइये ॥

ॐ ह्रीं पिशाच व्यन्तरनिमे इन्द्र जुग देवी कमला कनकप्रभा उत्पला सुदर्शना सहित जिनपूजित श्रीजिनेन्द्रेभ्यो अर्घं० ॥

गीता छन्द—

किंपुरुष किन्नर सत्पुरुप महपुरुषवर महकाय जी ।
अतिकाय गीतरस गीतयश पुनि माणिभद्रयसाय जी ॥
पूर्णभद्र जु भीमजी महाभीम स्वरूप प्रतिरूप जी ।
काल और महाकाल सोलह इन्द्र ग्रज[2] जिन[3] भूपती ॥

ॐ ह्रीं व्यन्तरदेव अष्टप्रकार किन्नर जातिमें किन्नर किंपुरुष जुग इन्द्र किंपुरुषजातिमें सत्पुरुष महोरगजातिमें महाकाय अतिकाय गंधर्व जातिमें गीतरति गीतयश यक्षनिमें माणिभद्र पूर्णभद्र राक्षसजाति में भीम महाभीम भूतव्यन्तरनिमें स्वरूप प्रतिरूप पिशाच व्यन्तरनिविषैं काल महाकाल इन सोलह इन्द्रनि करि पूजित श्रीजिनेन्द्रेभ्यो अर्घं० ॥

---

१ चौदह २ पूजित ३ जिनेश्वर ।

दोहा—

भौमि इन्द्र वसु दुगुण है, इक इक गणिका जान ।
महत्तरि इक इक कही, नेमिचन्द्र गुरु आन ॥

सवैया ३१

किंपुरुष इन्द्र सम्बन्धी गणिका महत्तरि,
इक इक नाम अनुक्रमतै बखानिये ।
मधुरा मधुरालाप स्वस्वरा मृदुभाषण,
ऐसे सोलह इन्द्र के मुखदेवी आनिये ॥
पुरुषप्रिया प्रियकांता सौम्या अर सुदर्शनीया,
भोगा भोगवती भुयंगा भुयंगानिये ।
सुघोषा और विमला स्वसुरा अनिद्ता,
भद्रा औ सुभद्रा आदि देवी शुभ जानिये ॥

अडिल्ल—

मालनि वा पद्ममालिनि देवी सांवरी ।
सर्वसेना पुनि रुद्रा रुद्र सनावरी ॥
भूतकांता अरु भूत भूतदभा लही ।
महाभुजा अर अवुकराला गुरु कही ॥
स्वरसा जानि सुदर्शना ऐसे देवि हैं ।
षोडश इन्द्र महत्तरि गणिका सेवि हैं ॥
वल्लभानिजुत गणिका महत्तरि सही ।
पूजै सुरपति जिनग्रह हम ह्यां थुति चही ॥

ॐ ह्रीं षोडश इन्द्रके एक एक इन्द्रसम्बंधी एक एक गणिका महत्तरिजुत श्रीजिनालयपूजितश्रीजिनेन्द्रेभ्यो अर्घं० ॥

गीता छन्द—

इन्द्रपति प्रत्येन्द्र इक है समाजिक चव सहस है ।
आत्मरक्षक बसु दुगुणवर सहज जानो सुयश हैं ॥
सभात्रय सुर बसु सहसद्वय अधिक सब त्रय सहस हैं ।
अब फौज के सुर गणन कथनी कहौ जिनको अयस हैं ॥

जोगीरासा—

हाथी घोटक पाइक रथवर वृषभ नर्तकी गावन ।
इक इकमें है भेद सात सत धारि हृदय जिन पावन ॥
एक भेदमें कछ सात हैं पहलेमें सुर संख्या ।
अट्ठाईस सहस तुम आगे द्विगुण द्विगुण अतलंख्या ॥
सबको जोड़ धरौ मनमाही सुरगज सातों भेवा ।
पेंतिस लक्ष सहस छप्पन मिति सातौंको मिलि लेवा ॥
दोयकोटि अर लख अड़तालिस बावन सहित बखाना ।
सात अनीक देव इह जानो जिन पूजो सुखथाना ॥

दोहा—

चतुरनिकाई सुरनिमें, तीन भेद भवि जान ।
प्रकीर्णक अभियोग्य सुर, किल्विष गिनतन मान ॥

ॐ ह्रीं अष्टप्रकार व्यन्तरदेवनिमे एक इन्द्र एक प्रत्येंद्र चार हजार सामानिक सोलह हजार अंगरक्षक तीन हजार सभादेव दोय कोडि छप्पन लक्ष बावन हजार सातो अनोकसुर दोय वल्लभा गणिका महत्तरि इक इक प्रकीर्णक अभियोग्य किल्विषि असंख्यात सब इन्द्रनिके समान विभव संयुक्त जिनग्रह पूजित श्रीजिनेन्द्रेभ्यो अर्घं० ॥

अडिल्ल —

विंतर इन्द्रनिके जु नगर जिन दीपमें ।
जानि अंजनक वज्रघात जिम सीपमे ॥
तृतिय सुवर्ण मनसिलक वज्रफन रजत है ।
हिंगुल अर हरताल दीप बसु सजत है ॥
दक्षिण उत्तरमे है इक सुरपति नगर ।
पांच पांच मन मोहै लख जोजन सु वर ॥
जम्बूद्वीप प्रमान महा रमनीक है ।
जिनग्रह तिनमें पूजत हों ह्यां ठीक है ॥

ॐ ह्रीं अष्टजाति व्यन्तरदेवनिकी तिनमें एक एक जातिमें दोइ इन्द्र तिनके अष्टद्वीपनिमें लक्ष जोजनप्रमान नगर है दक्षिण उत्तरमें पांच पांच अनुक्रमतें तिनमे जिनग्रह श्रीजिनेन्द्रेभ्यो अर्घं० ॥

अडिल्ल—

नगर कोट ऊंचा है अर्द्ध सैंतोस जी ।
चौड़ा भूमि मझार वारै[1] अध ईस जो ॥
मुखमे चौड़ा अर्ध सु जोजन जानिये ।
कोट द्वार ऊचा अर्ध[2] बासठि मानिये ॥
चौड़ा द्वार सवा इकतिस जोजन कहा ।
ता ऊपरि प्रासाद[3] पौन[4] सत तुग[5] लहा ॥
ता आभ्यन्तर सभा सुधर्मा नाम जू ।
लम्बा चौड़ा ऊचा धरत ललाम[6] जू ॥

---

१ साढे वारह योजन भूमि मे चौडा २ साढे वासठ योजन ऊचा कोट द्वार. ३ महल ४ पिचहत्तर ५ ऊचा. ६ सुन्दर ।

द्वादशार्द्ध[1] ता अर्द्ध[2] बहुरि नवकी[3] कही ।
कोस एक जहमें सु वज्रमय दिठ मही ॥
सभा द्वार तुंग दो जोजन चौड़ाय है ।
जोजन एक प्रमाण भव्य जिन गाय है ॥
दक्षिण उत्तर इन्द्रनि सबके सम सही ।
नगर बाह्य उद्यान[4] सरम[5] कथनी चही ॥
जिनमन्दिर जिनबिंब रतनमय सोहही ।
सुर सुरपति तिय[6] पूजत पूजित मोह ही ॥

ॐ ह्रीं अष्टद्वीपनिमें दक्षिण उत्तरमें एक एक इन्द्र सम्बन्धी पांच पांच जम्बूद्वीपवत् सो सोलह इन्द्रनिके अस्सी नगर हैं, सो नगरकोट साढ़े सैंतीस योजन ऊंचा है, साढ़े बारह योजन भूमिमें चौड़ा, मुखमें अठाईस योजन चोड़ा है. कोटद्वार साढे बासठि योजन ऊंचा, चौड़ा सवाइकतीस योजन, ता ऊपरि मंदिर पिचहत्तरि योजन तुंग ता भीतरि सुधर्मानामा सभा-बारै अर्द्ध योजनकी लम्बी, सवा छह योजनकी चोड़ी, नव योजनका ऊंची कोस एककी जड़, सभाद्वार दो योजनका ऊंचा, नगर बाह्य दो योजन चलके उद्यान, च्यारों तरफ लक्ष जोजन प्रमाण उपवन रमणीक महाशोभासहित श्रीजिनेन्द्रेभ्यो अर्घ० ॥

गीता-छन्द

नगर बारै सहसजुग जावन सवन दिस जानिये ।
लक्ष जोजन है लम्बाई, अर्द्ध व्यास[7] प्रमाणिये ॥
रमणीक सास जु देव देवी करत क्रीड़ा रस भरे ।
जिनराज चरन सदा सुपूजैं हम जजत ह्यां[8] सुख भरे ॥

---

१ साढे बारह योजन २ सवा छह योजन ३ नौ योजन की ऊंची
४ बगीचा ५ सुन्दर, ६ स्त्री (देवांगना-इन्द्राणी). ७ चौड़ाई ८ यहा ।

ॐ ह्रीं अनेक शोभासहित नगरमध्यजिनालयेभ्यो अर्घं० ॥

सुरपतिनि सम्बन्धी जु गणिका वा महत्तरि जानिये।
तिन नगर दोऊ पास जिनके असी चव[1] परमानिये ॥
विस्तार व्यास जु सम बखानों जोजनं सम आनिये।
शेष व्यन्तर द्रहनि[2] पर्वत द्वीपमें परमानिये ॥

ॐ ह्रीं इन्द्रनि सम्बन्धी गणिकामहत्तरि देवीनिके मन्दिर दोऊ पार्श्व चौरासी जोजन लम्बे चौड़े जिनालय सहित श्रीजिनेन्द्रेभ्यो अर्घं० ॥

त्रोटक छन्द—

भूतन[3] राक्षसके भवन कथं, चवदह सोलह मिति सहस अथं।
खर भाग विषे सो भूत नतं, पंकभाग जु राक्षस देव नितं ॥
व्यन्तर बाकी वा धरन परं, स्थानक जिनवर में पूज्य नरं।
द्वादशविधि विबुध प्रकार कहे, सुनि नाम भेद अब प्रथम चहे ॥
श्री नेमिचन्द्र गुरु कथन कियो, हम स्वल्प बुद्धि वसि जोग लियो।

सवैया—३१

चित्रा पृथ्वी वा ऊपरि एक हस्त नीचोपपाद,
दश हजार तुंग पै जु दिव्यवासी जानिये।
तैसे दश हजार तुंग अन्तर निवासी जान,
ऐसे क्रमतें सु वर कूष्मांड मानिये ॥
तिन ऊपरै जु बीस सहस हस्त उत्पन्न,
याही क्रमसो जु ऊपरि ऊपरि अन्त मानिये।
अनुत्पन्न प्रमाण गंध महागंध प्रीति,
अकाशोत्पन्न नाम सुभ वेर आनिये ॥

---

१ चौरासी २ सरोवर. ३ पिंगल-लक्षणसे छंद अशुद्ध है।

दस बीस तीस और चालीस पचास साठि,
सत्तरि अस्सी जान चवरासी सहस[१] हैं।
पल्य आठ वाको भाग चौथा भाग आध अल्प,
आयु को जु अनुक्रम आदितैं द्वादश[२] हैं ॥
स्थानकनि भेद तीन भणे[३] नेमचंद मुनि,
भवन औ अवासवर भवनपुर सरस हैं।
चित्रापृथ्वी व भवन द्रह[४] गिरि[५] वृक्ष अवास,
दीप दधि[६] भवनपुर[७] जिन पूज हरष हैं ॥

ॐ ह्रीं द्वादशप्रकार व्यन्तर चित्र ऊपर निवास आयु अनुपम जिनभवन जिनबिंब श्रीजिनेन्द्रेभ्यो अर्घं० ॥

कवित्त—

चित्रा वज्रा मध्य संधितैं गिरिपति[८] शिखर अन्त पर्यंत।
भवन अवास भवनपुर माही दिपै जिनालय जिन गर्जंत ॥
ऊंचा तिर्यंग्क्षेत्र माहि सब व्यन्तर देवनिके सर्जंत।
रतनमई पद्मासन धारें जिन प्रतिबिंब जजत सुरजंत ॥

ॐ ह्रीं चित्रा वज्राके मध्य संधितें सुमेरुपर्वतके शिखर पर्यंत तथा तिर्यंग्क्षेत्र विषै भवन अवासपुर जिनालय जिनेन्द्रेभ्यो अर्घं० ॥

केई भवन विराजें व्यन्तर केई भवन अवास रहैं।
केई भवन अवास भवनपुर वसैं पुण्य रस भोग गहैं ॥
भवनवास असुरनि वितु कोई भवन अवास शुभवन पुरं।
वास थान जिनवर जीव रसैं भव्य सुनत सरधान धुरं ॥

ॐ ह्रीं व्यन्तर भवनवासा सुरनिके जहां जहां भवन अवास भवनपुर तहां तहां जिनमंदिर जिनबिंब श्रीजिनेन्द्रेभ्यो अर्घं० ॥

---

१ हजार २ बारह ३ कहे. ४ तालाब ५ पर्वत ६ समुद्र. ७ नगर ८ सुमेरु।

जिनवर गेह[1] अकीर्तम[2] सास्वत जह जह[3] तह तह[4] नमनकरं ।
पूजौं अष्टद्रव्यसों मन वच दर्शनको अभिलाप धरं ॥
ॐ ह्रीं अकृत्रिमशाश्वतसर्वजिनालयेभ्यो अर्घं० ॥
अधोलोकमे भवन जु भाषे तुंग तीनसै छान कही ।
सहस जु द्वादस चौड़े बरने लेऊं गुणतन पार लही ॥
उत्कृष्टेय भवनकी कथनी, जघनि[5] तुंग पचीस गही ।
जोजनको पहिले कहि लेना पूजौं जिनवर कूट मही ॥
तुंग भवनको तृतिय भागका कूट जिनालय श्रीभगवान ।
असंख्यात है तिनकी गिनती सरधा[6] धरि धारौं जुगपान[7] ॥
उत्कृष्टेय भवनसुर वेदी जोजन आदि कही गुणखान ।
जघनि पचास धनुपकी बरनी भव्यजीव सुनि मन धरि कान ॥

दोहा—

गोल भवनपुर दीपवत, पर लघु जोजन एक ।
बारह सहस जु जुग शतक, खर आवास अनेक ॥
जघनि पौन जोजन कहे, मरजादा भगवान ।
जिनग्रहमे जिनराजई,[8] वन्दौं कर जुग पान ॥

ॐ ह्रीं भवन अवास भवनपुर मर्याद लम्बाई चौड़ाई तुंग उत्कृष्ट जघन्य तिनमें जिनग्रह जिनबिम्वेभ्यो अर्घं० ॥

अडिल्ल—

भवन अवास भवन पुर दरवाजे कहे ।
कोटि नृत्यशाला आदिक सब विधि लहे ॥

---

१ जिनमन्दिर. २ अकृत्रिम-शास्वत. ३ जहा जहा. ४ वहाँ वहाँ ५ जघन्य ६ श्रद्धा ७ दोनो हाथ. ८ विराजते हैं ।

व्यन्तरके आहार पंच दिनके गये ।
पंच महूरत जात स्वास नितप्रति नये ॥

ॐ ह्रीं अनेकरचनायुत व्यन्तरदेवनिके मंदिर जिनमंदिरमंडित श्रीजिनेन्द्रेभ्यो अर्घं० ॥

— अथ जयमाल —

दोहा

भौमिलोक को जिनभवन, संख्यातीत महंत ।
जिनप्रतिमा जिनदेव सम, कहुं आरति सुनि संत ॥

छन्द

मैं मति अतिमदा, शक्ति निहदा, तुम गुण उदधि न पार लहुं ।
गणधर गुणधरसे, इन्द्र सरनसे, थकित भये गुण कथन सहु ॥

छन्द पद्धरि

व्यन्तर वसुविधि भाषे जिनेश, तिनमे षोडश[1] मित हैं सुरेश ।
इक सुरपति प्रति प्रत्येन्द्र एक, सामानिक चार[2] सहस अनेक ॥
तनरक्षक षोडश सहस जान, आनीकदेव सब कुल बखान ।
पैंतीस लक्ष छप्पन हजार, सातोंका जोड़ धरो विचार ॥
द्वय कोटि लक्ष अड़तालि जान, बाणव हजार प्रमित प्रमान ।
प्रकीर्णक सुर पुनि आभियोग, किल्विष त्रय सुर संख्यात जोग ॥
द्वय वेदी इन्द्राणी बखान, महत्तरि गणिका द्वय प्रमान ।
ग्रह चैत्यवृक्ष इक शोभवंत, चहुदिशि प्रतिमा षोडश लसंत ॥

---

१ सोलह प्रकार   २ चार हजार ।

प्रतिमा मुख मानस्तंभ जान, त्रय पीठि कोटत्रय द्युति महान ।
तोरण वदनमाला धरन्त, प्रतिमा चहुंदिसि पूजत सुसत ॥
इन शेष इन्द्र सब कथन एम, अब पुर अवास पुनि भवन तेम ।
चित्रामे भवन कहे जिनेश, चौदह सोलह शोभे सहेस ॥
तिन मध्य विराजें जैनगेह, प्रतिमा राजै द्युतिवंत तेह ।
द्रह तरु गिरमे आवास जान, जिनग्रह जिनबिंब देदीप्यमान ॥
दीपनि मधि नगर वसे महान, ताको कहिये पुर भवन मान ।
वसु दीपनिमें वसु जाति जान, इक इक सुरपति नगरी बखान ॥
दक्षिण उत्तर पण पण वसाय, आठोंके अस्सी अति सुहाय ।
जिनमें जिनमन्दिर अगिन जान, पूजत सुरपति सुर भक्ति आन ॥
बत्तीस इन्द्र पूजन कराइ, देवी अपछर गुणमाल गाइ ।
द्रुम द्रुम द्रुम द्रुम बाजे मृदंग, सारंगि सनन सन बजे रंग ॥
सुरतिय तन तन तन लेत तान, काई ताल बजावत लय प्रमान ।
जहं अमर रमण नाचे रसाल, ता थेइ थेइ थेइ थेइ देत ताल ॥
दम दम दम दम केइ दमकि जाइ, छम छम छम छम घुंघरू बजाइ ।
नम नम नम नम नम नमत पाइ, केइपुर केइपुर पुरकी लहाइ ॥
केइ झूमरि खेलें भक्ति लाइ, जिनराज सुजस गावें बनाइ ।
गंधर्व देव अति हर्ष पाइ, जिन सुजस गात मीठे सुराइ ॥
जिनराज छवी निरखे बनाइ, नहि तृपति बहुत आनन्द पाइ ।
त्रय पीठि विराजें जोतिरूप, भामंडल छवि जिनराज भूप ॥
त्रय छत्र फिरें शिरके विसाल, चहु चमर ढुरें जिन पर रसाल ।
पुष्पनिकी वर्षा होत पूर, सुर दुंदुभि गाजे शब्द पूर ॥
अशोक शोक हरि भव्यजीव, जय जय जिनवानी रसतीव ।
इक जिनग्रहमें थान अधिक आठ, जिनबिंब विराजें अजब ठाठ ॥

दर्शनतें दर्शन होत सिद्ध, भवि जीव लहैं जिन अमर रिद्ध।
सब जैन गेह सख्यान जान, प्रतिमा रतननिमय शोभमान ॥
पद्मासन धारे मुख मयंक, प्रफुलित्त कमलवत् निःकलंक।
अनुमोदन हम चितमे धरान, कब दर्शन पाऊं गुणनि खान ॥
त्रयलोक विषै जिनदेव स्वामि, प्रतिमा वंदन मैं करहूँ ताम।
मैं अरज करौं जिनवर हजूर, तुम भक्ति रहो जबलग प्रपूर ॥
तबलग न लहौं शिवनगरराज, जबलौं इनको मो करहु साज।

कवित्त

जैनधर्म पाऊं भव भवमें सतसंगति तुमरी सेवाइ।
आठों जाम सुनो जिनवानी भोगनिमें रुचि कभूं न थाइ ॥
चार सघ गुण निति प्रति सुमिरो पंच पाप को त्यौं छिटकाय।
क्रोध मान छल तिसना सेती दूरि रहो शिवकी कर चाव ॥
तुम पूजातें यह फल मांगू सेवा ही तुमरी रहौ मोहि।
चारों गतिका वास लहूं जहां तहां न विसरौं जिनवर तोहि ॥
निर्धनता चेटकता अथवा विपति अनेक रहो किन कोइ।
तुमरे चरण रहो मो घटमें मो घट तुम चरणनिमे होइ ॥

दोहा

तार तार भव उदधितें, जार जार वसु कर्म।
सार सार निज दे अबै, टार टार जग भर्म ॥
भौमिदेव ग्रह जिनभवन, तिनकी पूज रसाल।
बांचे सुने जु भावतें, पावै मोक्ष विशाल ॥ (पूर्णार्घं०)

कवित्त—

व्यन्तरदेवनिके मंदिरमें जिनग्रह अति शोभैं द्युतिवन्त।

संख्यातीत कही जिनप्रतिमा भक्ति सहित पूजें भविसंत ॥
ताके सुख संपति अति बाढ़े पुत्र पौत्र सब भोग तुरंत ।
सुरगतिके अनुपम सुख भोगे अंत लहे शिवपद श्रीमंत ॥ (इत्याशीर्वादः)

॥ इति व्यन्तरभवनमध्य अकृत्रिमजिन पूजा ॥

卐

—अथ जम्बूद्वीप अकृत्रिम जिनालय पूजा—

छन्द–अडिल्ल

अरहत सिद्ध साधु श्रुत मगल मम[1] सदा ।
उत्तम सरन जगत जिय[2] नहि दूजौ कदा ॥
प्रथम नमौं अरु हृदय माहि तिन चरन कौं ।
पूजा रचौं स्वल्प[3] मति श्रुत[4] अनुसरन कौं ॥
षोडश[5] चव[6] जुग[7] षट पोडश[8] चौंतीस[10] जी ।
मेरु और गजदन्त वृक्ष कुल ईस जी ॥
वक्षारे वैताड्य जिनालय राजई ।
आह्वानन विधि करौं सु आतम काजई ॥

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीप सम्बन्धी अठहत्तरि जिनालय ! अत्रावतराव-तर संवौषट् आह्वाननं ।

... ... ''अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं ।
अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणं ॥

---

१ मुझे. २ जीवो को ३ अल्पबुद्धि ४ शास्त्रानुसार ५ सोलह मेरु सम्बन्धी जिनालय ६ चार गजदन्तके ७ भोगभूमि के जम्बूवृक्ष के दो. ८ कुलाचल के छह ९ वक्षारगिरि के सोलह १० वैताढ्य पर्वत सम्बन्धी चौंतीस जिनालय (जम्बूद्वीप सम्बन्धी)

— अथाष्टकं- चाल होली —

गंगाजल अति प्राशुक लीनौं सौरभ सकल मिलाय ।
मन वच तन त्रय धार देत हो जन्म जरा मृतु जाय ॥
पूजो भाव सौं, वसु सत्तरि[1] जिन आगार[2], पूजों भाव सों।
जम्बूद्वीप मेरु गजदन्ते तरु कुल वक्षाराय ॥
विजयारधगिरि शिखर विराजै जिन प्रतिमा सुखदाय ।
पूजौं भावसौं ।

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीप अकृत्रिम अठहत्तर जिनालयेभ्यः जल निर्वपामीति स्वाहा. जलं० ।

मलयागिरि करपूर चन्दन घसि केसरि रंग मिलाय ।
भवतप हरण चरण पर वारौं मिथ्याताप मिटाय ॥
पूजौं भावसौं. वसु सत्तरि०, जम्बूद्वीप० ॥ चन्दन० ॥२॥

तंदुल उज्वल गंध अनी जुत कनक थाल भर लाय ।
पुंज धरों तुम चरनन आगै मोहि अखय[3] पद दाय ॥
पूजौं भावसौं०, वसु सत्तरि०, जम्बूद्वीप० अक्षतं० ॥३॥

पारिजात मंदार कल्पतरु[4] जनित सुमन[5] शुचि लाय ।
समर[6] शूल निर्मूल करनकौं तुम पद पद्म चढ़ाय ॥
पूजौं भावसौं०, वसु सत्तरि , जम्बूद्वीप० ॥ पुष्पं० ॥४॥

घेबर बाबर आदि मनोहर सद्य सजे शुचि भाय ।
क्षुधा रोग निरनासन कारण जजौं हरष उर लाय ॥
पूजौं भावसौं० वसु सत्तरि०, जम्बूद्वीप० ॥ नैवेद्य० ॥५॥

---

१ अठहत्तर (१६+४+२+६+१६+३४=७८) २ जिनमन्दिर ३ अक्षय पद ४ कल्पवृक्ष ५ पुष्प ६ कामदेव

दीपक जोति जगाम ललित[1] वर धूम रहित अभिराम[2] ।
तिमिर मोह नाशन के कारण जजौं चरण गुणधाम ॥
पूजौं भावसौं०, वसु सत्तरि०, जम्बूद्वीप० ॥ दीपं० ॥६॥
कृष्णागुरु मलयागिर चन्दन चूरि सुगध बनाय ।
अगनि माहि जारौं[3] तुम आगै अष्टकर्म जरि[4] जाय ॥
पूजौं भावसौं०, वसु सत्तरि०, जम्बूद्वीप० ॥ धूपं० ॥७॥
सुरस वरण रसना मन भावन पावन फल अधिकार ।
तासौं पूजौं जुगम चरण यह विघन करम निरवार ॥
पूजौं भावसौं०, वसु सत्तरि०, जम्बूद्वीप० ॥ फलं० ॥८॥
जल फल आदि मिलाय अष्ट विधि[5] भक्ति भाव उर लाय ।
यजौं[6] तुमैं शिव तिय वर[7] जिनवर आवागमन मिटाय ॥
पूजौं भावसौं०, वसु सत्तरि०, जम्बूद्वीप० ॥ अर्घं० ॥९॥

कवित्त

तीनलोक मधि[8] मध्यलोक मधि वलयरूप[9] वर जम्बूद्वीप ।
द्वीप मध्य गिरिराज[10] विराजै उन्नत जोजन लक्ष महीप ॥
भद्रसाल, नंदन, सौमनस रु पांडुक वन चारौं चहुं चीप ।
वन प्रति च्यारि भवन जिनप्रतिमा षोडश यजौं धारि मस्तीय ॥१॥

ॐ ह्रीं सुदर्शनमेरु सम्बधी च्यारि वन, वन प्रति चहुंदिश चैत्यालय षोडश श्रीजिनबिम्बेभ्यो अर्घं० ॥

दोहा

पांडुकवन विदिसान मैं, चारि शिला रमणीक ।
तीर्थपनिके[11] न्हवतसैं, महाश्रेष्ठ वरनीक ।२॥

१ सुन्दर २ सुन्दर ३ जेता हूँ ४ जल जांय. ५ आठ प्रकार. ६ पूजौं ७ मुक्तिवधू के स्वामी. ८ में. ९ गोलाकार. १० सुमेरु ११ तीर्थंकर ।

पतिके न्हवनतैं महापवित्र श्रीजिनेन्द्रेभ्यो अर्घं० । ॐ ह्रीं सुमेरगिरि पांडुकवन की विदिसानि मैं चारिसिला जिन-

गिरिराजाके मूलमैं, विदिसा चव गजदन्त ।
शिखरकूट चव जिनभवन, पूजौं जिन श्रीमन्त ॥

ॐ ह्रीं सुमेरुके मूलविषै चारौं विदिसानिमैं चारि गजदन्त पर सिद्धकूट श्रीजिनालयस्थ जिनेभ्यो अर्घं० ॥

मेरु सुदर्शन दक्षिण दिश, तीन कुलाचल जान ।
निषध महाहिमवन हिमन, कूटनि परि जिन थान ॥४॥

ॐ ह्रीं सुदर्शनमेरुके दक्षिण दिशमैं तीन कुलाचल निषिद्धि. महा-हिमवन, हिमवनगिरिके शिखरकूट जिनालयस्थ जिनेभ्यो अर्घं० ॥

तप्त कनकमय निषिधिगिरि, सिद्धकूट जिनगेह ।
द्रह[1] तिगिंछ अलिदेवधृत, जिनग्रह वंदौ नेह ।५॥

ॐ ह्रीं निषिद्धगिरि पर सिद्धकूट जिनालयस्थ जिनेभ्यो अर्घं० ॥

अर्जुनमय[2] हिमवन महा, सिद्धकूट जिन थान ।
महापद्म द्रह देवि ह्री, बन्दौं श्री भगवान ॥६॥

ॐ ह्रीं महाहिमवनगिरि पर सिद्धकूट जिनालयेभ्यो अर्घं० ॥

सुवरणमय हिमवन सुगिरि, तापर कूट जिनाल[3] ।
पदमद्रह श्री देविता अलिपै[4] सोभै हाल ॥७।

ॐ ह्रीं हिमवनगिरि पर सिद्धकूट जिनालयेभ्यो अर्घं० ॥

क्षेत्र तीन हरि हैमवत, भरत नाम अभिराम ।
मध्यम जघन सुभोगभू, छटो काल[5] भरताम ॥८॥

मध्यम जघन सुभोगभू, छटो काल भरताम ॥८॥ —

रूपाचल रूपामई, भरतक्षेत्रके मध्य ।
शिखर जु नव ताके कहे, जिनगेह कूट प्रसिद्ध ॥९॥

१ मगोवर २ चांदीका ३ जिनालय ४ कमल. ५ सुखमा सुखमा आदि ।

ॐ ह्रीं वैताढ्यपर्वतपर सिद्धकूटजिनालयेभ्यो अर्घं० ॥

जुग श्रेणी नगरी शतक–दश विद्याधर वास ।
जिनमन्दिर जिनबिंब वर, पूजत धारि हुलास ॥१०॥

ॐ ह्री वैताढ्य पर्वत पर जुग विद्याधर श्रेणी, तिनमैं एक शतकदशनगरी जहां, श्री जिनालयस्थ जिनेभ्यो अर्घं० ॥

खड छहौं शुभ राजही, पंच मलेछ सुजान ।
आर्यखंडमैं वर्तते, चतुर्विंश[1] भगवान ॥११॥
होनहार[2] जु होगये[3], जे तीरथपति[4] भगवान ।
नाम लेय पूजन करौं, महा सुखनि की खान ॥१२॥

ॐ ह्रीं सुमेरुपर्वततै दक्षिणभरत सम्बन्धी त्रिकालतीर्थंकरजिनेभ्यो अर्घं० ॥

भरतक्षेत्र भावी कहूं, तीरथपति भगवान ।
नाम लेय संकट टलैं, सुमरत आतमज्ञान ॥१३॥

गीता छन्द—

निर्वाण सागर साधु प्रभु जी विमलप्रभ श्रीधरजिनं ।
सुरदत्त अमलप्रभ सु उद्धर अग्नि सन्मति सिंधुनं ॥
कुसुमांजलि शिव गण उत्साह सुज्ञान परमेश्वर भवनं ।
विमलेश्वर पुनि यशोधर जिन कृष्ण ज्ञानमति सुमरनं ॥१४॥

दोहा

शुद्धमती श्रीभद्रप्रभु, अतिक्रान्त जिनराय ।
अन्तिम शान्ति जिनेन्द्रकौं, नमौं अङ्ग वसु[5] नाय ॥ १५॥

ॐ ह्रीं सुमेरुगिरितै दक्षिण भरतक्षेत्रसम्बन्धी भूततीर्थंकरजिनेभ्यो अर्घं० ॥

---

१ चौवीस २ आगे होनेवाले ३ भूतकालीन ४ तीर्थंकर ५ आठ ।

कवित्त—

ऋषभ अजित संभव अभिनन्दन, सुमति सुपद्म सुपारस चन्द ।
पुष्पदन्त शीतल श्रेयांस जिन, वासुपूज्य जिन विमल अमन्द ॥
जिन अनन्त वरधर्म धर्म कहि, शान्ति कुन्थु अर मल्लि जिनन्द ।
मुनिसुव्रत नमि नेम पार्श्ववर, वीरनाथ पूजित शत इन्द[1] ॥१६॥

ॐ ह्रीं श्री वर्तमानजिनेभ्यो अर्घं० ॥

दोहा—

हौनहार इस भरतमैं, तीर्थंकर चौवीस ।
नाम कहूं अवलोकि श्रुत, सुनों सुविसवावीस[2] ॥१७॥
महापद्म सुरदेव श्रीपार्श्व स्वयंप्रभु ।
सर्वात्मभू देवपुत्र कुलपुत्र उदंकप्रभु ॥
प्रौष्ठिल जिन जयकीर्त्ति मुनिसुव्रत अरं ।
निष्पाप निःकषाय श्री विपुल निर्मल वरं ॥१८॥
चित्रगुप्ति समाधिगुप्त स्वयंप्रभ अनिवृत ।
जय विमल देवपाल अनन्तवीर्य युत व्रत ॥
चारवीस[3] जिनवरा सुमोक्ष सुखकौं करा ।
नमौं नमौं उचार पूज्य अष्टद्रव्यतैं वरा ॥

ॐ ह्रीं भविष्य जिनेन्द्रेभ्यो अर्घं० ॥

जोगीरासा—

गिरिराजाके[4] उत्तरदिशमैं तीन कुलाचल मानौं ।
लम्बाई पूरब पश्चिम दधि[5] ताईलौं वर जानौं ॥

---

१ सौ इन्द्र. २ शत प्रतिशत. ३ चौवीस. ४ सुमेरुपर्वत ५ समुद्र. ।

नील रुक्मिगिरि शिखरी अन्तर रम्यक क्षेत्र सुहानौं।
हैरनि[1] ऐरावत ये तीनों जिनवर वानि वखानौं ॥

ॐ ह्रीं सुमेरुगिरिके उत्तरदिशमैं नील रुक्मि शिखरी तीन कुलाचलकें बीच रम्यक हैरण्यवत ऐरावत तीन क्षेत्र सम्बन्धी जिनालये जिनेन्द्रेभ्यो अर्घं० ॥

दोहा—

वैडूरजमय नीलगिरि, केसरि द्रह[2] अलिवास।
देवी कीरति[3] जिनभवन, पूजौं धरि शिव आस ॥
ॐ ह्रीं नीलगिरि ऊपरि सिद्धकूट जिनेभ्यो अर्घं० ॥

रूपामय रुक्मी सुगिरि, महापुंडरी कुंड।
बुधि[4] देवी अलिपै भवन, जिनग्रह जयकर जुंड ॥

ॐ ह्रीं सुमेरुगिरिके उत्तरदिशि रुक्मीगिरि पर सिद्धकूट श्री जिनेभ्यो अर्घं० ॥

सुवरण शिखरी कूट पै, पुंडरीक द्रह जान।
अलि लक्ष्मी जिनग्रह भवन, पूजत इत हरषान ॥

ॐ ह्रीं सुमेरुके उत्तरदिश शिखरी ऊपरि सिद्धकूट जिनेन्द्रेभ्यो अर्घं० ॥

प्रथम जघन्य जु भोगभू, मुनिगण करत विहार।
ऐरावत षट् खंड जुत, मंडित भूमि निहार ॥

ॐ ह्रीं सुमेरुके उत्तरदिश हैरण्यवतक्षेत्रमध्य जघन्यभोगभूमि ऐरावतक्षेत्र षट्खंडमंडित श्रीजिनेन्द्रेभ्यो अर्घं० ॥

---

१ हैरण्यवतक्षेत्र २ सरोवर. ३ कीर्त्ति. ४ बुद्धि ।

ऐरावतमधि क्षेत्रमैं, रूपागिरि अति शोभ ।
तिन ऊपर सिधकूट हैं, जिन पूजौ तजि क्षोभ ॥

ॐ ह्रीं सुमेरुगिरिके उत्तरदिश ऐरावतक्षेत्रमध्य वैताड्यगिरि ऊपरि सिद्धकूटजिनालये जिनेन्द्रेभ्यो अर्घं० ॥

शत ऊपरि दश[1] नगर हैं, विद्याधरनि निवास ।
जिनग्रह प्रतिमा चिंतिकैं, पूजौ धारि हुलास ॥

ॐ ह्रीं सुमेरुके उत्तरदिशमैं ऐरावतक्षेत्र वैताड्यगिरि विषैं जुग श्रेणी तिनमै विद्याधरनिका निवास, नगरी एकसौदश, तिनमैं जिनग्रह-जिनप्रतिमा जिनेन्द्रेभ्यो अर्घं० ॥

ऐरावतमधि आर्यभू, छहो काल की फेर ।
चौथेमैं जिनवर भये, पूजौं जय जय टेर ॥

ॐ ह्रीं गिरिराजाके उत्तरदिश ऐरावतक्षेत्र रूपाचलमध्य आर्य-खंड छहों काल फिरनि चौथेमे तीर्थंकर उत्पत्ति श्रीजिनेन्द्रेभ्यो अर्घं० ॥

ऐरावत वर क्षेत्रमै, भूत जिनेश्वर देव ।
यजौं नाम ले भवि सुनौं, कटै दुःख की टेव ॥

छन्द—त्रोटक (जिन नाम)

श्रीपंचरूप जिन सपुटक, उद्धृत अघ छाइक घाइकर्कं ।
अभिनन्दन और जिनेश्वरं, रासेश्वरु अगुछ फिंकजनं ॥१॥
विन्यास अरोप विधान प्रदत्त, कुमार सर्वगिरि प्रभंजन सत्त ।
सौभाग्य सुदिन कर श्रीधनविंदु, सुसिद्ध प्रभू शरीर कर इन्दु ॥२॥
कल्पद्रुम जिन तीर्थादि फलेश, चतुर्विशति वदित जगत महेश ॥३॥

ॐ ह्रीं ऐरावत सम्बन्धी भूतजिनेन्द्रेभ्यो अर्घं० ॥

---

१ एकसौ दश ।

दोहा

ऐरावत वर क्षेत्रमैं, वर्त्तमान जिनदेव ।
नाम लेय पूजन करौं, मांगू चरननि सेव ।४॥

छन्द पद्धड़ि

जय बालचन्द मुख पूर्णचन्द, जय सुव्रत सुखकरि कर्मनिकंद ।
जय अग्निसेन जय नंदसेन, जय श्रीदत्त व्रतधर तजत मैन ॥१॥
जय सोमचन्द्र जय दीर्घसेन, सत्तायुध शिव सत दुख नसेन ।
श्रेयांस स्वयजल सिघसेन, उपशांति सुगुप्तामन असेन ॥२॥
जय महावीर श्रीपार्श्वनाथ, अभिधान अमर देवनमैं साथ ।
जय श्रीधर अर जय श्यामकंद, जय अग्निप्रभ दुति अग्नि अठ ॥३॥
जय वीरसेन अंतिम जिनेश, जय चतुर्विंशति वंदित महेश ॥४॥
ॐ ह्रीं ऐरावत सम्बन्धी वर्तमान जिनेभ्यो अर्घं० ॥

दोहा

हौनहार जिन तीर्थकर, ऐरावतके माह ।
नाम रतनमाला कहूँ, करौं कंठ हित लाह ॥५॥

कवित्त—

श्री सिद्धारथ विमल जयघोप सुनंदसेन प्रभु स्वरग मनल्ल ।
वज्रधर निर्वान धर्मप्रभु सिद्धसेन महासेन अर मल्ल ॥
रविमित्तर भज सत्यसेन जय अर श्रीचन्द्र महेन्द्र सुअल्ल ।
नमौं स्वयंजल देवसेन तसु व्रत श्रीजिनेन्द्र हरिमल्ल ॥१॥
पासहरी सुपार्श्वजिन स्वामी जानिसुकोसल नाम अनन्त ।
विमल विमल जिन अम्रतसेन जी अग्निदत्त अंतिम जिनसंत ॥

दक्षिण दिश की डाल जिनेश्वर धाम[1] है ।
मंगल द्रव्य आठ जुत अति अभिराम[2] है ॥
बहु वृक्षनि करि वेटित[3] रतनमई लसै ।
पूजौं मस्तक नाइ एन[4] देखत नसै ॥२॥

ॐ ह्रीं सुमेरुगिरितै नैऋतकोण साल्मली वृक्ष ऊपर पूरबशाखा सिद्धकूट जिनालयेभ्यो अर्घं ॥

दोहा—

गिरिराजा के पूर्वदिश, षोडश क्षेत्र विदेह ।
षट् खंड मंडित देशवर, मध्य सुगिरि सो मेह ॥१॥

सोरठा —

सीतानदी महान, बीच बहै द्वै तट विषै ।
वक्षारे वसु आन, षट् विहंग षोडश शहर ॥२॥

ॐ ह्रीं सुमेरुगिरि के पूर्वदिश सीतानदी पूर्वसमुद्रगामिनी ताके दक्षिण उत्तर दोनों किनारैं वसु वक्षार षट् विभंगानदीमध्य वसु वसु देश षट् खण्ड मण्डित मध्य रूपाचल तिन पर सिद्धकूट जिनालयेभ्यो अर्घं० ॥

कवित्त—

गिरिराजातैं पूरब दिशमैं सीती नदी उदधि[5] मलियान[6] ।
दक्षिण उत्तर वसु वसु क्षेत्तर[7] सार विदेह कह्यो भगवान ॥
गिरि वक्षार आठ दोऊ तट षट् विभंग नदियौ परवान ।
गिरि शिखरनि परि श्रीजिन वसु ग्रह पूजौं मैं अति आनन्दमान ॥१॥

---

१ मन्दिर २ सुन्दर, मनोहर. ३ वेष्टित. ४ पाप ५ समुद्र. ६ मिली हुई. ७ क्षेत्र ।

ॐ ह्रीं गिरिराजातैं पूरव सीतानदी दक्षिण उत्तर वसु वसु क्षेत्र आठ वक्षारगिरि पट् विभंगा नदी शिखरनि गिरि पर श्री जिनवसु ग्रह श्री जिनेन्द्रेभ्यो अर्घ० ॥

षोडशद्वेप त्रिपै षोडश ही रूपाचल अति सेत[1] सुजान।
शिखर माहि षोडश ही जिनग्रह शत अठ अधिक बिंब दुतिमान[2] ॥
सुर[3] खग[4] चारण[5] नितप्रति पूजैं ध्यावैं वदै जोड़ जुग[6] पान[7]।
मैं ह्यां[8] तिनको भावन भावृ पूजौं अष्ट द्रव्य सुख खान ॥२॥

ॐ ह्रीं सुमेरु पर्वत तैं पूरबदिश सीतानदी के दोनो किनारे विषै चव चव वक्षार, तीन तीन विभगानदी मध्य आठ आठ विदेह क्षेत्र सम्बन्धी देश तिन मध्य रूपाचल षोडशशिखर पर सिद्धकूटजिनालयेभ्यो अर्घ० ॥

श्रीमन्दिर[9] जुगमन्दिर[10] स्वामी विहरमान तीर्थेश्वर जान।
पंचकल्यानक विभव विराजत मोक्ष नगर के सब ही मान ॥
कोट पूर्व की आयु सुधारै कोटि सूरतैं दुति अधिकान।
लक्षण अतिशय गुण अनन्त सुन पूजौं भाव भक्ति उर आन ॥३॥

ॐ ह्रीं सुमेरुतैं पूरब विदेह विषैं श्रीमन्दिर जुगमंदिर तीर्थंकर अनन्तगुण सहित श्रीजिनेन्द्रेभ्यो अर्घ० ॥

गिरिराजाके पश्चिम दिशमैं सीतोदा दधिमैं मलियान।
दोऊ तट दक्षिण उत्तरमै षोडश देश विदेह प्रमान ॥
वसु वक्षार सुगिरि दोऊ तट पट् विभग नदि कही बखान।
गिरि शिखरनि श्रीजिनवर वसुग्रह पूजौं मैं अति आनन्दमान ॥४।

---

१ श्वेत–सफेद २ कान्तिमय ३ देव ४ विद्याधर ५ चारणऋद्धिवाले (आकाशमें गमन करने की शक्तिवाले मुनि) ६ दोनो ७ हाथ (पाणि) ८ यहां. ९ श्रीमंधर १० युगमंधर।

ॐ ह्रीं सुमेरुगिरितैं पश्चिम दिशमैं सीतोदानदी तट वसु वक्षार-गिरि सिद्धकूट जिनमंदिरेभ्यो अर्घं० ॥

षोडश देशनिके मधि षोडश रूपाचल अति सेत[1] वखान ।
शिखरनि पर षोडश हैं श्री ग्रह प्रतिमा रतनमई असमान[2] ॥
सुरपति रिपि चारण खग वंदित पूजत बहुविधि भक्ति करान ।
मैं तिनकी छविकौं चितवन करि पूजौं अष्ट अंग नयमान[3] ॥५॥

ॐ ह्रीं षोडशदेशमध्य षोडश वैताड्यगिरि पर सिद्धकूट जिनेन्द्रेभ्यो अर्घं० ॥

षोडश देशनिमैं शिवमारग चलै अनादिकालतैं जान ।
चक्री[4] काम[5] हली[6] हरि[7] प्रतिहरि[8] महापुरुष उपजैं सुखमान ॥
तिनहीमैं तीर्थंकर स्वामी बाहु सुबाहु तीर्थपति[9] मान ।
छियालिस गुण मंडित अतिशय जुत पूजौं तिनके चरनन आन ॥१॥

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरु के पश्चिमदिश षोडश महाविदेहक्षेत्रनिमैं बाहु सुबाहु तीर्थंकर विहरमानजिन तिनके चरणकमलकौं अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

षटकुलवर सप्तक्षेत्रमधि नानाविधि रचना सुखमान ।
भोगभूमि अरु कर्मभूमिकी रीति शाश्वती[10] अथिर प्रमान ॥
गंगासिंधु चतुर्दश नदी जल अति स्वच्छ बहै मल हान ।
द्रह सरवर वन जिनग्रह राजै तिनकौं पूजौं चित्त लगान ॥२॥

ॐ ह्रीं श्री जम्बूद्वीप मध्य गिरिक्षेत्र सम्बन्धी अनेक रचना रची जहां जहां, जिनगेह जिनबिम्ब कृत्रिम अकृत्रिम तहां तहां अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥

---

१ श्वेत. २ अद्वितीय. ३ नमाकर. ४ चक्रवर्ती. ५ कामदेव. ६ बलभद्र. ७ नारायण. ८ प्रतिनारायण. ९ तीर्थंकर १० कृत्रिम-अकृत्रिम ।

तीरथपति गणधर मुनिवरजी क्रम[१] हत केवलज्ञानी होइ।
उपसर्ग जीति वा अंत कर्म करि केवल जिनकैं उपजे सोइ॥
गणधर सूर[२] उपाध्याय साधू वीतरागता धर्म समोइ।
सिद्ध होय सिद्धालय पहुंचे तीनकाल के पूजौं सोइ॥३॥

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपमध्य चौंतीस कर्मभूमि सम्बन्धी अर्हंत् सिद्ध यति तीन काल सम्बन्धी तिन्हैं जलादि अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

सीता सीतोदा तट कचनगिरि दो शतक कहे जिनराइ।
इक प्रतिमा जिनग्रहमैं राजै तीनलोकपति पूजैं जाइ॥
कीर्त्तम जिनग्रह रचे सुभव्यनि चौंतिस क्षेत्रनिमैं सुखदाइ।
तीनकाल तिनकी वदन करि पूजौं अष्ट द्रव्य इत लाइ॥४॥

ॐ ह्रीं सुमेरुपर्वतके पूर्व पश्चिम दिशमैं सीता सीतोदा नदी तट द्वैशतक कचनगिरि पर तथा चौंतिस क्षेत्रनिमैं भव्यनिकरि रचे जिन-मंदिर तिन समस्तनिकौं अर्घं० ॥

तीर्थंकरके पंचकल्यानक गर्भ जन्म तप बोध[३] शिवाइ[४]।
ज्ञान मोक्ष कल्यानक सबके प्रणमौ आठौं अंग नवाइ॥
तिथि अरु मास रु श्रेष्ठ नछत्तर[५] पर्वकालकौ चितवन लाइ।
नाम थापना द्रव्य भाव क्षित काल छहौं पूजौं मन लाइ॥५॥

ॐ ह्रीं पंचकल्यानकक्षेत्र कालमै तीर्थंकरनिके तिन्हैं अर्घं निर्वपा-मीति स्वाहा॥

---

१ कर्म. २ आचार्य ३ ज्ञान. ४ मोक्ष (निर्वाण). ५ नक्षत्र।

— जयमाला —

छन्द पद्धड़ी

जै जै जिनदेव जैवंत होहु, जै सुर नर खग मुनि-श्रुति बहोहु।
जैं केवल दिनकर[1] जग प्रकाश, चर अचर[2] लखत जुगपत विकास ॥१॥

दोहा—

द्वीप मध्य जिन गेह हैं, स्वल्प कथन बुधसार।
कहौं, सुनौं भवि भावसौं, जिनवर दीन दयार ॥२॥

कवित्त—

असंख्यात दीपोदधि माही जम्बूदीप सुवलयाकार।
लछि जोजन विस्तार जासुका मध्य विराजै गिरिवर सार॥
जड़ जोजन हजारकी वरनी सहस निन्याणवै तुंग सुठार।
चालिस जोजन श्रेष्ठ चूलिका सुवरणमय वन चार निहार॥१॥

भद्रसाल के बन चारौं दिस पूरब पश्चिम दखिनोत्तर।
इक इक श्री जिनगेह विराजैं नंद भवन चारौं शुभतर॥
वन सौमनस रु वन पांडुक मैं च्यारि च्यारि षोडश नमिकर।
पांडुक वन विदिसा च्यारौं मिल जिनपतिन्हवन यैतैं पवितर॥२॥
मूलभाग गिरिवर राजाके विदिसामैं गजदंत वखान।
शिखर माहि श्रीकूट अनूपम चारि कहे चारौं गिरि जान॥
जम्बू शाल्मली शाखा पै पूरब जिनवर गेह प्रमान।
गिरिवरके पूरब पश्चिममैं षोडश वक्षारहे निदान॥३॥

---

१ सूर्य. २ जीव-अजीव।

जम्बूद्वीपके जिनभवन, तिनकौं अर्घ चढाय ।
नाम सुमरि जपि खड़ा रह, आगैं पूज रचाय ॥२॥
इति जम्बूद्वीपमध्ये अठहत्तरि जिनपूजा सम्पूर्ण ।

卐

अथ धातकीखंडके पूरब मेरुसम्बंधी पूजा

दोहरा—

वंदौं श्रीजिनदेव कौं, सुर नर खग मुनिवृन्द ।
सेवकरै अति हरषतैं, मै पूजौं सुखकंद ॥१॥
दीप धातकीखंडमैं, पूरब विजय सुमेर ।
सम्बन्धी वसु सत्तरा[1], जिनवर गेह जुहेर ॥२॥
जिनजीके प्रतिबिंब जे, रतनमई दुतिवन्त[2] ।
आह्वानन तिनकी यहां, करि मनमैं हरषंत ॥३॥

ॐ ह्रीं धातकीखडदीपके पूरब दिस विजयमेरुसम्बन्धी अठहत्तरि जिनग्रह श्रीजिनेन्द्राः अत्रावतरावतर संवौषट् (आह्वाननं) ।

ॐ ह्रीं धातकीखंडदोपके पूरबदिस विजयमेरुसम्बन्धी अठहत्तरि जिनग्रह श्रीजिनेन्द्राः अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः (स्थापनं)

ॐ ह्रीं धातकीखंडदीपके पूरबदिस विजयमेरुसम्बंधी अठहत्तरि जिनग्रह श्रीजिनेन्द्राः अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् (सन्निधिकरणं)

अथाष्टकं–ढाल सोलह कारण पूजा की—

उज्जल जल शुचि गंध मिलाय, कंचनझारी भरि करि ल्याय ।
दयानिधि हौ, जै जगबंधु दयानिधि हौ ॥

१ अठहत्तर (७८). २ कान्तिमान ।

छन्द जोगीरासा

जम्बूद्वीप वेढि अति सोहै लवणोदधि शुभ नीका ।
दुइ लख जोजन इक दिशमैं सूची दुइ दिश चव इक ठीका ॥
दधिकौं वेढि धातकी जानौं चव लख जोजन इकमैं ।
दुह दिश आठ मध्यपण गिनियै तेरह सूची शकमैं ॥१॥

पूरब दिशमैं मेरु विजय है सुवरणमय तुंग जानौं ।
चवरासी जोजन हजारकौ चव वन चहुँ दिश मानौं ॥
इक इक दिशमै श्रीजिनमंदिर बिम्ब रतनमई आनौं ।
मंगल द्रव्यनितै मडितवर पूजत भवि सुख थानौं ॥२॥

पांडुक वन चहुँ विदिसामाही पांडुक शिला ईसाना ।
भरतक्षेत्र जिन न्हवन पीठिका पांडुक मल अगिनाना ॥
जिन विदेह पश्चिम अभिषेक जु नैरित रक्त सिलापै ।
पूर्व विदेह जिनेश्वर वाइव ऐरावत कमला पै ॥३॥

दोहा

विजयमेरु पांडुक विदिशि चव सिल अति रमनीक ।
जिनपतिके अभिषेकतै पूजत शुचि रमनीक ॥४॥

ॐ ह्रीं धातकीखण्डद्वीपविषै विजयमेरुसम्बन्धी पाण्डुकवनकी विदिशानिमैं पाण्डुकशिला परि ईशान भरतजिन अभिषेक आग्नेय-कोण कमला पश्चिमविदेहजिन अभिषेक रक्तशिला नैऋत्यकोण विदेह-जिनअभिषेक वायव्यकोण रक्तकमला ऐरावत क्षेत्रजिन अभिषेक महा-पवित्र श्रीजिनाय अघ० ॥

ॐ ह्रीं विजयमेरु-भद्रशालवनसम्बंधी चारदिश चार श्रीजिनचैत्यालयस्थ जिनेभ्यो अर्घं० ॥

अडिल्ल—

सौमनस नाम गजदंत अग्निकौनैं[1] कहा,
विद्युतप्रभ नैऋत्य मालवानौं[2] लहा ।
गंधमादन ईशान शिखर जिनगेह है,
पूजौ चहुंदिशि चारि सु मनवच नेह है ॥९॥

ॐ ह्रीं विजयमेरुसम्बन्धी सौमनस विद्युत्प्रभ मालिवान गंधमादन अग्निकोण नैऋत्य वायव्य ईशानविषैं शिखरजिनमंदिरेभ्यो अर्घं० ॥

दीप धातकीखण्ड विजय पूरब भला,
ताकी दक्षिणदिश निषिधाचल गिरि रला ।
द्रह[3]-अम्बुज[4]पर धृतिदेवीका वास है ॥
शिखरकूट जिनगृह पूजौं सुखरास है ॥१०॥

ॐ ह्रीं धातकीखण्डद्वीप पूर्वविजयमेरु की दक्षिणदिशविषैं निषिधाचलपर सिद्धकूटसम्वंधीश्रीजिनेभ्यो अर्घं० ॥

विजयमेरु दक्षिणदिश महहिमवन गिरी ।
ह्री देवी द्रह अम्बुजपर गृह मन हरी ॥
शिखरनपर श्रीसिद्धकूट जिनगेह हैं ।
पूजौं मन वच काय द्रव्य वसु लेय हैं ॥११॥

ॐ ह्रीं विजयमेरुके दक्षिणदिश महाहिमवनपर सिद्धकूटसम्वंधी जिनालयस्थ श्रीजिनेन्द्रेभ्यो अर्घं० ॥

---

१ अग्निकोणमे. २ मालिवान गजदंत वायव्यदिग्सम्वन्धी. ३ सरोवर. ४ कमल।

विजय दक्षिण भरत सु आर्यमैं,
छहौं कालनिकी पलटनि जमैं ।
प्रथम दूजे तीजे भोग भू,
उत्तम मध्यम जघनि स्वयोग[1] भू ॥१६॥
काल चौथे करम सुभूमिकी ।
रीति प्रगटै जिनवृषहूमिकी ॥
प्रथम कुलकर जिन चक्रीशजी ।
होय हलि हरि प्रतिहरिधीशजी ॥१७॥
केवलीजिनमुख वृष जानिकैं ।
सुनत मुनिव्रत धरि हित मानिकैं ॥
ध्यान धरि करि कर्म सुनासिकैं ।
ठए पचमगति तजि आसकैं ॥१८॥

ॐ ह्रीं विजयमेरु-दक्षिणदिश भरतखण्ड छहखंडमण्डित छहौं कालकी पलटनिसहित श्रीजिनेन्द्रेभ्यो अर्घं० ॥

दोहा

भरतखण्ड जिन षट चतुक, भूत वर्त आगामि ।
नाम लेय पूजौं सदा, मन वच तन ध्यायामि ॥१९॥

पद्धडी छन्द

रत्नप्रभ जिनवर अमितनाथ ।
संभव अकलंक नमौं सु माथ ॥

---

१ भरतक्षेत्रमे छह कालके परिवर्तनसे १, २, ३ कालमे क्रमश उत्तम, मध्यम व जघन्य भोगभूमि होती है तथा ४, ५, ६ कालोमे कर्मभूमि होती है।

जिनचन्द स्वामि जिनराज देव ।
वर देव सुभंकर करैं सेव ॥१॥
जिन तत्त्व-नाथ सुन्दर पुनीत ।
वर जानि पुरंदर अति विनीत ॥
जगस्वामि नाथ फुनि देवदत्त ।
वासवदत्त धारैं धर्म सत्त ।२॥
जिन श्रेयस जिनवर विश्व रूप ।
तप-इन्द्र तेज प्रतिबोध भूप ॥
सिद्धारथ संयम अमल येन ।
देवेन्द्र प्रवर वा विश्व एन ॥
जिन मेघनन्द सर्वज्ञ अंत ।
वंदौं अतीत जिनवर महन्त ॥

ॐ ह्रीं अतीतजिनेन्द्रेभ्यो अर्घं० ।

जोगीरासा

जिन युगादि सिद्धान्त महेसर परमारथ वा समुद्धर ।
जिन भूदर आर्जव उद्योतर अनय जान अप्रकंपर ॥
पदमस्वामि अर पद्मनंदिजिन प्रयकर वर सुकृतजी ।
भद्रेस्वर मुनिचन्द्र पंचमुष्ट रु त्रिमुष्ट गोगिक जी ॥

दोहा—

अगणनाथ[1] रसवेगि जिन, और जानि ब्रह्मेन्द्र ।
इन्द्रदत्त जिनपति नमूं वर्तमान जैनेन्द्र ॥

ॐ ह्रीं वर्तमान जिनेन्द्रेभ्यो अर्घं० ॥

---

१ अग्निनाथ ।

जोगीरासा

सिद्धनाथ सम्यक् गुण वंदौं वर जिनेन्द्र संपनजी ।
सर्वस्वामि मुनिनाथ वशिष्टर अपरनाथ जगधनिजी ॥
ब्रह्मशांति अर पर्वनाथ आकामुक ध्यान सुनाथं ।
श्रेष्ठ कल्पजिन संवर स्वस्थिर आनद रविप्रभ आथं ॥
चन्द्रप्रभ उत्तमप्रभु कर्ण रु जिन सुकर्म आमाय ।
पार्श्वनाथ शाश्वत जिनस्वामी वंदौं मस्तक नाय ॥
हौंनहार[1] ए च्चवजिनविंशति पूरब भरत बखाना ।
जल चंदन आदिक वसुविधिसौं पूजौं जिन शिवथाना ॥

दोहा—

विजयमेरु उत्तर दिशा, नीलाचल अभिराम ।
केशरि द्रह अलि कीर्तिगृह, सिद्धकूट जिनधाम ॥

ॐ ह्रीं विजयमेरु उत्तरदिशा, नीलाचलपर सिद्धकूटस्थ श्रीजिनेन्द्रेभ्यो अर्घं ॥

सोरठा —

रुक्मिगिर जिनधाम, विजयमेरु उत्तर दिशा ।
महापुंडरिक नाम, बुधिदेवी गृह जिन यजौं ॥

ॐ ह्रीं विजयमेरु उत्तरदिश रुक्मिगिरि-सिद्धकूटस्थ श्रीजिनेन्द्रेभ्यो अर्घं० ॥

शिखरी जिनवर धाम, मेरु विजय उत्तर दिशा ।
द्रह पुंडरी अलि धाम, लछमी जिनपति पद जजौं ॥

१ होनेवाले ।

ॐ ह्रीं विजयमेरु उत्तरदिश शिखरीगिरि-सिद्धकूटस्थ श्रीजिने-न्द्रेभ्यो अर्घं० ॥

दोहा—

रम्यक हैरनवत[1] विषैं, भोगभूमि द्वय दैन।
मध्यम जघन्य सु जानियें, चारणमुनि गमनेन ॥

ॐ ह्रीं नीलाचल रुक्मिपर्वतमध्य रम्यकक्षेत्र मध्यमभोगभूमि रुक्मिशिखरी बीचि जघन्यभोगभूमि आकाशगामी मुनिगण विहार करतं, श्रीजिनेन्द्रेभ्यो अर्घं० ॥

विजयमेरु उत्तरदिशा, ऐरावत छविधेन।
मध्य विषे वैताढ्यगिरि, जिनगृह पूज रचंत ॥

ॐ ह्रीं विजयमेरुतैं उत्तरदिश ऐरावतक्षेत्रमध्य विजयार्द्धगिरि पर सिद्धकूटस्थ श्रीजिनेन्द्रेभ्यो अर्घं० ॥

ऐरावत वर क्षेत्रमें, आरजखण्ड पुनीत।
तहाँ कालकी फिरनि है, षटभेदें जिन रीत ॥

ॐ ह्रीं विजयमेरु तैं उत्तर ऐरावतक्षेत्र षट्खण्डमण्डित छहोंकाल पलटनियुत श्रीजिनेभ्यो अर्घं० ॥

भूत जिनेश्वर वर्तमा[2] जिन भाविजिन नाम।
पूजत मन वचकायतैं, करौं प्रीति वसु जाम[3] ॥

जोगीरासा

वज्रस्वामि अरु उदयदत्त पुनि, सूर्यस्वामि पुरुषोत्तम।
सरनस्वामि अवबोधन विक्रम, निर्घटक वर उत्तम ॥

---

१ हैरण्यवतक्षेत्र २ वर्तमान ३ आठों पहर।

देव हरिन्द्र पवित्रे रतिजिन और निर्वान सुररजी ।
धर्महेत वा जान चतुर्मुख सुकृतेन्द्र यज सुरजी ॥
तीर्थंकर श्रुत-अंबु विमलदित[1] देवप्रभ धरनेन्द्रं ।
सत् तीरथ उदयानद स्वामी सर्वारथ जिनचन्द्रं ॥
क्षेत्रस्वामित् जिनवर कहिये हरिशचन्द्र अंतिमजी ।
भूतजिनेश्वर ऐरावतके धातखण्ड उत्तमजी ॥
ॐ ह्रीं भूतचतुर्विंशतिजिनेन्द्रेभ्यो अर्घं० ॥

दोहा–

वर्तमान गिरि विजयतैं, उत्तर ऐरावत्त ।
चवविंशति जिनराजके, नाम सुनौ भवि सत्त[2] ॥

पद्धडी–छंद व त्रोटक

आ पश्चिम जिन फुनि पुष्पदत्त, अरहंत सुचारित वर दिपंत ।
सिद्धानदनंग सु पद्मकूर, फुनि उदयनाभि जिनवर अनूप ॥
रुक्मेन्द्र कृपालि ह प्रोष्टिलक, सिद्धेश्वर अमृत-इन्द्रऽलकं ।
स्वामिन भनिलग जिन सर्वारथ, जिननंद केसहरि करि स्वारथ ॥
अघक्षायक वर शांतिक महान, फुनि नंदस्वामि जिन ज्ञानवान ।
श्रीकुंदपार्श्वजिन रोचननं, वंदौं चतुर्विंशति पूजननं ॥
श्रीवर्तमान जा क्षेत्रजिनं, हम सेवैं हरषत रात दिनं ।
ॐ ह्रीं वर्तमान चतुर्विंशतिजिनेन्द्रेभ्यो अर्घं० ॥

दोहा—

होनहार भगवान ए, तिनके नाम विशाल ।
सुनौ भव्य जिय लाय मन, छूटै जग जंजाल ॥

१ विमलादित्य. २ सत्य ।

त्रोटक–पद्धडी मिश्रित

जय वीरजिनं जय विजयप्रभं, सत्यप्रभ चारु मृगेन्द्रविभं।
चिंतामणि और अशोकदेव, द्विमृगेन्द्र रु उपवासक विसेव॥
प्रभ पद्मचन्द्र वा बोधकेन्द्र, चिंता हम उत्साहक जिनेन्द्र।
आया सिव देवल नारकाय, अर अरघ और नागेन्द्रनाथ॥
नीलोत्पल अरु अप्रकंप देव, फुनि पुरहित[1] भिदक जिन स्वमेव।
श्रीपार्श्वनाथ निर्वाच जान, अंतिम वैरोषिक स्वामि आन॥

दोहा—

हौंनहार वंदौं सुजिन, पूजौं धरि मन चाव।
जयवन्ते जग होहु प्रभु, आनन्दकारन भाव॥
ॐ ह्रीं भविष्यचतुर्विंशतिजिनेभ्यो अर्घं० ॥

गीता छन्द—

धातकीखंड द्वीप पूरब विजयमेरु सुहावनौ।
ईशान विदिशामैं सुगिरिकी धातकीतरु पावनौ॥
काय पृथ्वी[2] जिन बखाना, मूलशाखा मणिमयी।
फल पत्र फूलसु अति विराजै, देखतै अघ नासई॥

दोहा—

जा तरु चव शाखानि मधि, एक शाख जिनधाम।
शत वसु अधिके बिम्बजिन, पूजौं आठौं जाम॥
ॐ ह्रीं विजयमेरुतै ईशानकोण धातकीवृक्षसम्बन्धी सिद्धकूटस्थ श्रीजिनेन्द्रेभ्यो अर्घं० ॥

---

१ पुरोहित २ पृथ्वीकायिक।

गीता छन्द—

धातखंड गिरि विजय पूरब तास नैरित कूनमैं ।
तरु मूल जड़ शाखा विराजै फल जु पत्तर सूनमैं ॥
वज्रमइ अरु काय पृथ्वी रतन जिम दुतिवन्त जी ।
चव शाख मधि इक शाख जिनग्रह पूजिहौं हरषन्त जी ॥

ॐ ह्रीं धातकीखण्डपूर्वमेरु नैऋत्यकोण शाल्मलीवृक्षसम्बंधी-सिद्धकूटस्थ श्रीजिनेन्द्रेभ्यो अर्घं० ॥

जोगीरासा—

विजयमेरुतैं पूरबदिशमैं सीता सरिता जानौं ।
निषधाचलतै निकसि उदधिमैं मिली सु निर्मल पानौं ॥
दक्षिण उत्तर जुग तट जाके वसु वक्षार अनूपा ।
तिन शिखरनि परि श्रीजिनमन्दिर पूजहूं जिन भूपा ॥

ॐ ह्रीं विजयमेरुतैं पूर्व सीतानदी पूर्वसमुद्रगामिनी जाके तट-विषैं दक्षिण उत्तर चारि चारि वक्षारगिरिपर सिद्धकूटसम्बन्धी श्री-जिनेन्द्रेभ्यो अर्घं० ॥

विजयमेरुतैं पूरब सरिता सीता दक्षिण तटमैं ।
चव वक्षार जु तीन विभंगा तामधि वसु शुभ ठटमैं ॥
षट्खड मंडित देश विराजै रूपाचलमधि सोहै ।
वसु गिरि पर वसु श्रीजिनमन्दिर पूजत त्रय जग मोहै ॥

ॐ ह्रीं विजयमेरुतै पूर्व सीतानदीके दक्षिण तट चव वक्षार विभंगानदी वसुदेशमध्य वसु विजयार्द्धगिरि पर सिद्धकूटस्थ श्रीजिने-न्द्रेभ्यो अर्घं० ॥

विजयमेरुतै पूरब सरिता नदी जु सीता जानौं।
ता उत्तर तट तीन विभंगा चव वक्षार सु मानौं ॥
तिनमधि वसु शुभ देश विराजै तामधि रूपाचल है।
तिनपर वसु जिनगेह अनूपम पूजत ही शिवथल है ॥

ॐ ह्रीं विजयमेरुतैं पूर्व सीतानदी ताके उत्तरकोणमैं चव वक्षार तीन विभंगानदी मध्य वसु देश रूपाचलमंडित वसु जिनगेह सम्बंधी श्रीजिनेभ्यो अर्घं० ॥

अडिल्ल—

विजयमेरुतैं पूरबदिश सीता वहै।
दक्षिण उत्तर षोडश देशन वृष लहै ॥
सदा काल चौथेकी रीति जहां चलै।
तीर्थंकर चक्री हरि प्रतिहरि हलि[1] रलै ॥
मुनि आर्जा श्रावक सुश्राविका संघ रहै।
मुनिव्रत गृहव्रत समकित पुन भविजन गहै ॥
सजातक जिनस्वामि स्वयंप्रभदेवजी।
विहरमान तीर्थंकर यज कर सेवजी ॥

ॐ ह्रीं विजयमेरुतै पूरबदिश सीतानदीके दक्षिण उत्तर युगतट-विषै षोडशदेश षोडशरूपाचल वसुवक्षार षट्विभंगानदी अनेक रचना पूर्वविदेह तहां श्रीसंजातक स्वयंप्रभ तीर्थंकर विहरमान श्रीजिनेभ्यो अर्घं० ॥

विजयमेरुतैं पूरब सीतानदि वही।
दक्षिण उत्तर तट सुकुण्ड दश दश सही ॥

१ बलभद्र।

कुंड कुंड प्रति कंचनगिर वर पांच जी ।
जोड़ शतक जिनगेह यजौं जिन सांचजी ॥

ॐ ह्रीं विजयमेरुतै पूर्वविदेहमध्य सीतानदीतटविषैं दक्षिण उत्तर ‌ह्रसकुण्ड, कुण्ड कुण्डप्रति पांच पांच कंचनगिरि सर्व एकशतक श्रीजिनगेह सम्बन्धी श्रीजिनेन्द्रेभ्यो अर्घं० ॥

दोहा—

विजयमेरु ईशान दिश, भोगभूमि उत्कृष्ट ।
वसैं जुगलिया करै सुख, चारणऋपि वह शिष्ट ॥

ॐ ह्रीं विजयमेरु ईशानदिश उत्कृष्ट भोगभूमि चारणऋषिविहरमान श्रीजिनेन्द्रेभ्यो अर्घ० ॥

जोगीरासा —

विजयमेरुसै पश्चिमदिशमै सीतोदा मन मोहै ।
नीलाचलतैं निकसि महाशुचि पश्चिमदधि[1] मिलि सोहै ॥
ता दक्षिणतट तीन विभंगा चव वक्षार विराजै ।
शिखरकूटश्री श्रीजिनमन्दिर पूजत हौं निज काजै ॥

ॐ ह्रीं विजयमेरुतै पश्चिमदिश सीतोदानदीतट दक्षिणदिश चार वक्षारगिरिपर सिद्धकूटसम्बन्धी श्रीजिनमन्दिरस्थ जिनेभ्यो अर्घं० ॥

विजयमेरुतै पश्चिमदिशमै सीतोदानदि वहती ।
ता उत्तरतट तीन विभंगा चववक्षार सुमहती ॥
तास शीशपर सिद्धकूट चव तिनमधि श्रीजिनगेह ।
वसु अधिकी प्रतिमा इकशत मैं पूजौं मनवच नेहा ॥

---

१ पश्चिम समुद्र ।

ॐ ह्रीं विजयमेरुतैं पश्चिमदिश सीतोदानदी पश्चिमसमुद्र-गामिनि तासु उत्तरतट तीन विभंगानदी चार वक्षारगिरिस्थ सिद्ध-कूटसम्बधी श्रीजिनमंदिरस्थ श्रीजिनेन्द्रेभ्यो अर्घं० ॥

विजयमेरुतैं पश्चिम ओर[१] सीतोदा सरिता है ।
ता दक्षिणतट देश आठ शुभ षटखंडी भरता[२] है ॥
रूपाचलमधि वसु शिखरनि पर सिद्धकूट अति नीको ।
जिनगृह जिनप्रतिमा वसुविधिसौं पूजौं रुचि रमनीको ॥

ॐ ह्रीं विजयमेरुतैं पश्चिमदिश सीतोदानदीके दक्षिणतट तीन विभंगा चार वक्षारगिरिमध्य वसु देश रूपाचलमण्डित शिखरपर सिद्धकूटस्थ वसुजिनगेहस्थित श्रीजिनेन्द्रेभ्यो अर्घं० ॥

विजयमेरुके पश्चिमदिशमैं सीतोदादधि ताई ।
वहै सुनिर्मल उत्तर तटमैं वसुदेशनिमैं भाई ॥
षट्खंड शोभित रूपाचलमधि शिखरकूट वसु थाई ।
वसु जिनमंदिर श्रीजिन पूजौं वसुविधि अंग नमाई ॥

ॐ ह्रीं विजयमेरुके पश्चिमदिश सीतोदानदी–उत्तरतट तीन विभंगा नदी चार वक्षारगिरि तिनमध्य आठ देश रूपाचलमण्डित श्रीजिनेभ्यो अर्घं० ॥

विजयमेरुतैं पश्चिमदिशमैं सीतोदा सरिता जी ।
तट दक्षिण उत्तर देशनिमैं षोडश नृप धरता जी ॥
महाविदेह क्षेत्रमें शिवका मारग सदा रहाई ।
मुनि श्रावक समकित व्रत धारैं चौथा काल बताई ॥

---

१ ओर, तरफ. २ भरतक्षेत्र ।

तीर्थंकर स्वामी केवलयुत विहरमान जुगप्रभुजी ।
ऋषभानन अनंतवीरजजी समवसरनधर विभुजी ॥
बारहसभा जीव पोषैं जो धर्मामृतकरि भाई ।
तिनके चरणकमल नित पूजौं वसुविधि शीश नमाई ॥

ॐ ह्रीं विजयमेरुतैं पश्चिमदिश षोडशविदेहक्षेत्रनिमध्य ऋषभानन अनंतवीर्य तीर्थंकर विहरमान धर्मामृत वर्षावते चौथे कालकी प्रवृत्ति मोक्षमार्ग चलावते श्रीजिनेभ्यो अर्घं० ॥

गीता छन्द—

विजयमेरु विदेह पश्चिम मध्य सीतोदा वहै ।
ता कुंड दश दश उभय तटमैं पांच पण[1] कंचन पहै ॥
इक इक जिनालय बिंब इक इक रतनमय अति दुतिवतन ।
सब एक शतक जिनेन्द्र पूजौं हरप धरि मन करि जतन ॥

ॐ ह्रीं विजयमेरुतैं सीतोदानदीतट दश दश कुंड कुंड प्रति पांच पांच कंचनगिरि तिनपर एक एक प्रतिमासहित जिनालय सब एक शतक श्रीजिनेन्द्रेभ्यो अर्घं० ॥

दोहा—

विजयमेरु नैऋत्यकुन[2], उत्तम भोग सुभूमि ।
वांछित सुख आरज[3] करैं, मुनि चारण विहरूमि[4] ॥

ॐ ह्रीं विजयमेरुतैं नैऋत्यकोण उत्कृष्ट भोगभूमि चारणऋषि-विहारयुत श्रीजिनेभ्यो अर्घं० ॥

अडिल्ल—

मेरु विजय जिनगेह और गजदन्तजी ।
कुल रूपाचल वक्षारे तरु संत जी ॥

१ पांच २ कोण. ३ आर्य. ४ विहार करते है ।

षोडश चव षट् चौंतिस षोडश जुग गिनौ ।
अठहत्तरि जिनगेह जजौं श्रीजी जिनौ ॥

ॐ ह्रीं विजयमेरु सम्बन्धी अठहत्तर जिनगेहस्थ श्रीजिनेभ्यो अर्घं० ॥

दोहा—

विजयमेरुको आदि दै वसु सत्तरि जिनगेह ।
आरति करि गुणकीर्तन, स्वल्पबुद्धि धरि नेह ॥

पद्धड़ी छन्द (जयमाल)

जय विजयमेरु षोडश जिनाल[1], गजदन्त चारि अति दिपत भाल ।
षट कुलगिरिपै जिनगेह जान, जय दोय वृक्षपर भवन मान ॥
षोडश वक्षारतनैं जु शीश, रूपाचल चौंतिस जिन गिरीश ।
वसु सत्तरि जिनवर गेह शोभ, वंदैं सुर खग नर मुनि अछोभ[2] ॥
इक गृह प्रति जिनवर बिम्ब राज, वसु अधिक एकसौ अति विराज ।
पद्मासन रत्नमई महान, शतधनुष पांचसै तुंग मान ॥
वर प्रातिहार्य वसु सहित देव, सुरपति पूजैं बहु करैं सेव ।
तुम भक्ति लाय अति हर्षवन्त, थुति करें जिनेश्वर कृपावन्त ॥
तुम केवलज्ञान धरौ जिनेश, तुम लोकालोक विलोकितेश ।
वृष[3] करि जगतैं भविजीव तार, हम शरण गही तुम नाम धार ॥

दोहा—

विजयमेरु सम्बंधि है, अठहत्तर जिनगेह ।
जयमालै[4] पढ़िहै सुनै, शिवसुख लहै अतेह[5] ॥

---

१ जिनालय. २ क्षोभरहित, शांत. ३ धर्म ४ जयमाला को. ५ अतीव, अत्यंत ।

ॐ ह्रीं विजयमेरुसम्बंधि अठहत्तर जिनालयस्थ श्रीजिनेन्द्रेभ्यो महार्घं० ।

। इति विजयमेरुसम्बंधी अठहत्तर जिन पूजा ॥

卐

अथ अचलमेरु पूजा प्रारभ्यते ।

दोहा—

दीप धातकीखंडमैं, पश्चिम अचल सु नाम ।
ता सम्बंधी जैनगृह थापन करि अभिराम ॥
चैत्यालय सत्तरि वसू, मनमैं सुमरन धार ।
आठ अधिक शत एक इक जिनगृह प्रतिमा सार ॥

ॐ ह्रीं धातकीखंड-पश्चिम अचलमेरुसम्बंधी अठहत्तर जिनगृहे श्रीजिनेन्द्राः अत्रावतरावतर संवौषट् ।

ॐ ह्रीं धातकीखड-पश्चिम अचलमेरुसम्बन्धी अठहत्तर जिनगृहे श्रीजिनेन्द्राः अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः ।

ॐ ह्रीं धातकीखंड-पश्चिम अचलमेरुसम्बन्धी अठहत्तर जिनगृहे श्रीजिनेन्द्राः अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

अथाष्टकं ।

भुजंगप्रयात—

महामिष्ट अति इष्ट वर स्वच्छ शीतल ।
सु ले कुंभ जल धार दे जिन चरन तल ॥
दिपै धातकीखंड पश्चिम अचलगिर ।
यजौं जैनगेहे जु वसु अंग नयकर[1] ॥

---

१ नमाकर ।

ॐ ह्रीं धातकीखण्ड-पश्चिम अचलमेरुसम्बन्धी अठहत्तर जिन-गृहे श्रीजिनेन्द्रेभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपा० ॥

चन्दन घिसौं सिष्ट कपूर मिलकै ।
यजौं चरण जिनके भवाताप दलकै ॥
दिपै धातकीखंड० ॥ चंदनं० ॥

समानं सुमौक्तं मनो[1] चंद किरनं ।
महा श्वेत अक्षत धरौं पुंज चरनं ॥
दिपै धातकीखंड० ॥ अक्षतं० ॥

गुलाबं चमेली जुही केवरा जी ।
महागंधतैं अलि करैं ध्वनि यजौंजी ॥
दिपै धातकीखंड० ॥ पुष्प० ॥

छहौं रस बने नेत्र मन नासिका जी ।
महा इष्ट विंजन यजौं आस काजी[2] ॥
दिपै धातकीखंड० ॥ नैवेद्यं० ॥

महा मोहतम जो वसै अंतवरजो[3] ।
यजौं दीपसौं तासुके नाशकरजी ॥
दिपै धातकीखंड० ॥ दीपं० ॥

अगर आदिकौ श्रेष्ठ चूरन अगनिमैं ।
सु खेकै जिनागे[4] सु निजसुख मगन मैं ॥
दिपै धातकीखंड० ॥ धूपं० ॥

---

१ मानो. २ लिए. ३ अतरमे. ४ जिन + आगे ।

महामिष्ट[1] सुष्ट[2] सुगंधं रसीले[3] ।
भरीले सुफल लेय पूजौं शिवै[4] ले ॥
दिपै धातकीखंड० ॥ फलं० ॥
अठौं द्रव्य मिलवाय करि अर्घ नीका[5] ।
यजौं श्रीजिनाधीश जगदीश ठीका ॥
दिपै धातकीखंड० ॥ अर्घं ॥

अथ प्रत्येक पूजा ।

ढाल—बीजानी सेठानी

गिर अचलसुजी दीप धातकीखड मैं,
पश्चिम दिशजी सुवरणमय अति सोहनौं ।
तुंग[6] सहस[7] सुजी चौरासी जोजन कह्यौ,
वन चार सुजी भद्रसाल नंदन भनौं ॥ १ ॥
सौमनस सुजी पांडुकवन चौथौ कह्यौ,
ता वनके जी विदिसामैं चव सिल[8] दिपै ।
सुंदर अतिजी देखि महापातक[9] खिपै,
तीर्थंकरजी होत न्हवन यातैं यजौं ॥ २ ॥

ॐ ह्रीं अचलमेरु के पांडुकवन—विदिसामैं चारशिला जिन जन्म न्हवनतैं पवित्र पूजनीक श्रीजिनेन्द्रेभ्यो अर्घं० ॥

त्रोटक—छन्द

पांडुकवन चारि दिसा चहुँतर, पूरब दक्षिण पश्चिम उत्तर ।
जिनगेह यजौं वसु अग नयं, प्रतिमा दर्शन राखौं मुदयं[10] ॥ ३ ॥

---

१ महामधुर २ सुन्दर. ३ रसपूर्ण ४ मोक्ष ५ अच्छा. ६ ऊँचा. ७ हजार. ८ शिला. ९ महापाप. १० प्रसन्न ।

ॐ ह्रीं अचलमेरुके पांडुकवन चारदिशि चारजिनगृहस्थ श्री जिनेन्द्रेभ्यो अर्घं० ॥

गिरि अचल महारमणीक कहा, सौमनस महा चहुँदिश जु लहा।
वन चारि जिनालय पूज करा, वसुविधिनै वसु अग नाय धरा ॥ ४ ॥

ॐ ह्रीं अचलमेरुसम्बंधी सौमनसवन चारदिशि चारजिनगृहस्थ श्रीजिनेभ्यो अर्घं० ॥

नदनवन चारि दिसा वरनी,
तहं[1] चारि जिनालय अघ—हरनी[2]।
जिन विम्ब शतक वसु[3] इक प्रति मह,
कर जोड़ यजौं ह्यां[4] तज हर ग्रह[5] ॥ ५ ॥

ॐ ह्रीं अचलमेरु सम्बंधी नंदनवन--चारदिशि जिनगृहस्थित श्रीजिनेभ्यो अर्घं० ॥

वन भद्रसाल अति सोभसनौ,
ता वनके चारि दिसा रमनौं।
जिनगेह विराज अनादि निधन,
पूजौं वसुविधिसौं जय देव जिन ॥ ६ ॥

ॐ ह्रीं अचलमेरु सम्बंधी नंदनवन-चारदिशि चारजिनगृहस्थित श्रीजिनेभ्यो अर्घं० ॥

सवैया—३१

दीप धातकी जु खंड अचलमेरु जहं प्रचंड,
मूलभाग पश्चिमंड गजदन्त जानियै।

१ वहा २ पापनाशक ३ एकसौ आठ. ४ यहा. ५ पाप, कषाय।

सौमनस नाम सार अग्निकोण है उदार,
नैरितकोण हार विद्युत्प्रभ आनियै ॥
माल्यवान वाइकोण[1] नाम गंधमादनोन,
विदिसा इसान[2] जोन चव ये वखानियै ।
शिखरकूट श्रीगेह राजत सु प्रतिमेह[3],
यज वसुविधि नेह हिये सुख मानियै ॥ ७ ॥

ॐ ह्रीं धातकीखडद्वीप पश्चिमभाग अचलमेरुसम्बंधी चार गजदन्त सौमनस विद्युत्प्रभमाल्यवान गंधमादन अग्नि नैऋत्य वायव्य ईशान विदिशा तथा सिद्धकूटस्थ श्रीजिनेन्द्रेभ्यो अर्घं० ॥

सुन्दरी—छन्द —

दिश दक्षिण गिरि अचल वखानियै ।
निषध कुल गिरि सीस प्रमाणियै ॥
गेह जिनको दियै जु सार जू ।
देवि धृत पूजत अघ टार जू ॥ ८ ॥

ॐ ह्रीं अचलमेरु-दक्षिण ओर निषिद्धगिरि पर सिद्धकूटस्थ श्रीजिनेभ्यो अर्घं० ॥

धातकीखंड अचल सुगिरि भला ।
तासु दक्षिण हरि क्षेत्तर रला ॥
भोग भूमि मध्यम वरतै सदा ।
ऋषि सुचारण विचरत यज तदा ॥ ९ ॥

ॐ ह्रीं अचलमेरुतैं दक्षिण निषिद्ध महाहिमवनगिरि मध्य हरि क्षेत्र मध्यम भोगभूमि शाश्वती चारणऋषि विहार करते श्रीजिनेभ्यो अर्घं० ॥

१ वायव्य. २ ईशान ३ प्रतिमा ।

अचलतैं दक्षिण दिश जानियै ।
महा हिम वन शीश प्रमानियै ॥
गेह श्रीजिनका सोहै जहां,
पूजिहौं वसु विधिसौं मैं यहां ॥ १० ॥

ॐ ह्रीं अचलमेरुतैं दक्षिणदिशि महाहिमवनगिरि पर सिद्धकूटस्थ श्रीजिनेन्द्रेभ्यो अर्घं० ॥

गिरि अचलतैं दक्षिण ओरजी ।
क्षेत्र हिमवत सोहै जोरजी ॥
जघनि भोगकी रीति सदा रहै ।
रिषि मुनी चारण विचरत जहै ॥ ११ ॥

ॐ ह्रीं अचलमेरुतैं दक्षिणदिशि महाहिमवन हिमवनगिरि मध्य हैमवत क्षेत्र जघन्य भोगभूमि रचना चारणऋषि विहार करते श्री जिनेन्द्रेभ्यो अर्घं० ॥

मेरु अचल दक्षिणदिश सोहिये ।
गिरि सु हिमवन कंचन मोहिये ॥
तासु शिखर जिनेश्वर धाम है ।
पूजत वसुविधिसौं अभिराम है ॥ १२ ॥

ॐ ह्रीं अचलमेरुतैं दक्षिणदिशि हिमवनगिरि पर सिद्धकूटस्थ श्रीजिनेन्द्रेभ्यो अर्घं० ॥

अचलतै दक्षिणदिश भरत है ।
छहौं खंड करि अति ही लसत है ॥
मध्य विजयारध गिरि शीशपै ।
गेह जिनकौं पूजत ईश पैं ॥ १३ ॥

ॐ ह्रीं अचलमेरुतैं दक्षिणदिशि भरतमध्य विजयार्द्ध पर सिद्ध-कूटस्थ श्रीजिनेभ्यो अर्घं० ॥

भरतमैं आरजखंड सोहनौं ।
रीति कालन की षट् जोहनौं ॥
प्रथम दुतिय तृतिय मैं भोगभू ।
तूर्य कर्मतती अतियोग भू ॥ १४ ॥
तीर्थ चक्री हलि हरि प्रतिहरी ।
काम नारद रौद्र रउख जरी ॥
मोक्ष मारग चलत जबै जहां ।
केवली वृष उपदेशैं तहां ॥ १५ ॥
धारि भविजन मुनिव्रत शिव लहै ।
वा अनुव्रततैं दिवगति गहै ॥
षट् चतुक तीर्थंकर हो गये ।
होनहार जु वरतैं अग नये ॥ १६ ॥

ॐ ह्रीं अचलमेरुतैं दक्षिणदिशि भरतक्षेत्र अनेक रचना षट्काल रीति पलटनि सम्बंधी श्रीजिनेभ्यो अर्घं० ॥

दोहा—

भूत भविष्यति वर्त[1] जिन द्वै[2] सत्तर जिन देव ।
नाम लेइ पूजन करौं, धारि हृदयमैं सेव ॥ १७ ॥

छन्द–पद्धरी—

जय वृषभ जिनं प्रियमित्र जान, अरु शांतिनाथ फुनि सुमतिनाथ ।
अतीत और अतिव्यक्त देव, फुनि कलासेन अरु क्षत्रजिनेव ॥ १ ॥

---

१ वर्तमानकाल सम्बन्धी. २ वहत्तर (७२).

जै जै प्रबुद्ध प्रियजिन नमामि, सौधर्म तमोदीपक सुनामि ।
जिन वज्र बुद्ध जु प्रबंधनाथ, अतीत सुमुख पद नमैं माथ ॥ २ ॥
पल्लोपम और अकोप देव, जे निष्ठत अरु मृगनाभसेव ।
देवेन्द्र पद स्थित परथितीय, अंतिम शिवनाथ रु सुरनतीय ॥ ३ ॥

ॐ ह्रीं भूतजिनेभ्यो अर्घं० ॥

जय विश्वचन्द्र फुनि कपिलदेव, फुनि वृषभ और प्रियतेज सेव ।
जय प्रशम और विषमांगनाथ, चारित्रनाथ सुर नमै मांथ ॥ ४ ॥
जय प्रभादित्य अरु मंजकेश, अरु जानि पीतवाशशि जिनेश ।
मृगाधिप जिनवर दयानाथ, जय सहसभुजा नावैं सुमाथ ॥ ५ ॥
जिनसिंहरेथ नहनाथ स्वामि, वाहूजिन अरु श्रीमाल नामि ।
आयोग और आयोगनाथ कामरिपु अरंभ जिन नेमनाथ ॥ ६ ॥
जिन नेमनाथ अरु गर्भग्यान, एकार्जित अन्तम नमैं मान ॥

ॐ ह्रीं वर्तमानजिनेभ्यो अर्घं० ॥

जय रक्तकेश अरु चक्रहस्त, कृतनाथ रु परमेश्वर प्रशस्त ।
जय जिनमिमूर्त्ति अरु मुक्तिकांत, निःकेश प्रशस्तक अतिविभांत ॥ ७ ॥
निरहार अमूर्त द्विज सुनाथ, जिनश्रेय योग अरु अहणनाथ ।
जिनदेवनाथ अरु दयाधिरूक, अरु पुष्पनाथ नरनाथ इक्क ॥ ८ ॥
प्रतिमूल और नागेन्द्रदेव, तपोधिक दशआनन निसेव ।
अरु जानि वरदशा नीकराज, सत्त्विक पूजों मैं मिलि समाज ॥९॥

ॐ ह्रीं भावीजिनाय अर्घं० ॥

दोहा—

अचलमेरु पश्चिम दिशा, नीलाचल अभिराम ।
तासु शिखर जिनगेह लखि, पूजों आठौं जाम[१] ॥१॥

१ पहर ।

ॐ ह्रीं अचलमेरुतैं उत्तरदिशि नीलाचलपर सिद्धकूटसम्बन्धी श्री-जिनेभ्यो अर्घं० ॥

अचलमेरु उत्तर तरफ, रम्यकक्षेत्र सु सोह ।
भोगभूमि मध्यम सुथिर, चारणऋषि वह जोह ॥२॥

ॐ ह्रीं अचलमेरुतैं उत्तरदिशि रम्यकक्षेत्र-मध्यम भोगभूमि चारणऋषिविहारकरते-श्रीजिनेन्द्रेभ्यो अर्घं० ॥

उत्तरदिश है अचलतैं, रुक्मिगिरि सिधगेह[1] ।
पूजौं वसुविधि शुद्ध हुव[2], मनमैं धारि सनेह ॥३॥

ॐ ह्रीं अचलमेरुतैं उत्तरदिश रुक्मिगिरिपर सिद्धकूटसम्बन्धी श्रीजिनेन्द्रेभ्यो अर्घं० ॥

अचल सुगिरि उत्तरदिशा, हैरन्यक्षेत्र[3] अनूप ।
जघनि[4] रीति वरतै सदा, भोगभूमि सुखकूप ॥४॥

ॐ ह्रीं अचलमेरुतैं उत्तरदिशि हैरण्यवतक्षेत्र-जघन्य भोगभूमि-सम्बन्धी श्रीजिनेभ्यो अर्घं० ॥

शिखरीगिरि उत्तरदिशा, अचलमेरुतैं जान ।
सिद्धकूट ताके शिखर, पूजौं मन वच आन ॥५॥

ॐ ह्रीं अचलमेरुतै उत्तरदिशि शिखरीगिरि पर सिद्धकूटस्थ श्री-जिनेभ्यो अर्घं० ॥

अचलमेरु उत्तरदिशा, ऐरावत शुभ खेत ।
विजयारधगिरि मध्य जिन, धाम पूज सुख लेत ॥६॥

ॐ ह्रीं अचलमेरुतै उत्तरदिशि ऐरावत-विजयार्द्धगिरिपर सिद्ध-कूटस्थितश्रीजिनेन्द्रेभ्यो अर्घं० ॥

---

१ सिद्धकूट. २ होकर ३ हैरण्यवतक्षेत्र ४ जघन्य ।

ऐरावत षट् खण्ड जुत, आरजखंड अनूप ।
छहों कालकी फिरनि[1] तहं[2], चव उपजैं जिनभूप ॥७॥
तीर्थंकर उपदेश वृष[3], भव्यनि प्रति करवाइ ।
शिवमारग चलि है जबै, पूजौं श्रीजिनराइ ॥८॥
भूत भविष्यत वर्तते[4], तीर्थंकर जिनदेव ।
नाम मात्र सुमरन करौं, भव भव चाहूँ सेव ॥९॥

गीता छन्द---

सुमेरु जिनकृत जान श्रीकृष्ण जिन प्रशस्त जुग जानियैं ।
निर्दंभ सुकुलकर वर्द्धमानय अमृतदेव प्रमानियैं ॥
सम्बानन्दन वर कलाकर हरिनाथ अरु बहुस्वामिजी ।
जिन भार्गव 'अरु भद्रनाथ जु पर्वयोतन नाम जी ॥१॥
जिन विपोषित ब्रह्मचारण वर असाक्षक देव है ।
वर जानि चारित्रेश परणामिक सुशाश्वत नेव है ॥
निधिनाथ कौशिकनाथ वंदौं अन्त धर्मेश सही ।
मून जिनवर चतुर्विंशति पूजि मन वच सिर मही ॥२॥

ॐ ह्रीं मूनजिनेन्द्रेभ्यो अर्घं० ।

अडिल्ल छन्द

माधत जिन स्वामिन् वंदौं कर जोरिकैं ।
असमतेन्द्र वर अत्यानन्द निहोरिकैं ॥
पुष्पकोत्कुट अरु मडक जिनवर नमौं ।
जिन प्रहृस्त अरु मदनसिंघ अघकौं दमौं ॥३॥

१ पलटना. २ वहां. ३ धर्म. ४ वर्तमान ।

जिन रसीन्द्र अरु चन्द्रपार्श्व वर देव जी ।
अब्जबोध जनवल्लभ सुरगण सेव जी ॥
जानि विभूति कबहु विभूति जिन सोहिये ।
ककुवभास जिनवर जगजिय मन मोहिये ॥४॥
परमदेव देवसुवरण अरु हरिवास है ।
जिनप्रियमित्र सुजान धर्म जग आस है ॥
प्रियरित अरु नंदनाथ असनकायक यजौं ।
पर्वनाथ अरु पार्श्वनाथ मनमैं भजौं ॥५॥

दोहा—

चित्रहृदय अन्तिम प्रभू, वर्तमान चौबीस ।
पूजौं मन वच कायसौं, सेवा द्यो[1] जिन ईस ॥६॥
ॐ ह्रीं वर्तमानजिनेन्द्रेभ्यो अर्घं० ॥

जोगीरासा—

देवरु विंदवर सोसुमालकर पृथ्वीपति कुलरत्नं ।
धर्मनाथ अरु सौमवर्ण अरु अभिनन्दन किय यत्नं ॥
सर्वनाथ निःसुदृष्टायक अरिसिष्टायक सुधन्ना ।
सौमचन्द्र अरु छेतरनायक सादंतक धर मन्ना ॥७॥

पद्धडी छन्द—

जै जयति जिनोत्तम जोरि पाइ । निर्मितक्रन पारस जिय जथाइ ॥
जिनबोधलाभ बहु नंदस्वामि । बरदृष्टि स्वामि जगमैं विख्यामि ८॥
जिन ककुपनाभ वक्षेशनाथ । ए हौंनहार पद धरौं माथ ॥
ॐ ह्रीं भविष्यतकालसम्बन्धी जिनेन्द्रेभ्यो अर्घं० ॥

---

१ दो ।

अडिल्ल छंद—

अचलमेरुतै जानि दिशा ईशान जू।
उत्तरकुरुभो[1] कून धातकी आन जू॥
वज्र रतनमय शोभित पृथ्वीकाय जी।
शाख चार फल पत्तर[2] सून[3] सुहाय जी॥१॥
सिद्धकूट इक शाखापै शोभै जहां।
श्रीजिनदेवल बिंब विराजत है तहां॥
वसुशततै अधिके पद्मासन दुति धरै।
पूजत वसुविधि हरषित हू[4] ह्यां[5] अघ[6] टरै॥२॥

ॐ ह्रीं अचलमेरुतै ईशानदिशि धातकी वृक्ष पर सिद्धकूट जिनालयस्थित श्रीजिनेन्द्रेभ्यो अर्घं०॥

अचलमेरुतै नैरितदिशिमैं सोहियै।
सीतोदाके पश्चिमभाग सु मोहियै॥
कुरुतगिरि निषिधि समीप देवकुरु[7] भूलसै।
लता[8] धातृवर वृक्ष वेणु व्यन्तर बसै॥३॥
दक्षिणदिशकी डाल[9] जिनेश्वरधाम है।
मंगलद्रव्यनि जुत अति ही अभिराम है॥
बहु वृक्षन करि वेठित[10] रतनमई लसै।
पूजौं मस्तक नाइ[11] एन[12] देखत नसै॥४॥

ॐ ह्रीं अचलमेरुतै नैऋतकोण धातकीवृक्षपर सिद्धकूट जिनालयस्थित श्रीजिनेन्द्रेभ्यो अर्घं०॥

---

१ भूमि, भोगभूमि २ पत्र, पत्ते ३ प्रसून, पुष्प. ४ होकर ५ यहाँ ६ पाप. ७ भूमि ८ वेल ९ शाखा १० वेष्टित ११ नमाकर १२ पाप।

दोहा—

अचलमेरुतैं पूर्वदिश, षोडश क्षेत्र विदेह ।
षट् खड मंडित रीति जहं, चवथे की जानेह ।।१।।

कवित्त—

अचलमेरुतैं पूरबदिशमै सीतानदी बहै सुखखान ।
जाके दक्षिणतट वसु क्षेत्तर[1] चव वक्षार तीन नदि[2] जान ।।
सिद्धकूट वक्षार शीस पर श्रीजिनग्रह जिनबिंब सुहान ।
तिनकी पूजा वसुविधि करिकैं हाथ जोरि बहु आनन्दमान ।।२।।

ॐ ह्रीं अचलमेरुतैं पूर्वदिशि सीतानदीके दक्षिण तट चार वक्षार-गिरि पर सिद्धकूट-जिनालयस्थित श्रीजिनेन्द्रेभ्यो अर्घं० ।।

अचलमेरुतैं पूरबदिशमैं सीता नदी बहै सुखरास ।
दक्षिण तट वसु देश विराजै विजयारध सोहै मधि[3] जास ।
सिद्धकूट वसु गिरि पै राजै जिनग्रह जिनप्रतिमा लख तास ।
सुमरण संस्तुति करि तिनकी मै पूजौं अष्ट अंग नय[4] भास ।।३।।

ॐ ह्रीं अचलमेरुतैं पूर्वदिशि सीता नदी के दक्षिण तट वसु विदेह-क्षेत्रमध्यवैताढ्यगिरि पर सिद्धकूट-जिनालयस्थित श्रीजिनेन्द्रेभ्यो अर्घं० ।।

मेरु अचलतैं पूरब ओरै[5] सीता पूरब दधि[6] मिलियान ।
उत्तरतट वक्षारेगिरि चव तीन विभगा नदी प्रमान ।।
सिद्धकूट जिनमन्दिर राजै पूजौं मै हरषत उर आन ।
बिम्ब अधिक वसु शतक कूट प्रति रतनमई देखत दुख हान ।।४।।

१ क्षेत्र. २ नदी ३ मध्य. ४ नमाकर. ५ तरफ, ओर. ६ समुद्र ।

ॐ ह्रीं अचलमेरुतैं सीतानदी पूर्वदिश ताके उत्तर तट चव वक्षार तीन विभंगानदी-वक्षारगिरिपर सिद्धकूट जिनालयस्थित श्री-जिनेन्द्रेभ्यो अर्घं० ॥

अचलमेरुदिश पूरब जानौं सीता नदी सु अनुपम जोइ ।
उत्तर तट वसु देश अनूपम मधि विजियारध सिद्ध सु सोइ ॥
जिनमन्दिर, वसु राजैं जिनमैं रतनमई प्रतिमा अवलोइ ।
सुर सुरपति खगपति मुनि वंदित पूजत मैं सब अघकों खोइ ॥५॥

ॐ ह्रीं अचलमेरुतैं, पूर्वदिश सीता नदी उत्तर तट वसु देशमध्य विजयार्द्ध सिद्धकूट जिनालय सम्बन्धी श्रीजिनेभ्यो अर्घं० ॥

अचलमेरुतैं पश्चिमदिशमैं सीतोदा कालोदधि माह ।
मिली जु ताके दक्षिण तटमैं चव वक्षार तीन नदि जाह ॥
शिखर शीश श्रीजिनग्रह शोभैं मंगलद्रव्यनि जुत लखि काह ।
पूजौं वसुविधिसौं हरपित हुव मोक्ष नगरका आस धराह ॥६॥

ॐ ह्रीं अचलमेरुतैं पश्चिम सीतोदा तट दक्षिणदिशि वक्षार पर चार जिनमन्दिर सम्बन्धी श्रीजिनेन्द्रेभ्यो अर्घं० ॥

अचलमेरु पश्चिम सीतोदा बहै सु निर्मल सुख मिष्टान ।
दक्षिण तट वसु देश विदेहा मध्य विराजत गिरवर मान ॥
वसु शिखरनि परि वसु जिनमन्दिर रतनमई प्रतिमा असमान ।
धनुष पंचशत तुंग मान लखि वीतरागता होइ निदान ॥७॥

ॐ ह्रीं अचलमेरुतैं पश्चिम सीतोदा-दक्षिण तट वसु देश विदेह मध्य चार वक्षारगिरि पर चार जिनमन्दिर सम्बन्धी श्रीजिनेन्द्रेभ्यो अर्घं० ॥

अचलमेरु उत्तर सीतोदा तटसैं जाके देश विदेह ।
चव वक्षार विभंगा सरिता तीन कही शिखरनिपै एह ॥
सिद्धकूट चव श्री जिनमन्दिर पूजौं मन की लगन समेह[1] ।
सुर सुरपति खगपति नरपति मिलि पूजै ध्यावैं धारि सनेह ॥८॥

ॐ ह्रीं अचलमेरुतैं उत्तर सीतोदा-दक्षिणतट चार वक्षारगिरि पर सिद्धकूट जिनालय सम्बन्धी श्रीजिनेन्द्रेभ्यो अर्घं० ॥

अचलमेरुतैं पश्चिम दिशमै सीतोदा दधिमैं[2] मिल जाइ ।
ताके उत्तरतटमैं शोभै वसु विदेह मधि गिरवर ठाइ ॥
शिखर शीश सिधकूट विराजै श्रीजिनदेव तनें ग्रहवाइ ।
तिनकौं पूजौं वसुविधि करिकैं अष्ट अंग जुत मस्तक नाइ ॥९॥

ॐ ह्रीं अचलमेरुतैं पश्चिम सीतोदा के उत्तर तट वसु विदेह चार वक्षारगिरि पर सिद्धकूट जिनालयसम्बन्धी श्रीजिनेन्द्रेभ्यो अर्घं० ॥

सूरप्रभ विसालकीरतिप्रभ तीर्थंकर जुग[3] पूर्वविदेह ।
विहरमान केवल रवि कर जिनवृष उपदेश दियौ भवितेह ॥
पंचकल्यानक युत अतिसय करि मंडित गुण अनंत सुखगेह ।
तीन जगतपति पूजि जिनेश्वर मैं पूजौं मन वच तन नेह ॥१०॥

ॐ ह्रीं अचलमेरुतैं पूर्वविदेह,षोडशदेश मध्य सूरप्रभ, विशालकीर्तिसमवशरणस्थित श्रीजिनेन्द्रेभ्यो अर्घं० ॥

अचलमेरुतैं पश्चिमदिशमैं षोडश क्षेत्र कहे भगवान ।
सीतोदा दक्षिण उत्तर तट चवथे की वर रीति प्रमान ॥
तीर्थंश्वर वज्रधर जिनस्वामी चन्द्रानन चन्द्रानन[4] आन ।
पूजित तीन लोक कर स्वामी मैं पूजौं अति आनंद मान ॥११॥

---

१ सहित २ समुद्र ३ दो ४ चन्द्रके समान मुखवाले चन्द्रानन नामक तीर्थंकर ।

ॐ ह्रीं अचलमेरुतैं पश्चिमदिशि षोडशविदेहदेशमध्य वज्रधर, चन्द्रानन जिन समवशरणस्थित श्रीजिनेन्द्रेभ्यो अर्घं० ॥

अडिल्ल छन्द—

द्वीप धातकीखंड मेरु जुग वरनये ।
पूरव पश्चिम दिशमैं अति सोभा ठये ॥
दक्षिण दिश जुग भरत तथा उत्तरदिसा ।
ऐरावत जुग क्षेत्र मध्यगिरवर लसा ॥१॥

गीता छन्द—

जुग भरत वीचि जु अति सुन्दर नाम इष्वाकार जी ।
वर शिखर पै जिनगेह राजै विम्ब सोभाकार जी ॥
शुभ रतनमय धनु पंचशत तुंग पदम[1] आसन सोहनौं ।
त्रय पीठि[2] राजै वसु अधिकशत पूजि हौं मनमोहनौं ॥२॥

ॐ ह्रीं धातकीखंडद्वीप पूर्व पश्चिम विजय, अचलके दक्षिण-दिशि जुगभरतमध्य इष्वाकार पर्वत पर सिद्धकूट स्थित श्रीजिनेन्द्रे-भ्यो अर्घं० ॥

धातकीखंड पूर्व पश्चिम विजय अचल सुगिरि कहे ।
तासु उत्तर दिश ऐरावत जुगम छेत्तर[3] शुभ लहे ॥
तिन मध्य इष्वाकार पर्वत शिखर श्रीजिनगेह जी ।
तिस माँहि श्रीजिनराज राजै पूज्य वसु द्रव[4] लेह जी ॥३॥

ॐ ह्रीं धातकीखंडद्वीप पूर्व पश्चिम विजय अचलमेरुके उत्तर-दिशि जुग ऐरावतक्षेत्रमध्य इष्वाकारगिरि पर सिद्धकूट जिनालय-स्थित श्रीजिनेन्द्रेभ्यो अर्घं ॥

---

१ पद्मासन २ सिंहासन ३ क्षेत्र. ४ द्रव्य ।

कवित्त—

दीप धातकीखंड मनोहर जोजन लक्ष चारि विस्तार ।
पूरब पश्चिम दक्षिण उत्तर दिशि विदिसा जो क्षेत्र विचार ।।
जिन चैत्यालय भूमि कल्याणक केवलमुनिगण करै विहार ।
चार संघ जुत तीरथकरता[१] सबकौ नमुं निज मस्तक धार ।।

अथ-जयमाला

दोहा

अचलमेरु षोडश भवन, चव गजदंत जिनाय ।
षोडश वक्षारे सुजुग वृक्ष सु षट् कुल थाय ।।१।।
चौंतिस विजयारध विषै, जिनवर गेह दिपंत ।
जिनप्रतिमा तिनमै निरखि, वन्दौं पूज जयन्त ।।२।।

पद्धडी–छंद

जय दीप धातकीखंड जान, पश्चिम दिस गिरि शोभै प्रमान ।
जय अचल तुंग चव[२] असी लक्ष, चव वन ऊपरि ऊपरि प्रतक्ष ।।१।।
जय पांडुकवन चव दिश मझार, चव जिनग्रह राजै अति उदार ।
विदिसा चव सिल[३] जिन न्हवन पीठ, वर श्रेष्ठ इष्ट यातै सुदीठ ।।२।।
सौमनस जु नंदन भद्रसाल, चव चव दिश दिश चव चव जिनाल[४] ।
गजदन्त चार चव जिन सुगेह, षट् कुलगिरि पर षट् मन्दिरेह[५] ।।३।।
भरतैरावत मधि जुगम जान, गिरि विजयारध पर सिद्ध थान ।
जुग देवकुरूत्तर पर प्रसिद्ध, वर सिद्धकूट जो स्वयं सिद्ध ।।४।।

---

१ तीर्थकर्ता, तीर्थंकर २ ८४ लाख ३ शिला. ४ जिनालय.
५ मदिर ।

वक्षारगिरनिपै जिन सुगेह, षोडश जिन प्रतिमा सुन्दरेह[1] ।
बत्तीस मध्य देशनि मझार, विजयारध पर जिनग्रह उदार ॥५॥
अठहत्तरि जिनवर जोरि गेह, वसु अधिक शतक प्रति मंदिरेह ।
जय अष्ट सहस चवसै चौवीस, प्रतिमा वंदौ मन वचन सीस ॥६॥
जय रतनमई चहुं दिशि जिनाल, चंदनमाला मोती रसाल ।
त्रय पीठि विराजत रतन जोत, जिन प्रतिमा शोभै रवि उद्योत ॥७॥
पद्मासन पण सत[2] धनुष तुंग, मणिमई सिद्ध सम मनुनि अंग ।
जय कमलपत्र लोचन[3] सुहंत, मुख चन्द्रकिरणि सम जग मुहंत[4] ॥८॥
जय लच्छिन[5] विंजन सहित देव, लखि सम्यक्दर्शन होत सेव ।
जय सुर सुरपति खग आयनाय, पूजैं ध्यावैं वन्दैं जिनाय ॥९॥
जय भामंडल छवि रही पूर सुरवृष्टि करैं नभ[6] कुसुम[7] भूर[8] ।
सुर दुंदुभि वाजैं घोर सोर[9], जय छत्र चमर ढारैं सु ओर ॥१०॥
सिंहासन राजै जिन सुभूप, ढिगि[10] शोक हरत अशोक[11] रूप ।
जय जय जिनवाणी रही छाइ, अतिशय जुत राजै श्री जिनाय ॥११॥
जय तुम महिमा जगमै विख्यात, भवदधि तारे तुम भव्य जात ।
हम सरनैं आये दीनानाथ, तुम तार तार हम नवैं माथ ॥१२॥

दोहा

अचलमेरु जिनचैत्य की, पूजन करि जयमाल ।
पढैं सुनैं जे भावतैं, ते शिव पावैं हाल ॥१॥
महार्घं० ॥

१ सुन्दर. २ पांचसौ. ३ आंखे. ४ मुग्ध होता है. ५ लक्षण व्यंजन. ६ आकाशमें. ७ पुष्प ८ बहुत ९ शोर. १० पासमें ११ अशोकवृक्ष ।

कवित्त—

मंगल[1] अर्हंत सिद्ध साधु श्रुत चैत्य चैत्यालय जिनवृष जान।
नाम[2] थापना द्रव्य भाव खिति[3] काल छहौं अघकी कर हान॥
पूजन इनका पाठ जासमैं मंगलपाठ कह्यौ भगवान।
बाँचैं सुनैं भावसेती भवि जग सुख लहि पहुँचैं निर्वान॥१॥
बालकपनतैं पढ़ैं पाठ जो विद्या अधिकी लहैं निदान।
जात रूप कुल लावन[4] वपुमैं[5] रोग रहित संपति अधिकान॥
पुत्र पौत्र युवती वर लक्षण राजमान हुव[6] राज्य महान।
सुर सुरपति खग नरपति ह्वैकैं कर्म काटि पहुँचैं श्रेयान[7]॥२॥

(इत्याशीर्वादः)

॥ इति धातकीद्वीप पूजा सम्पूर्ण ॥

अथ पुष्करार्द्ध द्वीप पूजा प्रारभ्यते

अडिल्ल—

पुष्करार्द्ध वर दीप पूर्व मन्दिर[8] कहा।
वसु सत्तरि[9] जिनगेह तासु वंद्य शुभ लहा॥
श्रीजिनवरके बिम्ब रतनमय दुति[10] धरैं।
शक्तिहीन मैं आह्वानन इत[11] अघ हरैं॥१॥

---

१ नव प्रकार मंगल—(१) म, पाप गालयतीति मगलम्।
(२) मग, सुख—लातीति मगलम्॥

२ नाम, स्थापना, द्रव्य, भाव, क्षेत्र, काल की अपेक्षा छह प्रकार मंगल.
३ क्षेत्र ४ लावण्य—सुन्दरता. ५ शरीर मे. ६ होकर. ७ मुक्ति.
८ मन्दर नामक चतुर्थ मेरु ९ अठहत्तरि. १० कान्ति. ११ यहाँ।

ॐ ह्रीं पुष्करार्द्ध द्वीपके पूर्व मन्दिर मेरुसम्बन्धी अठहत्तर जिनालयाः अत्रावतरतावतरत संवौषट्, आह्वाननं ।

ॐ ह्रीं पुष्करार्द्ध द्वीपके पूर्व मन्दिर मेरुसम्बन्धी अठहत्तर जिनालयाः अत्र तिष्ठत तिष्ठत ठः ठः, स्थापनं ।

ॐ ह्रीं पुष्करार्द्ध द्वीपके पूर्व मन्दिर मेरुसम्बन्धी अठहत्तर जिनालयाः अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्, सन्निधीकरणं ॥

अथाष्टकं—चाल होली की

निगम नदी कुश[1] प्राशुक लीनौं कंचनभृंग भराय ।
मन वच तन तैं धार देत ही सकल कलंक नशाय ॥
साता द्यो मुझे श्रीजिनवर दीनदयाल ।
मन्दिर मेरु चतुर्थम शोभित पुष्करार्द्ध के माहि ॥
अर्द्ध क्षेत्र वसु सत्तरि जिनगृह पूजत ही अघ जाय ।
साता द्यो मुझे श्रीजिनवर दीनदयाल ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं पुष्करार्द्ध द्वीपके पूर्व मन्दिरमेरुसम्बन्धी अठहत्तर जिनालयेभ्यो जलं० ॥

हरि चन्दन जुत कदली[2] नन्दन कुंकुम संग घसाय ।
विघन ताप नाशनकूं कारण जजौं तिहारे पाय ॥
साता द्यो मुझे श्री० ॥२॥ चंदनं० ॥

पुण्यराशि तुम यश सम उज्वल तन्दुल शुद्ध मंगाय ।
अक्षय[3] सौख्य भोगन के कारण पुंज धरौं गुण गाय ॥
साता द्यो मुझे श्री० ॥३॥ अक्षतं० ॥

१ जल २ कर्पूर. ३ अक्षय ।

पुंडरीक[1] त्रनद्रुमकौं आदिक सुमन सुगंधित लाय ।
दर्पक मन्मथ[2] भंजन कारण जजौं चरण लवलाय ॥
साता द्यौ मुझै श्री० ॥४॥ पुष्पं०॥

घेवर बावर खाजे साजे ताजे तुरत मंगाय ।
क्षुधा वेदनी नाश करनकौं जजौं चरण उमगाय ॥
साता द्यौ मुझै श्री० ॥५॥ नैवेद्यं० ॥

कनकदीप नवनीत[3] पूरकर उज्वल ज्योति जगाय ।
तिमिर मोह नाशक तुमकौं लखि जजौं चरण हुलसाय ॥
साता द्यौ मुझै श्री० ॥६॥ दीपं० ॥

दशविधि गंध मंगाय मनोहर गुंजत अलिगण[4] आय ।
दशौं बंध जारनके कारण खेवौं तुम ढिगि लाय ॥
साता द्यौ मुझै श्री० ॥७॥ धूपं० ॥

सुरस वरन[5] रसना[6]-मन-भावन पावन[7] फल सु मंगाय ।
मोक्ष महाफल कारण पूजौं हे जिनवर तुम पांय[8] ॥
साता द्यौ मुझै श्री० ॥८॥ फलं० ॥

जल फल आदि साजि शुचि लीनौं आठौं द्रव्य मिलाय ।
अष्टम-क्षिति[9]के राज करनकौं जजौं अंग वसु नाय ॥
साता द्यौ मुझै श्री० ॥९॥ अर्घं० ॥

दोहा—

पुष्कराद्ध वर दीपमैं, जिनवरगेह महान ।
वंदन करि पूजा रचौं, श्रीजिनवर गुण खान ॥१॥

---

१ कमल २ कामदेव. ३ घृत. ४ भ्रमर-समूह ५ वर्ण-रंग. ६ जीभ. ७ पवित्र. ८ पैर. ९ मोक्ष ।

कवित्त—

जम्बूद्वीप एक लख जोजन लवणोदधि द्वै लख विस्तार ।
चारि लक्ष है दीप धातकी वसु[1] लख कालोदधि अवधार ॥
षोडश पुष्करदीप कह्यौ जिन तामधि मानुषोत्र[2] गिरिसार ।
अर्द्ध आठवसु दोनों दिशमै उनतिस सब पेतालिस धार ॥ २ ॥
पुष्करार्द्ध वर दीप तीसरो मानुष[3] परै नहीं उपजाय ।
पूरबदिश मैं मेरु चतुर्थम मंदिर नाम चतुर्थम थाय ॥
भद्रसाल नंदन सौमनस रु पांडुक चार सुवन शोभाय ।
वन वन प्रति चारौं दिश माही जिनवर गेह दिपै सुखदाय ॥ ३ ॥

दोहा—

पांडुकवन विदिसानिमैं, न्हवन पीठ सिल चार ।
जन्म होत सुरपति प्रभू, ले उत्सव करतार ॥ ४ ॥

ॐ ह्रीं मंदिर मेरुसम्बंधी पांडुकवन चव दिशानिमैं चव सिल जिन न्हवनतैं पवित्र पूज्य श्रीजिनेभ्यो अर्घं० ॥

पांडुकवन चव दिसनिमैं, पूरब दक्षिण ओर[4] ।
पश्चिम उत्तर जिनभवन, पूजौं मैं कर जोर ॥ ५ ॥

ॐ ह्रीं मंदिरमेरु सम्बंधी पांडुकवन चारदिश पूर्व दक्षिण पश्चिम उत्तर जिनगृहस्थित श्रीजिनेभ्यो अर्घं० ॥

वन सौमनस चहूं दिशा, चव जिनवर-आवास[5] ।
प्रतिमा पूजौं द्रव्यलै, धरि शिवपुरकी आस ॥ ६ ॥

ॐ ह्रीं सौमनसवन चारिदिशि चारि जिनालयसम्बंधी श्रीजिनेभ्यो अर्घं० ॥

---

१ आठ २ मानुषोत्तर पर्वत ३ मनुष्य ४ तरफ ५ जिनालय ।

नंदनवन अतिसोहनों, चहुं दिशि जिनवर भौन[1] ।
श्रीजिनवर पूजौं मुदित, मिटै जु आवागौन[2] ॥ ७ ॥

ॐ ह्रीं नंदनवन चारि दिश चार जिनालयसम्बंधी श्रीजिनेभ्यो अर्घं० ॥

भद्रसाल भूपर लसै, वन चव दिशा मनोज्ञ ।
दिश प्रति श्रीजिनगेह वर, पूजौं ह्यां शुभ योग ॥ ८ ॥

ॐ ह्रीं भद्रशालवन चारि दिश चार जिनालयसम्बंधी श्रीजिनेभ्यो अर्घं० ॥

अडिल्ल-छन्द—

मन्दरमेरु महान तास[3] विदिशा विखैं[4] ।
चव गजदन्त शिखर पर श्रीजिनगृह दिखैं ॥
श्रीजिनबिंब रतनमय पूजौं चावसौं ।
महा सौख्य[5]-करनार द्रव्य सुभावसौं ॥ ९ ॥

ॐ ह्रीं मन्दरमेरुसम्बंधी चार विदिशा विषैं चार गजदंत पर सिद्धकूटस्थित श्रीजिनेभ्यो अर्घं० ॥

त्रोटक-छन्द—

इह पुष्करार्द्ध वर दीप महा, पूरब दिश मंदिर मेरु लहा ।
गिरि दक्षिणमैं गिरि निषध रहा, जिनमंदिर श्रीजिनपूज चहा ॥१०॥

ॐ ह्रीं निषिद्धगिरि पर सिद्धकूटस्थित श्रीजिनेभ्यो अर्घं० ॥

ता ढिगि[6] गिरि दक्षिण ओर[7] वसै, हरिक्षेत्र मध्य भूभोग[8] लसै ।
चारण ऋषि विहरत ध्यान धरैं, तिन चरणनिकी हम पूज करैं ॥११॥

---

१ भवन २ आवागमन ३ उसकी. ४ मे ५ सुखकारी. ६ उसके पास. ७ तरफ. ८ मध्यम भोगभूमि ।

ॐ ह्रीं मंदिरमेरुतैं दक्षिणदिशि हरिक्षेत्र मध्यम भोगभूमि चारण ऋषि विहरमान श्रीजिनेन्द्रेभ्यो अर्घं० ॥

महहिमवन अर्जुनमय[1] निवसै, मदिरगिरितैं दक्षिण हुलसै ।
शिखरनि पर श्रीजिनगेह दिपै, पूजत वसु द्रव्यनि एन[2] नसै ॥१२॥

ॐ ह्रीं मंदिरमेरुतैं दक्षिणदिशि महाहिमवन पर्वतपर सिद्धकूटस्थित श्रीजिनेभ्यो अर्घं० ॥

मंदिरगिरितैं दक्षिण दिश उर[3], वर हिमवत क्षेत्तर[4] श्रेष्ठ जु वर ।
जह जघन्य भोगभू[5] रिषि विहरैं, हम पूजत श्रीजिन दोष हरैं ॥१३॥

ॐ ह्रीं मन्दरमेरुतै दक्षिणदिशि हैमवतक्षेत्र जघन्य भोगभूमि चारण ऋषि विहरमान श्रीजिनेभ्यो अर्घं० ॥

मन्दिरगिरितै दक्षिणकी तरफ ।
गिरि हिमवन हेममई स्वर इफ ॥
श्री सिद्धकूट जिनग्रह यज भवि ।
वसुविधितैं वसु अंग नय छित[6] अब ॥१४॥

ॐ ह्रीं मदिरमेरुतै दक्षिणतरफ हिमवनगिरि पर सिद्धकूट-जिनालयस्थ श्रीजिनेभ्यो अर्घं० ॥

मन्दिर गिरि अधिक रमन[7] जगमैं, दक्षिणदिश भरत लसै नगमैं ।
षट् खंड विभूषित मध्यगिरी, श्रीमंदिर पूजौं हर्ष धरी ॥१५॥

ॐ ह्रीं भरतमध्य विजयार्द्ध पर श्रीजिनमंदिरस्थित श्रीजिनेभ्यो अर्घं० ॥

आरजखंड बाल चतुर्थममैं,
जब तीर्थंकर प्रगटैं पहुमैं[8] ॥

---

१ चादीका २ पाप ३ तरफ ४ क्षेत्र ५ भोगभूमि. ६ भूमितक ७ सुन्दर. ८ उसमे ।

केवल लहिकैं बोधे[1] भवि[2] जिय,
शिवमारग चलतैं जिय सिध[3] हुय[4] ॥१६॥

ॐ ह्रीं भरतखंड तीर्थंकरेभ्यो अर्घं० ॥

दोहा—

द्वै-सत्तरि[5] त्रयकालके, तीर्थंकर भगवान ।
नाम लेय पूजौं अबै, मनबंछित सुख खान ॥१७॥

ॐ ह्रीं मन्दरगिरितैं दक्षिण भरतखण्डमध्य आर्यक्षेत्रमैं तीर्थंकरादि सत्पुरुष उपजैं श्रीजिनेभ्यो अर्घं० ॥

अथ भूत-जिन-नाम-(पद्धडी-छन्द)—

दमनेंद्र प्रभू अरु मूर्त्त स्वामि, जिन वीतराग स्वामिन विख्यामि ।
प्रलंबित पृथ्वीपति विख्यात, चारित्रनिधि. अपराजितात ॥ १ ॥
जिन बोधक बुद्ध सजग विमुक्त, प्रभु वीतासिक त्रिमुष्ट कुक्त ।
मुनिबोधक स्वामी तीर्थस्वामि, वर धर्म धीर्जधरनेश नामि ॥ २ ॥
श्रीप्रभ जिन और अनादिदेव, अनादिप्रभ सब तीर्थ एव ।
निरुपम कौमारिक अधिक श्रेष्ठ, श्रीजिन विहार प्रह जग वरेष्ठ ॥ ३ ॥
धरनेश्वर धरनीपति महान, अतं विकासनं सुजस खान ।
ये भूत जिनेश्वर भये सिद्ध, मैं यजौं तिनौंकी लहन रिद्धि ॥ ४ ॥

ॐ ह्रीं पुष्करार्द्धमन्दर मेरुतै दक्षिणदिशि भरतक्षेत्र आर्यखंड सम्बंधी अतीत चतुर्विंशतिजिनेन्द्रेभ्यो अर्घं० ॥

अथ वर्त्तमान-जिन-नाम—

जग इष्ट इष्ट सेवत जिनेश, फुनि जगन्नाथ जिनवर महेश ।
जय श्रीप्रभासस्वर स्वामिनाथ, भरतेश और दीर्घाननाथ ॥

१ सम्बोधे २ भव्यजीव ३ सिद्ध ४ हो जाते है ५ बहत्तर ।

विख्यात कीर्ति अवसान देव, जिनवर प्रबोध सुर करैं सेव ।
जय तपोनाथ पावक जिनेश, त्रिपुरेश्वर सौगत स्वामि एस ॥
भयवासव और मनोहरान, शुभ कर्मेश्वर अमलेंद्र जान ।
जय धर्मवास प्रसाद जिनेह, जय भाम्रगांक अकलक गिनेह ॥
स्फाटिक गजेन्द्र ध्यानज्ञ अशेप, पूजौं द्रव्यनितै जिन महेश ।
पुष्कर मंदिर नग दक्षिण दिशेह, जह भरतक्षेत्रमैं वर्ततेह ॥
जै धर्मतीर्थ करतार स्वाम, जयवंते होहु मैं नमौं नाम ॥

ॐ ह्रीं वर्तमानजिनेन्द्रेभ्यो अर्घं० ॥

अथ अनागत-जिन-नाम—

जज जय वसंतध्वज प्रथम जान, विजयत प्रियस्तंभताय भान ।
जय परमब्रह्म अवलिसपवाद, कमूमानद त्रिनय अनाद ॥ १ ॥
जिन विंदसेय परमातम प्रसग, भूमिन्द्र गोस्वामिन पूज्य लिंग ।
कल्यान प्रवासित मंडलेस, जय जय महा वसु उदयतेस ॥ २ ॥
जय दिव्य ज्योति जय जिन प्रबोध, अभयांक प्रमत धारै सुबोध ।
दस्कारकव्रत स्वामिन महान, निधिनाथ त्रिकर्मक ज्ञानवान ॥ ३ ॥
ये हौनहार जिनवर जगीश, पूजौं मन वच तन नाय शीस ॥

ॐ ह्रीं अनागतचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो अर्घं० ॥

दोहा—

उत्तर मन्दर मेरुतैं, नीलाचल गिरि जान ।
शिखर शीस श्रीगेह जिन, पूजौं वसुविधि मान ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं मंदिरमेरुतै नीलाचल पर सिद्धकूटसम्बंधी श्रीजिनेभ्यो अर्घं० ॥

सोरठा—

मंदिर उत्तर ओर, रम्यक वर शुभ क्षेत्र है ।
मध्य-भोगभू[1] जोर, मुनि रिषि[2] विहरत पूजहौं ॥ २ ॥

ॐ ह्रीं मंदिरमेरुतैं उत्तर रम्यकक्षेत्र मध्यम भोगभूमि चारण ऋषि विहरमान श्रीजिनेन्द्रेभ्यो अर्घं० ॥

मंदिरगिरि सोभेह, उत्तर रुक्मी शीश पर ।
जिनमंदिर पूजेह, वसुविधितैं[3] वसु[4] अंग नय[5] ॥ ३ ॥

ॐ ह्रीं मंदिर मेरुतैं उत्तरदिशि रुक्मी पर्वत पर सिद्धकूटसम्बंधी जिनेभ्यो अर्घं० ॥

गिरि उत्तर दिस जान, हैरन्यवत वर क्षेत्रमैं ।
वरतै जघन्य[6] भूमान, चारण ऋषि विचरत यजौं ॥ ४ ॥

ॐ ह्रीं मंदिरमेरुतैं उत्तरदिशि हैरण्यवतक्षेत्र-जघन्य भोगभूमि चारण ऋषि विहरमान-श्रीजिनेभ्यो अर्घं० ॥

उत्तर दिशा, प्रमान, मन्दरतै शिखरी गिरी ।
जिनवर निल[7] इक जान, पूजौं मन वच कायसौं ॥ ५ ॥

ॐ ह्रीं मंदिरमेरुतैं उत्तरदिशि शिखरी पर्वतपर सिद्धकूटस्थित श्री जिनेभ्यो अर्घं० ॥

मंदिर गिरितैं मान, उत्तर ऐरावत वहै ।
विजयारध जिन थान, पूजौं मस्तक नायकै ॥ ६ ॥

ॐ ह्रीं मंदिरमेरुतैं उत्तरदिशि ऐरावत क्षेत्र विजयारध पर सिद्ध कूटस्थित श्रीजिनेभ्यो अर्घं० ॥

---

१ मध्यम भोगभूमि २ ऋषि. ३ अष्टप्रकार से. ४ अष्ट अंग. ५ नमाकर ६ जघन्य भोगभूमि. ७ निलय—आलय—मन्दिर ।

ऐरावत षटखंड, मंडित काल छहौं फिरनि ॥
चवथेमैं मुनिमंड, धर्म चलै शिव मार्ग का ॥ ७ ॥

ॐ ह्रीं मंदिरमेरुतैं उत्तरदिशि ऐरावतक्षेत्र षट्खंड मडित आर्य क्षेत्रमध्य एकसौ त्रेसठि[1] पुरुष भवति--श्रीजिनेभ्यो अर्घं० ॥

तीर्थंकर भगवान, चक्री हरि प्रति हरि हली ।
उपजैं सत पुरुषान, नाम लेय पूजौं तिनैं ॥ ८ ॥
होगये हैं हौंनिहार, धर्मतीर्थ करता प्रभू ।
तिनके पद सुखकार, नाम कथन तिनका करूँ ॥ ९ ॥

ॐ ह्रीं भूत वर्तमान भविष्य काल सम्बंधी द्विसप्तति तीर्थंकर-ऐरावत क्षेत्रे श्रीजिनेभ्यो अर्घं० ॥

पद्धडी—छन्द—

जय कृत जिन जय उपदिष्टदेव, देवादित अस्थानक गिनेव ।
जय जय प्रचन्द्रवेणुक जिनद, जय भानभास सेवैं मुनिंद ॥ १ ॥
जय ब्रह्म ब्रह्मणज्ञांग नाम, अविरोधन वर, अपाप स्वाम ।
जय लोकोत्तर जय जलधि सोष, विद्योतन नाम सुमेरघोष ॥ २ ॥
भावनवत्सल जय जय जिनाल, जय देव तुषार भुवन रचाल ।
सुकामुक जय देवाधिदेव, जय अकारिम विंबक जिनेव ॥ ३ ॥
इह चवविंशति जिनराज देव, वर भूतैरावत जिन महेव ।
मै पूजौं वसुविधि लेइ द्रव्य, फुनि गावौ नावौ अंग सर्व ॥ ४ ॥

ॐ ह्रीं पुष्करार्द्ध मन्दिर मेरुतैं उत्तर-ऐरावत क्षेत्र-आर्यखंड सम्बंधी चतुर्विंशति भूत जिनेभ्यो अर्घं० ॥

१—१६३ ठीक नही जचा, या तो ६३ चाहिये अथवा १६६ होना ठीक है ।

दोहा—

वर्तमान जिन बीस चव, तिनके नाम सुनेह ।
जिन श्रुतकौं अवलोककैं, पूजौं धारि सनेह ॥ १ ।

पद्धड़ी--छन्द—

जय देवनिसामित अक्षवास, जय नग्न नग्नधिप ज्ञानभास ।
जय देवनष्ट्र पावेन्द्र धाम, जय स्वप्रवेद जय तपोधनाम ॥ १ ॥
जय पुष्पकेतु धार्मिक सुहेत, जय चन्द्रकेतु अनुरक्तजोत ।
जय वीतराग उद्योतदेव, जय तमोपेत मधुनाथ सेव ॥ २ ॥
मरुदेव और दम जिन वरिन्द, जय वृषभशिला तनवर मुनिन्द ।
जय विश्वनाथ माहेन्द्र नंद, जय तमोन्सि ब्रह्मध्वज जिनंद ॥ ३ ॥
इह चवविंशति जिनराज देव, मै भव भव पाऊं करूं सेव ।
वर पुष्कराद्धं मंदिर सुजान, उत्तर ऐरावत वर्तमान ॥ ४ ॥
पूजौं वसुविधिसौं हाथ जोर, मो मन तिष्ठौ करिहौं निहोर[1] ॥

ॐ ह्रीं मदिरमेरुतैं उत्तरदिशि ऐरावत क्षेत्र वर्तमान चतुर्विंशति जिनेभ्यो अर्घं० ॥

दोहा—

जिनवर जानि भविष्य ये, चवविंशति महाराज ।
नाम कथनकौं देखि अति करौं सु आतमकाज ॥ १ ॥

पद्धड़ी छन्द—

जय देव जसोधर सुकृतनाथ, जय अभयघोष निर्वाण माथ ।
जय व्रतवसि जय अतिराजदेव, जय अस्वनाथ अर्जुन जु सेव ॥२॥

१ अनुनय, विनय ।

जय तपश्चन्द्र सुसरीरकन्द, जय देव महेश्वर जिन सुखन्द ।
सुग्रीव जिनेश्वर दिठप्रहार, जय अम्बरीक कृम वनकुठार ॥३॥
जय देवातीत तुंवर महान, जय सर्वसाल प्रतिजात मान ।
जय देव जितेन्द्रिय तपादित्य, रत्नाकर अरु देवेश नित्य ॥४॥
जय लांछिन जिनवर भो दयाल, तुम भो प्रदेश जिन जगतपाल ।
ये हौंनहार चववीस जान, पूजौं हरपत आनन्द मान ॥५॥

ॐ ह्रीं जसोधरादि प्रदेशपर्यंत अनागत चतुर्विंशतिजिनेभ्यो अर्घं० ॥

जोगीरासा—

मन्दिरगिरितैं दिश ईशानमैं पुष्कर तरु शुभ जानौं ।
चारि साख मधि तीन साख पर व्यन्तरदेव ग्रहानौं ॥
जड अरु मूल वज्रमय सोहै फल पत्तर पृथ्वीमय ।
शिखरकूट श्रीजिनगृह प्रतिमा इक शाखा मन मोहय ॥१॥

ॐ ह्रीं पुष्करार्द्धद्वीप मध्य पूरब मन्दिरमेरुतैं ईशानदिशि पुष्कर-वृक्षपर सिद्धकूट श्रीजिनेभ्यो अर्घं० ॥

मन्दिरगिरितैं नैरितदिशमैं उत्तरकुरु भूमाही ।
सालमली वर वृक्ष अनूपम पृथवीमय दरसाही ॥
वज्ररतनमय शाखचार मधि एक शाख जिनराई ।
मन्दिरमांही बिम्ब रतन वर पूजौं मन हरषाई ॥२॥

ॐ ह्रीं मन्दिरमेरुतै नैऋत्यकोण—शाल्मलीवृक्षपर सिद्धकूट श्री-जिनेभ्यो अर्घं० ॥

गीता छंद

दीप पुष्कर पूर्वदिशमैं मेरुमन्दिर सोहनौं ।
ता पूर्व सीता नदी निर्मल बहै दक्षिण मोहनौं ॥

वक्षारगिरि चव नदिविभंगा तीन वसुविधि देसजी ।
ये शिखर गिरिपै धाम श्रीजिन पूजिहौं शुभ वेसजी ॥ ३ ॥

ॐ ह्रीं मंदिरमेरुतैं पूर्व सीतानदी-दक्षिणतट चव वक्षारगिरि तीन विभंगानदी मध्य वसु विदेहक्षेत्र शोभित गिरि पर सिद्धकूट-श्रीजिनेभ्यो अर्घं० ॥

देश षट्खंड सहित मधिमैं गिरि सुरूपाचल भला ।
सो सेत वरन अनेक रचनामय अनूपम दुति रला ।
ता शीश मन्दिर बिंब रतननि भरत वसु गिनती कही ।
मैं पूजि विधिसौं श्रीजिनेश्वर हरषतैं मस्तक मही ॥ ४ ॥

ॐ ह्रीं मंदिरमेरुतैं पूर्व सीतानदी-दक्षिणतट विषैं वसुविदेहक्षेत्र-मध्य रूपाचल शीशपर वसु जिनमदिर-श्रीजिनेभ्यो अर्घं० ॥

सीतानदी पूरब सुगिरितैं तटोत्तर चव गिरि महा ।
वक्षारपर श्रीजिनभवन बिंब रतनमय दुति भरि रहा ॥
वसु अधिक शत शुभ पदम आसन तुंग धनु पण सत सही ।
मैं मन वचन तन प्रीति लाकैं पूजिहौं सिर धरि मही ॥ ५ ॥

ॐ ह्रीं मंदिरमेरुतैं पूर्व सीतानदी-उत्तर चव वक्षारगिरि पर सिद्धकूट-श्रीजिनेभ्यो अर्घं० ॥

मदिरसुगिरितैं पूर्व सीता वहै उत्तर तट भली ।
वसु देशक्षेत्र विदेह मधि वैताढ्यगिरि वसु ही रली ॥
तिन सीस वसु जिनधाम राजै रतनबिंब जहां लसै ।
मैं पूज वसुविधितैं इहां मन वच तन करि सुख लसै ॥ ६ ॥

ॐ ह्रीं मंदिरगिरितैं पूर्व सीतानदी उत्तरतट वसुविदेह मध्य वसु रूपाचल पर सिद्धकूट श्रीजिनेन्द्रेभ्यो अर्घं० ॥

वसु क्षेत्र आरज दक्षिण तटमैं वसु उत्तर तट राजई ।
षोडश महापुरमैं सु चवथे कालको थिर साजई ॥
तीर्थंकर्ता विहर जिनवर ज्ञान रवि भवि बोधई ।
चन्द्रबाहु अरु जिन भुयंगम पूजिहौं मन सोधई ॥ ७ ॥

ॐ ह्रीं मन्दिरमेरुतै पूर्व सीतानदी–दक्षिण उत्तर दौनौं किनारे चव चव वक्षारगिरि तीन तीन विभगा नदी मध्य वसु वसु देश रूपाचल मध्य स्थित–तिन आर्यक्षेत्रमध्य क्षेत्रमैं चन्द्रबाहु–भुयंगम विहरमान तीर्थंकर समवशरण युत विद्यमान श्रीजिनेभ्यो अर्घं० ॥

सीता नदी दौनौं किनारैं कुंड दश दश जानही ।
कुंड प्रति पण[1] गिरि विराजै नाम कंचन आनही ॥
एक शत श्री कूट मैं जिनगेह अद्भुत राजई ।
मै पूजहौ वसु द्रव्य सेती होय सुख सब राजई ॥८॥

ॐ ह्रीं सीतानदी तट दक्षिण उत्तर दश दश कुंड, कुंड कुंड प्रति पांच पांच कंचनगिरी, सब एक शतक सिद्धकूट–श्री जिनेभ्यो अर्घं०॥

त्रोटक छन्द—

मंदिर गिरितैं पश्चिम दिश में, सीतोदा नदि दक्षिण हसमैं ।
चव वक्षारे गिरि जिनमंदिर वन्दौं पूजौं मानतैं आदरं[2] ॥९॥

ॐ ह्रीं मन्दिरमेरुतैं पश्चिमदिशि सीतोदानदी दक्षिण तट वक्षारे चव गिरि पर सिद्धकूट—श्रीजिनेभ्यो अर्घं० ॥

मन्दिरगिरि पश्चिम सीतोदा, दक्षिण तट मै वसु[3] देश सदा ।
वसु विजयारध वसु गेह जिना, हम पूजत ह्यां बहु सुक्ख मना ॥१०॥

ॐ ह्रीं मन्दिर गिरितैं पश्चिम दिश–सीतोदा नदी दक्षिण तट वसु विदेह क्षेत्र मध्यरूपाचल पर सिद्धकूट–जिनेभ्यो अर्घं० ॥

---

१ पाच. २ आदर. ३ आठ

मन्दिरगिरि उत्तरनदि तट मै, चव वक्षारे त्रय नदि रट मैं ।
गिरि पर जिनधाम विराजत है, पूजत हम पाप पखालत[1] हैं ॥११॥

ॐ ह्रीं मन्दिर गिरितैं पश्चिम विदेह सीतोदा नदी उत्तर तट चव वक्षार तीन विभंगा नदी गिरि पर सिद्धकूट-श्रीजिनेभ्यो अर्घं० ॥

मन्दिर गिरि पश्चिम और दिसा, सीतोदा नदि उत्तर हुलसा ।
वसु देश विदेह सुरूपाचल, जिनथान सु पूजौ हेत अमल[2] ॥१२॥

ॐ ह्रीं मन्दिरगिरितैं पश्चिम सीतोदानदी उत्तर तट वसु विदेह क्षेत्र मध्य रूपाचल पर सिद्धकूट-श्री जिनेन्द्रेभ्यो अर्घं० ॥

षट खण्ड मैं आरज क्षेत्र महा, चवथेकी रीति जहां सुरहा ।
शिवमारग राह सदा चलि है, तीर्थंकर मुनि केवल जुत है ॥१३॥
ईश्वर नेमीश्वर विहरजिनं, केवल लहिकैं बोधेय भनं ।
हम पूजत मस्तक नाय चरन. शिव जुग सुख पावत लहत सनं ॥१४॥

ॐ ह्रीं मन्दिरमेरुतै पश्चिम सीतोदानदी दक्षिण उत्तर तट षोडश विदेहक्षेत्र मध्य जुगक्षेत्र में ईश्वर नेमीश्वर तीर्थंकर विहरमान जिन भवन प्रति धर्म-उपदेश मोक्षमार्गकी सदा प्रवृत्ति श्रीजिनेभ्यो अर्घं०॥

मन्दिर गिरितैं पश्चिमदिश मैं, सीतोदा दक्षिण उत्तर मैं ।
तट दोनौं मैं विंशति कुंडन मै, शत इक कंचन पूज अखण्डन मैं ॥१५॥

ॐ ह्रीं मन्दिर मेरुतैं पश्चिम सीतोदा नदी के दोनौं किनारे दश दश कुंड पर पण पण कंचनगिरि-शत एक कंचनगिरि सिद्धकूट श्रीजिनेभ्यो अर्घं० ॥

---

१ धोते है. २ निर्मल होनेको ।

दोहा—

मन्दिरमेरु चतुर्थमा, कंचनमय अतिशोभ ।
जिनग्रह ता सम्बन्ध हैं, आरति[१] भणौं[२] अछोभ[३] ॥१॥

पद्धड़ी छंद—

ज जै जै जै जिनवर जिनन्द, तुम ध्यावत सुर नर खग मुनिंद ।
जै स्वयबुद्ध जग ईश देव, जें शिवमारग दरसाय भेव ॥१॥
जै देव अपुरब[४] मारतण्ड[५], तुम कीन ब्रह्मसुत[६] सहस खण्ड[७] ।
शिवतिय[८] मुख पंकज[९] विगसिचन्द.तुम दिपै अपूरब द्युति[१०] अमंद[११] ॥२॥
हम अरज इहै अवसर वसाय, तुम बुद्ध जगोत्तम सुजस थाय ।
वसु सत्तर[१२] जिनवर गेह थान, वरनत मन उद्धत कृपावान ॥३॥
षोडश जिनग्रह गिरिपति महान, चव हस्त दन्त चव गेह मान ।
षट कुलगिरि पर जुग वृक्ष मान, षोडश वक्षारे गिरि प्रमान ॥४॥
चवतीस जिनालय अति[१३] विभाति, विजयारधगिरि पर जग सुहात ।
ये वसु सत्तरि जिनगेह मान, कंचन रतननिमय जडित थान ॥५॥
जह मध्य सिंहासन शोभमान, वसु अधिक शतक प्रतिमा महान ।
जै मङ्गलद्रव्य धरे अनूप, घण्टा झालरि बाजत सुरूप ॥६॥
सुरपति सुरतिय[१४] मिलि अति हुलास, दर्शन करिकैं आनन्द जास ।
केई पूज करैं अति हर्ष धार, केई थुति[१५] कर वन्दैं अशुभ टार ॥७॥
केई नाम जपैं केई नृत्य ठान, केई साज बजावैं सुर[१६] मिठान[१७] ।
केई चारण दर्शन करि जिनेन्द्र, अति हर्षित लखि जिनमुख दिनेन्द्र[१८] ॥८॥

---

१ जयमाला गुणमाला. २ कहता हू. ३ क्षोभ रहित. ४ अपूर्व. ५ सूर्य. ६ कामदेव. ७ हजारो टुकडे—तहस नहस—सर्वनाश. ८ मुक्ति-स्त्री. ९ मुख-कमल. १० द्युति—कान्ति. ११ तेज. १२ अठत्तर १३ अत्यन्त शोभायमान. १४. देवागना. १५ स्तुति. १६ स्वर १७ मिठास. मधुरता १८ सूर्य ।

फिरि ध्यान धरैं समता अनाय, पूछक जन सबकौं वृष सुनाय ।
केई खग[1] खगनी आवैं जिनाल[2], दर्शन करि बहु थुति पढ़ैं माल ॥९॥

यौं मंगलगान अनन्द नन्द, जय जिनवर जयवन्ते अमन्द ।
यौं थुति नुति[3] करि मस्तक नवाय, निज निज थानककौं सहज जाय ॥१०॥

ज जिनवर अद्भुत थान जेह, तिनकी महिमा बुध[4] को[5] भनेह[6] ।
हम अल्पबुद्धि करि कहन जोइ, जिनभक्ति लाय कर अशुभ खोई ॥११॥

हे करुणासागर गुनगभीर, हम रक्ष रक्ष भवतैं जु धीर ।
इक अरज हमारी सुनौ देव, भव भव पाऊँ तुम चरन सेव ॥१२॥

घत्ता—

इह गुणगणमाला शिवसुखसाला परमरसाला मन धरई ।
सो नर सुख पावै पुण्य उपावै, अति शिव पावै सुख करई ॥१३॥

जयमालादि महार्घं० ॥

कवित्त—

मंगल अरहंत सिद्ध साधु श्रुत चैत्य चैत्यालय जिनवृष जान ।
नाम थापना द्रव्य भाव खित काल छहौं अघकी कर हान ॥
पूजन इनका पाठ जासमैं मंगलपाठ कह्यौ भगवान ।
वांचै सुनैं भावसेती भवि जग सुख लहि पहुँचै निर्वान ॥ १ ॥

बालकपनतैं पढ़ैं पाठ जो विद्या अधिकी लहै निदान ।
जात रूप कुल लावन वपुमैं रोग रहित संपति अधिकान ॥

---

१ विद्याधर–विद्याधरनी. २ जिनालय. ३ नमस्कार. ४ बुद्धिमान. ५ कौन. ६ कह सकता है ?

पुत्र पौत्र युवती वर लक्षण राजमान हुव राज्य महान।
सुर सुरपति खग नरपति ह्वैकैं कर्म काटि पहुंचै निर्वान॥२॥

(इत्याशीर्वादः)

॥ इति मन्दिरमेरु सम्बन्धी जिन पूजन-सम्पूर्ण ॥

卐

अथ पुष्करार्द्धद्वीप विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धी पूजा

कवित्त—

पुष्करार्द्ध वर द्वीप मनोहर पश्चिम विद्युन्माली मेरु।
पंचम गिरिराजा चव अस्सी सहस लक्ष तुंग कंचन ढेरु॥
वन चव षोडश गजदन्त चव षट कुल जुग तरु षोडश वक्षेरु।
विजयारध चौंतिस गिरि ऊपर जिनग्रह बिंब थापना केरु॥१

ॐ ह्रीं पुष्करार्द्धद्वीप-पश्चिमविद्युन्मालीमेरुसम्बन्धी षोडश दंत वृक्ष कुल वक्षार विजयार्द्ध पर अठहत्तर जिनग्रह [illegible] संवौषट्० ॥

ॐ ह्रीं पुष्करार्द्धद्वीप-पश्चिमविद्युन्मालीमेरु सम्बन्धी षोडश दंत वृक्ष कुल वक्षार विजयार्द्ध पर अठहत्तर जिनग्रह अत्र तिष्ठ ठः ठः स्थापनं० ॥

ॐ ह्रीं पुष्करार्द्धद्वीप-पश्चिमविद्युन्मालीमेरु सम्बन्धी षोडश दंत वृक्ष कुल वक्षार विजयार्द्ध पर अठहत्तर जिनग्रह अत्र मम हितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं० ॥

अथाष्टकं-जोगीरासा—

पदमद्रहकौ जल उत्तम लेकै कचनझारी भरिकैं ।
शीतल मिष्ट तिसा-हरि[1] निर्मल धार दे जिनपद हरिकैं ॥
विद्युन्मालीमेरु पंचमौं वसु सत्तरि[2] जिनगेहा[3] ।
ता सम्बन्धी प्रतिमा सब पूजौं मन वच तन करि नेहा ॥१॥

ॐ ह्रीं विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धी अठहत्तरिजिनगृह-जिनेन्द्रेभ्यो जलं० ॥१॥

मलियागर चन्दन शुभ लेकैं केशर संग घिसाऊं ।
भव आताप हरन जिन चरनन चरचि[4] महा सुख पाऊं ॥
विद्युन्माली०, ता सम्बन्धी० ॥ चन्दनं० ॥२॥

मुक्ताफल[5] सम तन्दुल सित[6] ले सुवरण थाल संजोऊ[7] ।
पुंज धरौं जिनवर पद आगै अक्षयपद अनुभोऊं[8] ॥
विद्युन्माली०, ता सम्बन्धी० ॥ अक्षतं० ॥३॥

जुही चमेली आदि सुगन्धित अलिगण तापै गुंजैं ।
काम बाण के नास करणकौं पूजौं निज सुख भुंजैं ॥
विद्युन्माली०, ता सम्बन्धी०, पुष्पं० ॥४॥

पूरी पापर लाडू फेणी घेवर आदिक चरु ले ।
जिनवरजी चरननि ढिगि धारौं रोग छुध्या[9] सब हरले ॥
विद्युन्माली०, ता सम्बन्धी०, नैवेद्यं० ॥५॥

---

१ तृषा हारक. २ अठहत्तर. ३ जिनालय । ४ पूजकर. ५ मोती. ६ श्वेत. ७ सजाऊँ. ८ अनुभव करू. ९ क्षुधा-भूख.

दीप रतनमय वा कपूर की वाती[1] प्रजुलित[2] आगैं।
आरति श्रीजिन की हरषित हुय कर अज्ञान तम भागैं॥
विद्युन्माली०, ता सम्बन्धी०, दीपं० ॥६॥

कृष्णागर आदिक दश विधि ले चूरण धूप अगनि मैं।
खेय सुगन्ध जिनेश्वर आगैं कर्म नसि आतम मगनमैं।
विद्युन्माली०, ता सम्बन्धी०, धूप० ॥७॥

मिष्ट पक्व अति गंध मनोहर नेत्र नास[3] मन प्यारे।
ऐसे फल जिन चरण चढ़ाऊं शिव फल तुरत ही धारे॥
विद्युन्माली०, ता सम्बन्धी०, फलं० ॥८॥

जल चन्दन अक्षत प्रसून[4] चरु दीप धूप फल नीके[5]।
अर्घ बनाइ जजौं चरननिकौं श्रीजिनवरजी जीके॥
विद्युन्माली०, ता सम्बन्धी०, अर्घं० ॥९॥

चाल बीजानी—

विद्युन्माली गिरिराजा अति सोहनौं।
पुष्करमैं जी पश्चिम दिशमैं मोहनौं॥
चवरासी[6] जी लख जोजन तुंग जिन कह्यौ।
वज्रमयी जी कनक वर्ण दुतिकौं लह्यौ॥
ता वन चवजी उपरा ऊपरि बनि रहे।
सु भद्रसाल जी नन्दन सौमनसा कहे॥
पांडुकवन जी चवथा मस्तक छाजई।
विदिसा दिशजी चव सिल[7] जिनपति न्हौंनई॥

१ वत्ती, ज्योत २ प्रज्वलित, सिलगाकर ३ नासिका—नाक। ४ पुष्प. ५ अच्छे ६ ८४ लाख योजन ऊचा. ७ शिला.

वर शुचि अति जी पूजत संस्तुति हूं करौं ।
करि मन शुचि जी पाप कलाप[1] सबै हरौं ॥

ॐ ह्रीं विद्युन्मालीके पांडुकवन-विदिशाविषैं चव शिला तीर्थ-करौंके न्हवनतैं पवित्र-श्रीजिनेन्द्रेभ्यो अर्घं० ॥

दोहा—

विद्युन्माली गिरि महा, पांडुकवन दिशि चार ।
चव जिनग्रह दिश दिश विषैं, पूजौं थिरता धार ॥

ॐ ह्रीं विद्युन्मालीमेरुके पांडुकवन पूर्व दक्षिण पश्चिम उत्तर दिश विषैं एक एक चैत्यालय-श्रीजिनेन्द्रेभ्यो अर्घं० ॥

सौमनसवन चारथौं दिशा, गिरिराजाके जान ।
चव श्रीजिनवर भवन लखि, पूजौं आनन्द मान ॥

ॐ ह्रीं सौमनसवन चव दिश चैत्यालय-श्रीजिनेन्द्रेभ्यो अर्घं० ॥

नन्दनवन गिरिराजके, दिश दिश इक जिनगेह ।
श्रीजिनवर प्रतिमा सुवर, पूजौं धारि सनेह ॥

ॐ ह्रीं नन्दनवनसम्बन्धी चव जिनचैत्यालय-जिनेन्द्रेभ्यो अर्घं० ॥

भद्रसालवन चहुँ दिशा, पूरब आदि दिशान ।
चव जिनवरके भवन वर, यजौं हरष उर आन ॥

ॐ ह्रीं भद्रशालवन जिनग्रह-श्रीजिनेन्द्रेभ्यो अर्घं० ॥

गिरिराजाके निकट ही, विदिशामैं गजदन्त ।
शिखर शीश चव जिन भवन, पूजौं पूजत सन्त ॥

ॐ ह्रीं गजदन्त चव शीशपर सिद्धकूट-श्रीजिनेन्द्रेभ्यो० ॥

---

१ पाप समूह ।

सुन्दरी छन्द —

विद्युन्मालो गिरि पण[1] राजई, दिश दक्षिण गिरि कुणवर छाजई ।
निषध पर सिद्धकूट श्रीग्रह पूजि जिनवरजा मनव अर्हं ।।

ॐ ह्रीं निषिद्धपर सिद्धकूट-जिनालय-श्रीजिनेन्द्रेभ्यो अर्घं० ।

गिरि निकट हरिक्षेत्रविषैं जहां, मध्य भोगसुभूमि रही तहां ।
रिषि[2] सुचारण करत विहार जू, पूजि वसुविधि भवदधि तार जू ।।

ॐ ह्रीं हरिक्षेत्रविषैं चारणऋषि विहार सहित श्रीजिनेन्द्रेभ्यो अर्घं० ।।

गिरि सु दक्षिण महहिमवत[3] भला, शीशपर श्रीजिनग्रह रला ।
रतनमय पूजत सुरराजजी, हम यहां पूजत सुख साजजी ।।

ॐ ह्रीं महाहिमवनपर सिद्धकूट-श्रीजिनेन्द्रेभ्यो अर्घं० ।

गिरि सुराज दक्षिण दिश ओरजी, क्षेत्रहिमवत जघनि[4] भू जोर जी ।
जुगल जुगलनिका वर वास जो, रिषि सु चारण विंहरत कास[5] जो ।।

ॐ ह्रीं हैमवत क्षेत्र विषैं चारणऋषि विहार सहित श्रीजिनेन्द्रेभ्यो अर्घं० ।।

गिरि सु दक्षिण दिशमै जानिये, नाम हिमवन कंचन मानिये ।
शीश पर श्रीजिनवर धाम है, पूजिहौं अति ही अभिराम है ।।

ॐ ह्रीं हिमवन गिरिपर सिद्धकूट-श्रीजिनेन्द्रेभ्यो अर्घं० ।।

गिरि दक्षिण दिश भरत लसै तहां, मध्यगिरि विजयारध है जहां ।
शीश श्री जिनवर कौ धाम है, पूजि वसु विधि सौं अभिराम है ।।

---

१ पाचवा २ चारण ऋषि. ३ महाहिमवन पर्वत ४ जघन्य भोगभूमि.
५ आकाश.

ॐ ह्रीं भरतमध्य विजयार्द्ध पर सिद्धकूट-श्रीजिनेन्द्रेभ्यो अर्घं० ॥

षट खण्ड मैं आरज क्षेत्र जी, काल षटकी पलटनि रहत जी ।
जानि चवथे में जिनदेव जी, तीर्थंकर भासुर निति सेवजी ॥
हुव चतुर्विंशति महाराज जी, करैं शिवमारग परकास जी ।
केवली श्रुत मुनिगण संघ रहै, धर्म की वधवारी जग लहै ॥

ॐ ह्रीं दक्षिणदिश भरतक्षेत्र आर्यखण्ड चतुर्विंशति तीन् काल सम्बन्धी श्री जिनेभ्यो अर्घं० ॥

दोहा—

हो गये[1] वरतैं[2] हौंन[3] जो, तीर्थंकर जिनराज ।
नाम लेय पूजौं जिन्हैं, सुनौं भविक निजकाज ॥

पद्धड़ी--छन्द्—

जय पद्मचन्द्र रतनांगदेव, अयोगीक सर्वारथ सु सेव ।
जय कृपिननाथ हरिभद्र स्वाम, जय देव गणाधिप जग विख्याम ॥
जय परत्रिक जय ब्रह्मनाथ, जय देव मुनीन्द्र सु नमैं माथ ।
जय दीपकराज रिषी जिनेश, जय देव विशाल जु जग महेश ॥
जय अनिंदित रवि सु स्वामि जान, जय सोमदत्त जय स्वामिमान ।
जय मोक्षनाथ जिन अभ्रभाव, धनुषांग रोमांचक शिव सुहाव ॥
जय मुक्तिनाथ परसिद्ध देव, जय देव जिनेश्वरांत सेव ।
जय देव अतीत सुजानि भव्य, पूजौं वसु द्रव्यतैं धनि जितव्य ॥

ॐ ह्रीं अतीतजिनेन्द्रेभ्यो अर्घं० ॥

१ अतीत. २ वर्त्तमान. ३ भविष्य.

दोहा—

वर्तमान चौवीस जिन, सुर मुनिगण नित सेव ।
तिनि जिनवर के नाम के, जपै लहैं सुख देव ॥

पद्धड़ी छन्द—

जय पद्मप्रभ सुप्रभावदेव, बलनाथ सुयोगेश्वर विशेव ।
जय सूक्ष्मांग अरु बलातीत, जय जिन म्रगाँक अघ करि विनीत ॥
जय देव कलम्बिक परित्याग, जय जय निषेध परिहार लाग ।
जय जय जिनेन्द्र जिन पापहार, जय सुस्वामिन क्रमकौं पहार ॥
जय मुक्तिवर अप्रसिकदेव, जय नंदी तट जयं मेलिषेव ।
जय जय सुजयत रु मलहसिंघ, जय अक्षधर देवंधर अलंघ ॥
जय प्रयक्षक अगमिक सुदेव, विनीत रतानन्द करह सेव ।
इह चतुर्विंशति जिनराज सार, भव भव पाऊ तुम चरन चार ॥

ॐ ह्रीं पद्मप्रभादि रतानंद पर्यंत चतुर्विंशति वर्तमान जिनेभ्यो अर्घं ॥

पद्धड़ी छंद—

परभावक विनतेंइ सु जय जय, सुभाविक दिनकर जिन जय जय ।
अगस्तेज पौरवप्रभु जय जय, धनदत्त जिनदत्त तीर्थ सु जय जय ॥
पार्श्वनाथ मुनिसिंह जु जय जय, जिन आस्तिक्य भवानीक जय जय ।
प्रभु नृपनाथ नरायण जय जय, प्रशमौकः जिनभूपति जय जय ॥
सुद्रष्टर भवभीर सु जय जय, नदनाथ मार्गप्रभु जय जय ।
सुव सुव इन्द्र परावस जय जय, वनवासन भरतेस सु जय जय ॥
हौंनहार तीर्थेश्वर जय जय, पूजौं गावौं गुनगन जय जय ।

ताफल सुर-शिव होइ सु जय जय, सेवक विनय करंत नमि जय जय ॥

ॐ ह्रीं अनागत प्रभावकादि भरतेश पर्यंत चतुर्विंशतिजिनेभ्यो अर्घं० ॥

दोहा—

विद्युन्माली मेरुतैं, उत्तर ओरैं[1] जान ।
नीलाचल गिरि-शीस जिनग्रह पूजौं चित आन ॥

ॐ ह्रीं विद्युन्माली मेरुतैं उत्तर-नीलाचलगिरि पर सिद्धकूट-श्रीजिनेभ्यो अर्घं ॥

उत्तरदिशि गिरिराज के, रम्यकवन शुभ खेत[2] ।
मध्यम भोग सु भूमिकी, रीति रहै रिषि हेत ॥

ॐ ह्रीं विद्युन्माली मेरुतैं उत्तर दिशि रम्यकक्षेत्र-मध्यमभोग-भूमि चारणऋषि विहरमान श्रीजिनेभ्यो अर्घं० ॥

गिरि उत्तर रुक्मी शिखर, जिनवर गेह उतंग ।
पूजौं वसुविधि अग नय, पाऊं मुक्ति अभंग[3] ॥

ॐ ह्रीं विद्युन्माली मेरुतैं उत्तरदिशि रुक्मि शिखर पर सिद्धकूट-श्रीजिनेभ्यो अर्घं० ॥

उत्तरदिश हैरन्यवत, क्षेत्र जघनि भू-भोग ।
मुनि रिषि चारण विहरतैं; पूजौं तजि मन सोग ॥

ॐ ह्रीं विद्युन्माली मेरुतैं उत्तरदिशि हैरन्यवतक्षेत्र जघन्य भोग-भूमि चारणऋषि विहरमान श्रीजिनेभ्यो अर्घं० ॥

---

१ तरफ. २ क्षेत्र. ३ शाश्वती.

उत्तर शिखरी कुलगिरी, शिखर जु श्रीजिनधाम ।
पूजौं मन वच लायकैं, त्याग जगत के काम ॥

ॐ ह्रीं विद्युन्माली मेरुतैं उत्तरदिशि शिखरी पर्वत पर सिद्धकूट श्रीजिनेभ्यो अर्घं० ॥

उत्तरगिरितैं जानिये, ऐरावत वर क्षेत[1] ।
मध्य विराजै विजयगिर, पूजौं जिनग्रह सेत[2] ॥

ॐ ह्रीं ऐरावतक्षेत्र मध्य विजयार्द्धगिरि पर सिद्धकूट श्रीजिनेभ्यो अर्घं० ॥

छहौं खण्ड आरज[3] विषैं, चवथे[4] मैं जिनराज ।
चतुर्विंश, चक्री अरध[5], उपजै सब सुख साज ॥

हो गये[6] वरतत[7] भविष[8], जिनतीरथ भगवान ।
नाम कथन फुनि पूजिहूँ, सुनौ भविक दे कान ॥

पद्धडी–छन्द—

उपशांतिफला जिनवर जय जय, जिन पूर्वेश सौंदर्य जय जय ।
गौरिक त्रिविक्रमवर जय जय, जिन नरसिंह सु मृगवसु जय जय ॥

सौमेश्वर वा सुधाकर जय जय, जिन अपायमल निर्मल जय जय, ।
जिन विवाद संधिक जिन जय जय, जिनमातृक अश्वतेज सु जय जय ॥

विदांवर सु सुलोचन जय जय, देव मौननिधि जिनवर जय जय ।
पुंडरीक चित्रहगण जय जय, जिनमणिरिन्द्र सर्वकल जय जय ॥

---

१ क्षेत्र. २ श्वेत, धवल. अथवा सुन्दर, रम्य ३ आर्य. ४ चौथे काल मे. ५ अर्द्धचक्री–नारायण. ६ अतीत–भूत. ७ वर्तमाम. ८ भविष्यत–अनागत.

भूरिश्रव पुन्यांग सु जय जय, भूत जिनेश्वर नाम सु जय जय ।

ॐ ह्रीं भूतजिनेभ्यो अर्घं० ॥

जय गंगेय नल वासुदेव, जय भीम दयाधिक करैं सेव ।
जय जय सुभद्र स्वामिय रसाल, जय हनक नंदघोषक विशाल ॥

रुभभीत सुजिनवर वज्रनाभ, संतोष धर्म फणीसुराभ ।
जिम वीरचन्द्र मेघा अनीक, जय स्वच्छ कोपक्षय वंदनीक ॥

जय जय अकाम जिनधर्म धाम, जिन सूक्तसेन छेमांग स्वाम ।
जय दयानाथ की तप विख्यात, शुभ जिन अंतिम जगमें सुहात ॥

ॐ ह्रीं वर्तमान जिनेभ्यो अर्घं० ॥

त्रोटक–छन्द

अदोषक जिनवर वृषभनयं, जय विनयनंद मुनिभार तपं ।
जय इन्द्रक चन्द्रक केतभजं, ध्वजदित्यरु जिन वसु बोधजसं ॥
जय मुक्तिगतं जिन मुक्तिलयं, जय धर्मबोध देवांगनयं ।
मारकसू जीवन जीवहितं औमय सु यसोधर सुजसकृतं ॥

जय गोतम मुनि विधि बोधधरं, जय प्रबोधक दानीकवरं ।
जय सदानीक चारित्रवरं, जय सदानंद वेदार्थ धरं ॥
जय सुधानीक ज्योतिर्भुवनं, सूरारघ जिनवर अन्तमनं ॥

ॐ ह्रीं विद्युन्माली मेरुतैं उत्तर ऐरावत क्षेत्र सम्बंधी अनागत जिनेभ्यो अर्घं० ॥

अडिल्ल—

विद्युन्माली पुष्कर पश्चिम दिश लसै ।
ता गिरि दिश ईशान पुष्क[1] तरु अति हसै ॥

१ पुष्करतरु

भोगभूमि उत्कृष्ट तासु कौनौं[1] कह्यौ ।
बहु वृक्षनितैं वेढि[2] काय[3] पृथिवी लह्यौ ॥
मूल शाख अर जड वर मणिरतननि मई ।
फूल पत्र फल शोभित चव[4] शाखा लई ॥
एक शाख पर श्रीजिनवरकौ नेह जी ।
पूजौं द्रव्य मिलाइ धारि अति नेह जी ॥

ॐ ह्रीं विद्युन्मालीमेरु-पश्चिमदिश ताकी ईशानदिशा पुष्करतरु पृथ्वीकाय मूल शाखा मणि-रतनमई अनेकवृक्षनिकरि वेष्ठित फूल पत्र कर शोभित ता ऊपरि सिद्धकूट-जिनालयसम्बधी जिनेन्द्रेभ्यो अर्घं० ॥

विद्युन्मालीमेरु द्वीप पुष्कर विषै ।
पश्चिम दिशमैं राजै नैरितमैं अषै ॥
सालमली वर वृक्ष काय पृथ्वी मई ।
वज्र रतनमइ बहु वृक्षनि बेठे[5] सही ॥

दोहा—

चार शाख मधि एक पर, श्रीजिनवरकौ गेह ।
पूजौं वसु अंग नायकैं, धारौं अधिक सनेह[6] ॥

ॐ ह्रीं विद्युन्मालीमेरुतैं नैरितदिश-शाल्मलीवृक्ष पर सिद्धकूट-जिनेभ्यो अर्घं० ॥

गीता-छन्द —

देवकुरु उत्तरकुरु जुग[7] भोगभू उत्तम कही ।
गिरिराजके[8] दिश दखिन[9] उत्तर मध्यमैं शोभा लही ॥

---

१ कोण. २ वेष्ठित ३ पार्थिव. ४ चार ५ घेरे. ६ प्रेम-स्नेह. ७ दोनो ८ विद्युन्माली पाचवाँमेरु. ९ दक्षिण

जुगलिया नर वा नरानी[1] भोग[2] दशविधि भोग है।
मुनिराज चारण विहर जिनकैं पूज हौं धर जोग है ॥

ॐ ह्रीं विद्युन्माली-दक्षिण उत्तर भोगभूमि उत्तम चारणऋषि विहार सहित श्री जिनेभ्यो अर्घं० ॥

कवित्त—

विद्युन्मालीमेरु पंचमौं ता गिरितैं पूरबदिश जान ।
सीतानदी वहै अति उत्तम दक्षिणतट ताके परमान ॥
चव वक्षार रु तीन विभंगा ता मधि वसु विदेह सुख खान ।
गिरि चव पर चव ही जिनमन्दिर पूजौं आठौं जाम[3] निदान ॥

ॐ ह्रीं विद्युन्मालीमेरु-पूर्वदिश सीतानदीके दक्षिणतट चव वक्षार गिरिपर सिद्धकूट-श्रीजिनेभ्यो अर्घं० ॥

वसु विदेह देशनि मधि वसु ही मध्य सुगिरि रूपाचल मान ।
सेत वरन तट कटनीपुरमैं विद्याधर शोभै बुधमान ॥
तुंगभाग कूटनिपर श्रीजिनधाम विराजै सुख की खान ।
वसुग्रह ग्रहप्रति अष्ट अधिक शत प्रतिमा पूजौं भक्ति जु आन ॥

ॐ ह्रीं विद्युन्मालीमेरुतैं वसु विदेह क्षेत्रनिमैं वसु रूपाचल पर स्थित श्री सिद्धकूट श्रीजिनेभ्यो अर्घं० ॥

अष्टविदेहक्षेत्र देशनिमैं आरजखंड महारमनीक ।
कालरीति पलटै नहि कबही शिवमारग वरतै जहां ठीक ॥
केवलि श्रुतकेवलि मुनिगण जन आर्जा श्रावक श्राविक[4] कीक ।
चक्री प्रति[5] चक्री हलधर[6] नर तीर्थंकर उपजैं तहकीक ॥

---

१ स्त्री २ दश प्रकार कल्पवृक्षों के भोग. ३ पहर ४ श्राविकाए. ५ नारायण. ६ बलदेव.

ॐ ह्रीं विदेहक्षेत्रमध्य चवथेकाल की रीति शिवमार्गप्रवर्त्तक श्रीजिनेभ्यो अर्घं० ॥

गिरिराजातैं पूरबदिशमैं सीता उत्तरतट पहचान ।
चव वक्षार शीश जिनमन्दिर प्रतिमा रतनमई अमलान[1]॥
पदमासन मुद्रा लखि सुन्दर पूजौं आठौं जाम निदान ।
चव गिर मध्य विभंगा नदी तीन कही जिन जी गुणखान ॥

ॐ ह्रीं विद्युन्मालीमेरु-पूर्व सीतानदी ताके उत्तरतट चव वक्षार-गिरिपर सिद्धकूट जिनेभ्यो अर्घं० ॥

विद्युन्माली पूरबदिसमैं सीता सरिता[2] है अभिराम ।
उत्तरतट वसु देश विदेहा मधि रूपाचल वसु परमान ॥
शिखर शीशपर सिद्धकूट वसु चैत्यालय वसु ही अमलान ।
रतनमई प्रतिमा पदमासन चितवन करि पूजौं हित सान ॥

ॐ ह्रीं गिरिराजातै पूर्वं सीतानदी-उत्तरतट वसु विदेहक्षेत्रमध्य वसु रूपाचल पर वसु जिनमन्दिर तिनमैं श्रीजिनेन्द्रप्रतिबिम्बेभ्यो अर्घं० ॥

विद्युन्मालीतैं पूरब दिस सीतानदी वहै अमलान ।
ता उत्तरतट चव वक्षारे तीन विभंगा सरिता मान ॥
मध्य देश वसु विजयारध वसु आरजमैं सुरपुरी[3] समान ।
तीर्थंकर चक्री हरि प्रतिहरि हल कामादिक पुरुष पुरान[4] ॥
उपजै रीति रहे चवथेकी मुनि आर्जा श्रावक श्राविकान ।
केवलज्ञान विराजै जिनजी उपदेशैं वृषकौं परवान ॥

---

१ स्वच्छ. २ नदी ३ स्वर्ग ४ शलाका पुरुष ।

शिवमारग जहां रहै सदा ही ऐसा देश पुनीत रवीन ।
ताकी महिमा कहां तक वरनौं दिक्षा लहैं शिव लहैं अधीन ॥

ॐ ह्रीं विद्युन्मालीतैं पूर्वं सीतानदी ताके उत्तरतट वसु विदेहक्षेत्र-विषैं सदा मोक्षका प्रवर्त्तन श्रीजिनेन्द्रेभ्यो अर्घं० ॥

गिरिराजातैं पूरब सीता नदि कही ।
ता दौनौं तट षोडश देश वसैं सही ॥
तिन मधि तीर्थंकर विहरत विरसेन जी ।
महाभद्र केवलयुत पूजौं अैनजी ॥

ॐ ह्रीं विद्युन्मालीमेरुतैं पूर्वदिशि सीतानदी-तट षोडशदेश-मध्य वीरसेन महाभद्र केवलयुत तीर्थंकर विहार सहित श्रीजिनेन्द्रेभ्यो अर्घं०।

पूरब सीता वहै जुगल तट कुंड बनैं ।
विंशतिकुण्ड कुंड प्रति पण कंचनगिरि ठनैं ॥
सब शत मन्दिर शीस विराजैं एकसौ ।
पूजौं भाव भगतिसैं धारौं चावसौ ॥

ॐ ह्रीं विद्युन्मालीमेरुतैं पूर्व-सीतानदी-दौनौं दक्षिण उत्तर तट दश दश कुण्ड कुण्ड प्रति पांच पांच कंचनगिरि सब एक शतक पर सिद्धकूट जिनेन्द्रेभ्यो अर्घं० ॥

कवित्त—

गिरितैं पश्चिमदिशकी औरैं सीतोदा सरिता परवान ।
दक्षिण तट गिरि चारि वक्षारे तीन विभंगा नदी मान ॥
गिरि मस्तक पर श्रीजिनमन्दिर मंगलद्रव्यनि युत वर आन ।
पूजौं चव श्री प्रतिमा मणिमय हरषित ह्वै पृथ्वी मस्तान ॥

ॐ ह्रीं विद्युन्मालीमेरुतैं पूर्वदिशि सीतोदा नदीके दक्षिणतट वक्षारगिरिपर सिद्धकूट-श्रीजिनेन्द्रेभ्यो अर्घं० ॥

विद्युन्मालीमेरु पंचमौं तासै पश्चिम दिश अभिराम ।
सीतोदा नदी वर जानौ दक्षिण तट ताके नहि खाम ॥
गिरि चव तीन नदी अंतरमैं वसु देशनि मधि रूपाभाम ।
वसु कूटनिमैं वसु जिनमन्दिर वसु अ ग नय पूजौं वसु जाम ॥

ॐ ह्रीं विद्युन्मालीमेरुतैं पश्चिमदिशि सीतोदानदी दक्षिणतट वसुदेशमध्य रूपाचलपर सिद्धकूट-जिनालय-जिनेन्द्रेभ्यो अर्घं ॥

वसु विदेहक्षेत्रनिमैं वरतै चवथा काल हमेशा जान ।
तीर्थंकर चक्री अधचक्री प्रतिहरि हलि वर पुरुष प्रधान ॥
शिवमारग जहां चलै निरन्तर चार संघ जुत श्रीभगवान ।
करैं विहार घनें जिय बोधैं श्रीजिनकौं पूजौं हरषान ॥

ॐ ह्रीं वसु विदेहक्षेत्रनिमैं मोक्षकी प्रवृत्ति केवली विहरमान श्री-जिनेभ्यो अर्घं० ॥

दोहा—

गिरितैं पश्चिमदिश विषैं, सीतोदा तट जान ।
उत्तरमैं चव गिरि यजौं, वक्षारे जिनथान ॥

ॐ ह्रीं विद्युन्मालीमेरुतैं पश्चिम ओर सीतोदा उत्तरतट चार वक्षारगिरि पर सिद्धकूट-जिनेन्द्रेभ्यो अर्घं० ॥

गिरितै पश्चिम ओरमैं, सीतोदा नदि स्वच्छ ।
उत्तरतट वसु देश मधि, रूपाचल जिन लच्छ ॥

ॐ ह्रीं रूपाचल श्रीजिनेन्द्रेभ्यो अर्घं० ॥

गिरि पश्चिम सरिता कही, सीतोदा तट देश ।
वसुविदेहमै मोक्षकी, रीति चलै जिन देश ॥

ॐ ह्रीं वसुविदेह क्षेत्रनिमैं चवथेकी रीति सदाकाल रहै-श्री जिनेभ्यो अर्घं० ॥

अडिल्ल छन्द—

गिरितैं पश्चिम सीतोदा जुग तट विषैं ।
वसु वक्षार षट नदी विभंगा जिन अखैं ॥
षोडशदेश मझार दोइमैं जानियै ।
नाम देवजस अजितवीर्य परमानियै ॥

दोहा—

तीर्थंकर जिन ज्ञान युत, विहरमान भगवान ।
पूजैं तिनकौं सुरपती, मैं पूजौं हित ठान ॥

ॐ ह्रीं विदेहक्षेत्रमैं देवयश अजितवीर्य विहरमान तीर्थंकरेभ्यो अर्घं० ॥

अडिल्ल—

गिरि पश्चिमकी ओर दिसा वसु दुगुणही ।
मध्य नदी सीतोदा तट जुग शुभ मही ॥
दश दश कुण्ड विषैं पण पण कंचनगिरी ।
एक शतक जिनमन्दिर पजौं सिर धरी ॥

ॐ ह्रीं विद्युन्मालीमेरुतैं पश्चिम सीतोदा नदीके दक्षिण उत्तर तट विषै दश दश कुण्ड, कुण्ड कुण्ड प्रति पाच पांच कंचनगिरि सब एक शतक सिद्धकूट-जिनेभ्यो अर्घं० ॥

कवित्त—

पुष्करार्द्ध वर दीप मध्य जुग मेरु कहे पूरब पश्चिम ।
जुग गिरिकी दक्षिण दिश जुग ही भरतक्षेत्र सो भेदमदम ॥
इष्वाकार मध्यगिरि सोभै सिद्धकूट जिनमन्दिर वम्म ।
प्रतिमा रतनमई लखि पूजौ वसु अंग नयतैं हित धरमम्म ॥

ॐ ह्रीं मन्दिर विद्युन्माली जुग मेरुतैं दक्षिण दिश जुग भरत-मध्य इष्वाकारगिरि पर सिद्धकूट-जिनेभ्यो अर्घं० ॥

मन्दिर विद्युन्माली गिरितैं उत्तरदिश सोभै शुभ खेत ।
ऐरावत जुग बीचि पड्यौ है इष्वाकार नाम गिरि सेत ॥
सिद्धकूट श्री मन्दिर सोहै प्रतिमा पदमासन शिवहेत ।
पूजौं अष्टद्रव्य लै उत्तम अष्ट अंग नय शिवफल लेत ॥

ॐ ह्रीं मदिर विद्युन्माली मेरुतैं उत्तरदिशि जुग ऐरावत क्षेत्र मध्य इष्वाकारगिरि पर सिद्धकूट श्रीजिनेन्द्रेभ्यो अर्घं० ॥

पुष्करदीप मध्य गिरि सोभै मानुषोत्र वर वलयाकार ।
मनुषक्षेत्रकी हद कही जिन परै क्षेत्र तिर्यंच विचार ॥
शिखर चार दिश पूरब दक्षिण पश्चिम उत्तर जिन आगार ।
चारि शतक बत्तिस प्रतिमा जिन पूजौं मनमैं थिरता धार ॥

ॐ ह्रीं पुष्करार्द्ध द्वीप मध्य मानुषोत्तर पर्वत पर सिद्धकूट-जिनेभ्यो अर्घं० ॥

दोहा—

पुष्करार्द्ध वर दीपमैं, चव दिस वा विदिसाह ।
अकृत्तम कीर्तम भवन, पूजौं जिनवर पाह ॥

अर्हत यति चतु सघकौं, जिनश्रुत अरु जिन भाव ।
पंच कल्यानक क्षेत्र जिह, काल जजौ हरषाव ॥

ॐ ह्रीं पुष्करार्द्धद्वीप के पूरब पश्चिम मंदिर विद्युन्माली मेरुके पूर्व पश्चिम दक्षिण, उत्तर दिशा तथा नैऋत्य, आग्नेय, वायव्य, ईशान विदिशानिमैं सप्तक्षेत्र षट् कुलाचल एक मेरु सम्बंधी जहां गिरि, क्षेत्र, नदो वृक्ष वन उपवनादि विषैं कृत्रिम अकृत्रिम जिन भवन, निर्वाण क्षेत्र, तथा कर्मभूमिमैं पंचकल्यानक भये तहां तहां पूजनार्थ-अर्घं० ॥

दोहा—

जिन मंदिर चव असी की, आरति वरनौं भाई ।
जिन प्रतिमा सब रतन मय, वंदौं शीश नवाइ ॥

पद्धडी-छन्द—

जय पुष्करार्द्ध वर दीप सार, पूरव पश्चिम जुग मेरु धार ।
मंदिर विद्युन्माली जिनाय, बत्तिस वंदौं मैं सीस नाय ॥
द्वादश कुलगिरि पर शोभमान, भरतैरावत चव विजय जान ।
दक्षिण उत्तरमैं जिन अगार, पूरब पश्चिम के कहूं सार ॥
जुग पुष्करतरु पुष्कर वनीय, नैरित इसान गिरितैं गनीय ।
चव साख विराजै जिन सुधाम, पूजौं प्रतिमा लखि हरष ताम ॥
गिरितैं परब वसु वसु वक्षार, षोडश षोडश वैताढ्यसार ।
अडतालीस जिनवर अवास, प्रतिमा वंदौं चित धर हुलास ॥

तैसैं ही पश्चिममैं सुजान, षोडश वक्षारे विजय मान ।
बत्तिस मिल अडतालिस जिनाल, वंदौं मन वचतैं धरन भाल ॥
गिरि विदिशनिमैं गजदंत आठ, वसु जिन मंदिर वंदौं सु ठाठ ।
छप्पन इक शतक कहे जिनेश, जुग गिरि सम्बंधी ग्रह जिनेश ॥
वर इष्वाकार पहार दोइ; जुग जुग भरतैरावत बहोइ ।
जुग जिनमंदिर दैदीप्यमान, तिन सीस विराजैं रतनखान ॥
वर मानुषोत्र मधि दीपमाहिं, वलयाकृत पड्यौ पहार जाहिं ।
गिरि सिखर शीश चव दिश मझार, चवमंदिर सोहै दुति अपार ॥
इक मंदिर वरनन कवि सुकौन, ताकी सोभा वरनैं अनौन ।
लम्बा चौरा तुंग रतनपीठ, मोती माला अर रतन दीठ ॥
मंगलद्रव्यनि युत पूजमान, धुज पंकति कर अघ नास जान ।
सिंघासन पर जिन बिंब एम, उदयाचल पै रवि उदय जेम ॥
सिर छत्र चमर ढोरैं सुरेश, दुंदुभि बाजैं नभतैं असेस ।
वरषैं फूलनिके पुंज सोइ भामंडल दुति भव सप्त जोइ ॥
तरु ढिग असोक भव सोक टार, जिनवानी जय जय शब्द सार ।
मुद्रा लखि आतमज्ञान होइ, बहु पुन्य बंधै अघहीन जोइ ॥
सुर सुरपति खग चारणरिषीस, पूजैं वंदै थुति नवैं सीस ।
सुर ललना नाचै तान लेइ, गंध्रव तूंवर नारद गवेइ ॥
द्रुम द्रुम द्रुम द्रुम बाजे म्रदंग, सननन नन नन न सारंग रंग ।
तन नन नन नन नन तान देत, घन नन घन नन घुघुरु बजेत ॥
झिनन झिनन बाजैं मंजीर, डफ वीन वांसुरी चंग सीर ।
टुम टुम टुम टुम मुहचंग ध्वनेय, ठम ठमकि ठमकि सरि पग धरेय ॥

दम दम दम दम दम दमकि जाइ, कंइ नृत्य करत फेरी फिराइ ।
केइ नमि नमि नमि नमि नमत पाइ, केइ जिनवर छवि निरखै अघाय ॥

बहु सुर तिय मिलि आनंद पाइ, करि रास मडली रचै आय ।
सुरपति गावैं जिन गुन अमूर, वनि रह्यौ सुझुरमट प्रभु हज़ूर ॥

तुम स्वयंबुद्ध जग करन बुद्ध, तुम ब्रह्मा विष्णु महेश सुद्ध ।
तुम मोह अधकौं रवि समान, जग तारणकौं नवका प्रमान ॥

तुम देवल दिनकर भवि प्रकास, शिवमारगकौं बोधत उजास ।
तुम पाप विपन काटन कुठार, तुम जग जीवन आनंदकार ॥

इमि थुति नुति करि हरि बार बार, बहु पुन्य उपावौ विगत टार ।
जिनग्रह मैं वसु सत विंब जोइ, वंदै नाचैं थुति करैं जोइ ॥

जय अकत्रिम जिनगेह थान, कृतम भविजन कर रचे जान ।
दो भरतैरावत दोय जान, तीर्थंकर त्रय काले प्रमान ॥

सुभ क्षेत्र विदेह विषै जिनेन्द्र, विहरत सुर नर खग नवैं इन्द्र ।
तिनकौं मैं वन्दौ नाय सीस, पाऊँ शिव सुखकौं जगत ईस ॥

इह अरज हमारी सुनौं देव, भव भव पाऊं तुम चरण सेव ।
जौ लग शिव सुख हमकौं न होइ, तौ लग अरजी निज सेव होइ ॥

तुम तार तार हमकौं दयाल, कर पार पार वन्दैं त्रिकाल ।
क्रम जार जार शिव देय नाथ, दुख टारि टारि सिर धरैं माथ ॥

दोहा—

पुष्कराद्धवर दीपके, जिनमन्दिर जिनदेव ।
आरति जिनकी जो पढै, कटै भ्रमन की टेव ॥

महार्घं० ॥

कवित्त—

मंगल अर्हंत सिद्ध साधु श्रुत चैत्य चैत्यालय जिनवृष जान ।
नाम थापना द्रव्य भाव खित काल छहौं अघ की कर हान ॥
पूजन इनका पाठ जास मैं मंगलपाठ कह्यौ भगवान ।
वाचैं सुनैं भावसेती भवि जगसुख लहि पहुँचै निर्वान ॥
बालकपनतैं पढ़ै पाठ जो विद्या अधिकी लहै निदान ।
जातरूप कुल लावन वपु मैं रोग रहित संपति अधिकान ॥
पुत्र पौत्र युवती वर लक्षण राजमान बहु राज्य महान ।
सुर सुरपति खग नरपति ह्वैकैं कर्म काटि पहुँचैं निर्वान ॥
(इत्याशीर्वादः)

इति पुष्करार्द्धदीपमन्दिर–विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धी–
अकृत्रिम जिनालय पूजा ॥

卐

अथ त्रयक्षेत्र पूजन प्रारम्भ्यते ।

(नन्दीश्वर ५२, कुंडलगिरि ४, रुचिकगिरि ४=कुल ६० जिनालय पूजा)

अडिल्ल स्थापना—

सिद्ध सुद्ध अविरुद्ध बुद्ध निकलंक है ।
अविनासी अविकार जरा नहीं सक है ॥
लोकालोक विलोकि आतमसुख सन्त है ।
लोक सिखर निवसन्त सिद्ध भय अन्त है ॥

नन्दीस्वर[1] बावन कुंडल[2] चव जानियैं ।
रुचिकद्वीपचव[3] साठि जिनालय आनियैं ॥
रतनमई जिन बिंब सांति मुद्रा धरैं ।
वीतराग वा सुभ कारण दर्शन करैं ॥

दोहा—

तिर्यक् क्षेतर जिन भवन, गिरि पर दिपै महन्त ।
आह्वानन तिनकी करौं, मन वच तन हर्षन्त ॥

ॐ ह्रीं तिर्यंचक्षेत्र अकृत्रिम जिनालय, नन्दीश्वरद्वीपमध्ये बावन, कुंडलगिरि चार, रुचिकगिरि चार सर्व साठ श्रीजिनेन्द्राः अत्रावतर-तावतरत संवौषट् आह्वाननं ॥

ॐ ह्रीं तिर्यंचक्षेत्रे अकृत्रिम जिनालय, नन्दीश्वरद्वीपमध्ये बावन, कुन्डलगिरि चार, रुचिकगिरि चार सर्व साठ श्रीजिनेन्द्राः अत्र तिष्ठथ तिष्ठथ ठः ठः स्थापनं ॥

ॐ ह्रीं तिर्यंचक्षेत्रे अकृत्रिम जिनालय, नन्दीश्वरद्वीपमध्ये बावन, कुन्डलगिरि चार, रुचिकगिरि चार सर्व साठ श्रीजिनेन्द्राः अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं ॥

अथाष्टकं—(सुकारण पूजत हौं)

पद्मद्रहको निर्मल जल ले रत्न कटोरी लावूं ।
श्री जिनवरके चरननि आगैं धार देइ हरषावूं ॥
सुकारण पूजत हौं ।
मैं भाग[4] भोग जिन पाइ सुकारण पूजत हौं ।

---

१. नन्दीश्वरद्वीपके ५२ जिन चैत्यालय, प्रत्येक दिशामें १३–१३ अंजनगिरि, १ दधिमुख ४ रतिकर ८ कुल १३ एक दिशा सम्बन्धी । २. कुन्डल-द्वीपके ४ चैत्यालय. ३. रुचिकद्वीप के ४. ४ भाग्योदयसे.

नन्दीस्वर रोचक कुंडल वर दीपनिमैं जिन आलय ।
बावन चव चव बिंब रतनमय शांति[1] मुद्र अघ घालय[2] ॥
सुकारण पूजत हौं ॥ जलं० ॥

बावन चन्दन दाहनिकन्दन केशरि संग घिसाऊं ।
श्रीजिनवर जी के पद पूजौं भव आताप मिटाऊं ॥
सुकारण पूजत हौं, नन्दीस्वर० ॥ चन्दनं० ॥

मुक्ताफल सम अक्षत उज्जल धोयद्रकोट चढाऊं ।
अक्षयपद के कारण जिनपद पुंज देय सुख पाऊं ॥
सुकारण पूजत हौं, नन्दीस्वर०, अक्षतं० ॥

जुही चमेली अरु गुलाब ले सुमन सुगन्धित नीके ।
तिन पर अलि झंकार करत हैं पूजौं पद जिनजी के ॥
सुकारण पूजत हौं० ॥ नन्दीस्वर० पुष्पं० ॥

पापर पूरी लाडू फेनी गूंजा खुरमा ताजे ।
षट् रस मंडित विविध भांतिके जिनपद पूजि सु काजे ॥
सुकारण पूजत हौं, नन्दीस्वर० ॥ नैवेद्यं० ॥

रतन अमोलिक दीपक लेकैं वा कपूर की वाती ।
मोह तिमिरके नासन कारण श्रीजिन अघ घाती ॥
सुकारण पूजत हौं०, नन्दीस्वर० ॥ दीपं० ॥

कृष्णागर चन्दन आदिक ले दशविधि धूप बनाऊं ।
डारि हुतासन श्रीजिन आगै अष्टकर्म नसवाऊं ॥
सुकारण पूजत हौं, नन्दीस्वर० ॥ धूपं० ॥

---

१ शातिमुद्रा. २ पाप नाशक ।

श्रीफल लौंग छुहारा पिस्ता किसमिस दाडिम फल ले।
मिष्ट पक्व रसथाले सुन्दर जिनपद जजत वहाले[1] ॥
सुकारण पूजत हौं०, नन्दीस्वर०, फलं० ॥
जल चन्दन अक्षत प्रसून चरु दीप धूप फल नीके।
श्री जिनवर पद अर्घ चढाऊं नाचि गाय गुण जीके ॥
सुकारण पूजत हौं०, नन्दीस्वर०, अर्घं० ॥

प्रत्येक अर्घ अडिल्ल—

दीप अढाई परैं क्षेत्र तिर्यंच है,
असंख्यात वर दीप उदधि लौं संच है।
जघन्य भोग की रचना वरतै सास्वती,
दीप स्वयंभूरमण मध्य गिरितैं इती ॥
तीन दीप मधि जिनवरके आवास है,
नन्दीस्वर रोचक कुन्डलगिर जास हैं।
बावन चव चव क्रमतैं बुधजन जानियैं,
पूजौं मन वच काय हरप उर आनियैं ॥

ॐ ह्रीं तिर्यचक्षेत्रविपैं नन्दीश्वरद्वीपमध्ये बावन, रुचिकद्वीप-मध्ये चार, रुचिकगिरिपर चार तैसेंही कुडलद्वीपमध्ये कुंडलगिरिपर साठ जिनालय सम्बन्धी श्रीजिनेन्द्रेभ्यो अर्घं० ।

नन्दीस्वर अष्टम वर दीप सुहावनौं,
एक शतक त्रेसठि महकोट सु पावनौं।
लख चौरासी जोजन इक दिशमैं गिनौं।
सूचीकौ विस्तार सुनौं भवि जिय मनौं ॥

1 प्यारे।

छस्सै पचपन कोटि लक्ष तेतीस जी,
चव दिशमैं जिनमन्दिर बावन ईस जी।
तेरह तेरह इक इक दिश दिश जानियै।
पूजैं सुरपति आय पूज ह्यां ठानियैं ॥

सवैया इकतीसा—

जम्बूदीप धातखण्ड पुष्कर सु भवारुणी
क्षीर घृत क्षौर नन्दीस्वर मानियैं।
अरुण अरुणभास कुन्डल शख रूचक भुजग
कुसंग क्रौच षोडश प्रमानियैं ॥
मनसिल हरताल सिंदूर स्याम अंजन
हिंगुल रूप सुवर्ण वज्र वर आनियैं।
वैडूरज नागभूत यक्षदेव अहीन्द्र और
स्वयंभूरमण अत सोलह सरधानियैं ॥

अडिल्ल—

आदि अंत षोडश षोडश वर दीप हैं।
मध्य असंख्यात जिनवर वरनें दीप हैं ॥
मानुषोत्र पुष्करमैं कुंडल रुचिकमै ।
अंत स्वयंभूरमण स्वयंप्रभ गिरिमैं ॥
मध्य दीपकौ वेढि वलयवत होरहौ ।
चार सुगिरि सोभाजुत सुन्दर लहलहौ ॥
दीप मेलि दधि प्रथम लवन रस लवन है ।
मदिरावत क्षारुनो क्षीरवत् जलन है ॥

घृतदधिकौं जल घृतवत् श्रीजिनजी कह्यौ ।
कालोदधि पुष्करदधि अंतर उदधि लह्यौ ॥

तीनौं का जल जल जु सेस मिष्टान जू ।
श्रीजिन पूजौं वसुविधि धरि मन आन जू ॥

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीप आदि क्रौंच पर्यंत षोडश आदिके मनसिलादि स्वयंभूरमण षोडश अन्तके, मध्य असख्यात लवणोदधि कालोदधि दोय समुद्र सिवाय जो द्वीपका नाम सोई समुद्रका तहां लवण का जल लवणवत् कालोदधि पुष्कर स्वयंभूरमण तीनका जल सलवत् वारुणीका मदिरावत् क्षीरका जलक्षीरवत घृतदधि का जल घृतवत् बाकी समुद्रका जल सांठेके रस समान मिष्ट पुष्करमै, मानुषोत्तर-कुन्डलमैं कुंडलगिरि रोचक रुचिकगिरि स्वयंभूरमणद्वीपमै स्वयंप्रभगिरि मध्य बेठ शोभायमान श्रीजिनेन्द्रेभ्यो अर्घं० ॥

सुन्दरी छन्द—

पल्ल दश कोटाकोटी कहे, जानि सागरतैं उद्धर लहे ।
सो अढाई सागर रोम जे, गिनति दीप उदधि जिनवर जजे ॥

ॐ ह्रीं अढाईसागर के रोम सम अशेष द्वीपोदधि-श्रीजिनेन्द्रेभ्यो अर्घं० ॥

लक्ष जोजन दीप प्रथम कह्यौ, परिधि तिगुणी कछु अधिकी लह्यौ ।
तीन लख सोलह हज्जार जू, जुग सतक सत्ताइस धार जू ॥

तीन कोस अधिक धनु जानियै, एक सतक अठाइस मानियै ।
अधिक साढे त्रिदशांगुल कह्यौ, परिधि सूक्षम जिनवर जो लह्यौ ॥

ॐ ह्रीं लक्षजोजन जम्बूद्वीप व्यास परिधिथूल तीन लक्ष सूक्ष्म तीन लाख सोलह हजार दो सौ सत्ताइस जोजन तीनकोस एकसौ

अठाइस धनुष साढे तेरह अंगुल किंचित् अधिक परिधि-श्रीजिनेन्द्रे-भ्यो अर्घं० ॥

अडिल्ल—

प्रथम दीप लख जोजन व्यास प्रमानियै ।
जोजन जोजन कितनैं भाग जु आनियै ॥
कोट सातसै निव्वै छप्पन लाख जी ।
चौराणवै हजार डेढसै साख जी ॥
अधिक कोस छेतरफल[1] इतना जानियै ।
श्रीजिनकी वानी चित मैं उर आनियै ॥
नेमिचन्द आचारज ग्रन्थ निगाइये ।
ताकौं देखि श्रीजिन पूज मनाइयै ॥

ॐ ह्री जम्बूद्वीपका क्षेत्रफल सातसै नव्वै कोट छप्पन लक्ष चौराणवैं हजार एक सौ पचास जोजन एक कोश प्रमाण-श्रीजिनेन्द्रेभ्यो अर्घं ॥

लवणोदधिके जोजन जोजन भाग जौ ।
होइ किते सो उर मैं धरि भव लागजौ ॥
सहस अठारह नवसै तिहत्तरि कोडि जी ।
छयासठि लख उणसठि हजार छस्सै जोडजी ॥
दश अधिके इतना छेतरफल[2] जिन कह्यौ ।
बाकी दीपोदधि श्रीजिनवर जी लह्यौ ॥

ॐ ह्रीं लवणसमुद्र के जोजन जोजन के खण्ड अठारह हजार नवसै तिहत्तरि कोडि छयासठ लाख उनसठ हजार छस्सै दस प्रमाण

१-२ क्षेत्रफल.

बाकी द्वीप समुद्र इह भांति-श्रीजिनेन्द्रेभ्यो अर्घं० ॥

दीप प्रथम इक भाग लवण के भाग है ।
सूची पाँच वर्ग पच्चिस होइ लाग है ॥
एक भागकर हीन भाग चौवीस जी ।
ऐसैं ही करि भव्य पूजि जिन ईस जी ॥

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीप लक्ष जोजन प्रमाण एक भाग धातकीखण्ड पचीस भाग मैं एक भाग घाट चौवीस क्रम करि द्वीप समुद्र-श्री जिनेन्द्रेभ्यो अर्घं० ॥

लवणोदधि कालोदधि अतम जानियै ।
जलचर[1] जीवनि करि परिपूरन मानियै ॥
तीन घाट बहु संख उदधि नहि जीव हैं ।
केवल जल श्रीजी पूजौं जग पीव[2] है ॥

ॐ ह्रीं लवणकालोदधि स्वयंभूरमण तीन विषैं जलचर बाकी केवलजल श्रीजिनेभ्यो अर्घं० ॥

लवनोदधि तट मछ देह नवकी कही ।
मध्य अठारह जोजन लम्बी सरदही ॥
अर्द्ध चौड़ाई पाव[3] तुंग जिनवर भनी ।
धन्य धन्य जिन यजौं वानित्रय जग धनी ॥
कालोदधि तट अष्टादश मधि दुगुणही ।
मछ देह की लम्बी चौड़ी अधिनही ॥
पाव तुंग लम्बीतै श्री जिनवर भणौ ।
धरि भव्य सरधान[4] यजौं वस्तु क्रम हणौ ॥

१ जल में रहने वाले जीव. २ पति, ३ चौथाई भाग ऊचाई. ४ श्रद्धान, विश्वास.

अन्त स्वयंभूमरण सिन्धु तट मच्छही ।
पंच सतक जोजन लम्बाई स्वच्छई ॥
मध्य दुगुण चौडाई आधी जानियैं ।
पाव तुग श्रीजिन पूजौं हरषानियैं ॥

जोगीरासा—

अन्त दोप मधि गिरि शुभ राजै कर्मभूमि बाहर मैं ।
अर्द्ध दोप अर अन्त उदधिमै काल पंचमा थलमैं ॥
एकेंद्रीके तुंग देहकौ वरनौ श्री मुनिराजा ।
एक हजार अधिक उत्कृष्टा कमल यजौं जिनराजा ॥

ॐ ह्रीं स्वयंभूमरण अर्द्ध द्वीप समुद्रविषैं एकेन्द्री विषैं कमल एक हजार अधिक जोजन का—श्री जिनेभ्यो अर्घं० ॥

अडिल्ल—

बेइन्द्री शंख जोजन बारह कह्यौ ।
तेइन्द्री का सहस पद्मनामी लह्यौ ॥
कहा चौइन्द्री वीछू जोजन पौन का ।
भ्रमर एक जोजन पंचेंद्रो मच्छ का ॥

ॐ ह्रीं स्वयभूमरण अर्द्ध द्वीप समुद्रविषैं बेइन्द्री शंख का देह बारह जोजन, नेइन्द्री सहस्रपद्म नामय सुव विच्छू का पौन योजन, चौइन्द्री भ्रमर का देह एक जोजन, पचेंद्री बृहत्मत्स हजार जोजन उत्कृष्ट अवगाहना प्रमाण—श्रीजिनेभ्यो अर्घं० ॥

गीता—छन्द –

मृतिकादि प्रथ्वीजीव आयु वरस बारह सहस की ।

बाइस वरस तन आदि वरनी सप्त जलकी जिन वक्री।
दिन तीन अग्नि जु वातकी त्रय सहस दश हरितकायकी।
उत्कृष्ट आयु जु कही जिनवर यजौं मस्तक लाय की ॥
ॐ ह्रीं उत्कृष्ट स्थावरनि आयु वरनत-श्री जिनेभ्यो अर्घं० ॥

जोगीरासा—

द्वैइन्द्री द्वादश वरषनि की तेइन्द्री दिन जानौ।
एक घाट पंचास दिनौं की छह मासै अधिकानौं ॥
चौ इन्द्री का आयु वखानौं माछनि इक कोडिपूरब।
नव पूर्वांग सिरी सरपनि की जिन पूजौं अघ दूरब ॥
ॐ ह्रीं त्रसजीवनि-उत्कृष्ट आयु वरनत श्रीजिनेभ्यो अर्घं० ॥

अडिल्ल—

सहस बहत्तर पंखी की आयू कही।
सर्प बियालिस सहस जिनेश्वर देख ही ॥
अपर आयु नर तिर्यंच कर्मजु भूमिया।
अन्तर्मुहूरत जानि सु श्रीजिन पूजिया ॥

ॐ ह्रीं द्वैइन्द्रीका द्वादशवर्ष, तेइन्द्री गुणचास दिन, चौइन्द्री छह मास, पंचेन्द्री तिर्यंचनि मैं मत्सकी एक कोडि पूरब, सिरीसर्प नव पूर्वांग बहत्तरि सहसवर्षकी, पंखीनि की वियालीस हजार वर्षकी, सर्प उत्कृष्ट जघन्य कर्मभूमिया मनुष्यतिर्यंच अन्तर्मुहूरतकी-श्रीजिनेभ्यो अर्घं० ॥

थावर[1] एकैन्द्री विकलत्रय[2] जानियैं ।
सन्मूर्छन पचेन्द्री नारक आनियैं ॥
लिंग नपुंसक देव भोगभू नर पसू ।
नहीं नपुंसक तीन करमके नर पसू ॥

ॐ ह्रीं थावर त्रिकलत्रय सन्मूर्छन पंचेंद्री नारकी नपुंसक दोय भोगभूमि दोय लिंग नपुंसक बिना कर्मभूमिया मनुष्य पशु तीनलिंग- श्रीजिनाय अर्घं० ॥

त्रोटक-छंद—

नंदीश्वर अष्टम दीप महा, ताकी पूरब दिश सोभ लहा ।
अंजनगिरि अंजन[3] वरन कहा, चव असी सहस तुंग गोल सुहा ॥
ते शिखर जिनालय रतनमई, सत अधिक अष्ट शत बिंब सई ।
सुर "सुरी सुराधिप"[4][5] पूज करैं, हम ह्यां पूजा करि हरष धरैं ॥

ॐ ह्रीं नंदीश्वर द्वीप की पूर्व दिश अंजनगिरि पर सिद्धकूट- श्रीजिनेभ्यो अर्घं० ॥

नंदीश्वर पूरब दिश चव दिशा, लख जोजन वापी[6] इक इक दिशा ।
वापी मधि दधिमुख सेत[7] वरन, दश सहस तुंग चव चंद किरन ॥
च्यारौं दिश दधिमुख गिरि सोहै, सुर सुरी सुराधिप मन मोहै ।
तहां अष्ट दिनांतक पूज रचैं, हम ह्यां पूजा करि भक्ति सचैं ॥

---

१ स्थावर एकेन्द्रिय जीव-पृथिवीकायादि ५ प्रकार, जिनके मात्र एक स्पर्शन-इन्द्रिय हो २ विकलत्रय-दो, तीन, चार इन्द्रियवाले जीव ३ श्यामवर्ण ४ देवांगना ५ इन्द्र. ६ बावडी. ७ श्वेतवर्ण ।

ॐ ह्रीं नंदीश्वरद्वीप पूरबदिश अंजनगिरि की चारि दिशामैं चार वापी तिनमधि चार दधिमुख गिरि श्वेतवर्ण पर सिद्धकूट-श्रीजिनेभ्यो अर्घं० ॥

नंदीश्वर पूरब जानि दिशा, वापी वापी दो कोण लसा ।
वसु रतिकर गिरि दुति स्वर्ण मई, इक सहस तुंग अति सोभमई ॥
तिन गिरि गिरि प्रति इक जैनग्रहं, रवि दुति लाजै जो दीप अहं ।
वसु कूटनिमैं जिनबिंब लसै, हम ह्यां पूजत सब एन कसै ॥

ॐ ह्रीं नन्दीश्वरद्वीपमध्ये पूर्वदिश वसु रतिकरगिरि पर सिद्धकूट श्रीजिनेभ्यो अर्घं० ॥

नन्दीस्वर दक्षिण दिश माही, अंजनगिरि पूरब वतलाही ।
गिरि शीश जिनालय पूज परं, हम पूजत वसुविधि एन हरं ॥

ॐ ह्रीं नन्दीश्वर दक्षिणदिश अंजनगिरि पर सिद्धकूट श्रीजिनेभ्यो अर्घं० ॥

नन्दीस्वर दक्षिण चव वापी, मधि दधिमुख चव गिरि पै जापी ।
जिन थान विराजै बिंबमहा, हम पूजत ह्यां वसु दर्व लहा ॥

ॐ ह्रीं नन्दीश्वरद्वीप-दक्षिणदिश चार वापी मधि चार दधिमुख शिखरपर सिद्धकूट श्रीजिनेभ्यो अर्घं० ॥

नन्दीस्वर दक्षिण जानि दिसा, चव वापी कोन जु अष्टलसा ।
रतिकर गिरि पर वसु गेह दिपै, पूजत जिनकौं हम पाप खिपै ॥

ॐ ह्रीं नन्दीश्वर दक्षिण दिशवापी कोन वसु रतिकरगिरि पर सिद्धकूट-श्री जिनेभ्यो अर्घं० ॥

नन्दीस्वर पश्चिम दिस सोहै, अंजनगिरि सुर सुरपति मोहै ।
जिनगेह अपूरब रतनमई, पूजन हम कर सुख सहज लई ॥

ॐ ह्रीं नन्दीश्वर पश्चिमदिश अंजनगिरिपर सिद्धकूट श्रीजिनेभ्यो अर्घं० ॥

पश्चिम नन्दीश्वरद्वीप दिशा, चव दिश चव वापी मध्य लसा।
दधिमुख चव गिरि पर गेह वसा, हम पूजत चितमैं धरि हुलसा ॥

ॐ ह्रीं नन्दीश्वरद्वीपमध्ये पश्चिमदिश चव दधिमुखगिरि पर सिद्धकूट-श्रीजिनेभ्यो अर्घं० ॥

नन्दीश्वर पश्चिम दिश राजै, वापी चव कौनैं वसु छाजै।
रतिकरगिरि पर वसु जैनग्रहं, हम पूजत ह्यां अति हरष महं ॥

ॐ ह्रीं नन्दीश्वरद्वीपे पश्चिमदिश वसु रतिकरगिरि पर सिद्धकूट जिनेभ्यो अर्घं० ॥

नंदीश्वर उत्तर ओर विषैं, अजनगिरि सोहै ग्रंथ अषैं।
तह शीश विराजै जैनग्रहं, पूजत हरपत मोदै मनहं ॥

ॐ ह्रीं नदीश्वरद्वीपे उत्तरदिश-अजनगिरि पर सिद्धकूट-श्रीजिनेभ्यो अर्घं० ॥

नंदीश्वर उत्तर दिश राजै चव वापी मधि चव गिरि छाजै।
दधिमुख पर जिनवर थान महा, पूजत हम चितमैं हर्ष लहा ॥

ॐ नंदीश्वरद्वीपे उत्तरदिश चार वापी मधि चार दधिमुख गिरिपर सिद्धकूट-जिनेभ्यो अर्घं० ॥

नंदीश्वर उत्तरदिश माही, वापी चव कौनैं गिरि माही।
वसु रतिकर गिर पर जिनगेहा, हम पूजत चितमैं धरि नेहा ॥

ॐ ह्रीं नदीश्वरद्वीपे उत्तरदिश वसु रतिकर गिरिपर सिद्धकूट-श्रीजिनेभ्यो अर्घं० ॥

जोगीरासा—

नंदीश्वर अष्टम वरना जो दीप चारि दिश माही ।
बावन जिनवर गेह विराजै जिनबिंब सोहै ताही ॥
चव अंजनगिरि षोडश दधिमुख बत्तिस रतिकर जानौं ।
इक दिशमैं अंजन दधिमुख चव वसु रतिकर यज ठानौं ॥

ॐ ह्रीं नंदीश्वरद्वीपे चवदिश सम्बंधी बावन जिनचैत्यालय-श्रीजिनेभ्यो अर्घं० ॥

कुंडलदीप विषैं कुंडलगिरि वलयाकृत[1] चहुंदिशमैं ।
शिखर शीश चव दिश चव मंदिर मनुषज्ञौन जौ त्रसमैं ॥
इक मंदिर प्रति अष्ट अधिकैशत जिनवर प्रतिमा राजै ।
तिनकौं चितमैं चितन करिमैं पूजौं हरषउ भाजैं ॥

ॐ ह्रीं कुंडलद्वीपविषैं कुंडलगिरि पर चहुं दिश-चार जिनमंदिर-श्रीजिनेभ्यो अर्घं० ॥

रुचकदीप तेरमवर जानौं रुचकमध्य गिरि सोहै ।
वलय रूप चव दिशमैं राजै चवदिशमैं मनमोहै ॥
पूरब दक्षिण पश्चिम उत्तर इक इक मंदिर सुन्दर ।
पूजत सुरपति नितप्रति तिनकौं मैं ह्यां पूजौं मुंदर ॥

ॐ ह्रीं रुचिकद्वीपमध्ये रुचिकगिरि पर सिद्धकूट-श्रीजिनेभ्यो अर्घं० ॥

दीप उदधि तिर्यंच क्षेत्रमैं संख्या तिनकी नाही ।
कथन विचित्र तहां का स्वामी ग्रंथनिमैं दरसाही ॥

---

१ गोल

नेमिचन्द्र त्रैलोक्यसारमैं प्राकृत गाथा कीना ।
देश वचन टोडरमल ताकी देखि सुकिंचित लीना ॥
नेत्र अंध जो नाहि त्रिलोके ताहूमैं हिय[1] सूना[2] ।
तैसे प्राकृत सुरवानी[3] रहौ भाषा ही मैं ऊना[4] ॥
पर मै भक्ति लाय श्रीजीकी पूजौं पूज प्रभुकौं ।
अब आगे आरति कर जिनकी गुण गाऊं स्वंप्रभुकौ ॥

दोहा—

अकृत्रिम जिनगेहकी, क्षेत्र सु तिर्यग माहि ।
आरति करुं जिनदेवकी, हरष हरष मन माहि ॥

पद्धडी–छन्द—

जै जै जै जिन देवाधिदेव. सुर नर मुनि खग सब करैं सेव ।
जै जै ब्रह्मा शिव विष्णुरूप, जै धर्म धुरंधर दयाकूप ॥
जै असरन सरन विद्या निवार, जै नरक दुःख कारण कुठार ।
पशुगति दुख तुमतैं होइ दूर, शिवसुख दाता हरि-भव हजूर ॥
हम आरज एक जुग[5] पान जोर, ऊभे[6] होकर बहु विनय ओर ।
तुम थुति करनेकौ ऊमग धार, बुध विन कैसैं होवैं सम्हार ॥
तातै बुधि हमकौं द्यौ दयाल, सुर नत मुनि खग पूजैं त्रिकाल ।
जिन साठ जिनालय की जयमाल, वरणौं चितमैं धरिकैं खुस्याल ॥

आर्या–छन्द—

नदीस्वर वर दीप चतुर्दिश माही सुराजते भवनं ।
वंदौ पूजौं सुरपति अष्टदिना निरंतरं सुमरं ॥

---

१ हृदय, बुद्धि २ शून्य ३ देववाणी, सस्कृत. ४ कम. ५ दोनो हाथ.
६ खडे होकर.

छन्द—

अष्टमं दीप नंदीश्वरं सोहई, एकसौ त्रेसठि कोडि जोजन लही ।
लक्ष चौरासिये एक दिश जानिये, अधिक विस्तार सूची तणी मानिये ॥

आर्या छन्द—

छह शत पचपन कोटी ऊपरि तेतीस लक्ष जानीयं ।
जिनवर जिन प्रतिमा लखि सुरपति सुर राग खेलंती ॥

छन्द —

चार दिश चार अंजनगिरि राजही, सहस चौरासिया एक दिश छाजही।
ढोल सम गोल ऊपर तलै सुन्दरं, भवंन बावन प्रतिमा नमौं सुखकरं ॥

आर्या—

अंजनगिरि पर मन्दिर रतनमई बिंब शांतिमुद्राय ।
पद्मासन धनु पणसत तुंग नमौ वीतरागाय ॥

छन्द—

सोल वापीन मधि सोलगिरि दधिमुखं,
सहस दश महा जोजन लखत ही सुख ।
बावरी कौन दो माहि दो रतिकरं,
भवन बावन्न प्रतिमा नमौ सुखकरं ॥

आर्या —

इक अंजनगिरि चवदिश वापी मधि वोर दधि मुखं धवलं ।
चव दिश षोडश गिरिपर, जिन आवास राजते श्रेष्ठं ॥

छंद—

एक इक चारि दिश चार शुभ बावरी,
एक इक लाख जोजन अमल जलभरी।
चहुँ दिशा चारि वन लक्ष जोजन वरं,
भवन बावन्न प्रतिमा नमौं सुखकरं॥

आर्या—

नन्दीश्वर चव दिशमैं चव चव वापीन कोन दो रतिकर।
सुवरणमय अति सोहै सुरपति पूजैं सु श्रीजिनं चरनं॥

छन्द—

शैल बत्तीस इक सहस जोजन कहे,
चार सोलै मिलै सर्व बावन लहे।
एक इक शीश पर एक जिन मन्दिरं,
भवन बावन्न प्रतिमा नमौं सुखकरं॥

आर्या—

नन्दीश्वर महद्दीपे इक दिश अंजन सुदधिमुखं रतिकर।
इक चव वसु चारौं दिश बावन जिनगेह सजजं स्वामी॥

छन्द—

ग्यारमा दीप कुण्डल वरं जानई,
मध्य कुण्डलगिरं चवदिशं मानई।
पूर्व दक्षिण पश्चिम्म उत्तरदिशं,
चव जिनं गेह वन्दौं सु मस्तक नयं॥

आर्या—

तेरम रुचिकर द्वीपे मध्य सुगिरि नाम रुचिक चव दिशमें ।
इक दिशमें इक गेहे चव दिश माहीं सु चार जिन आलय ॥

छन्द—

दीप त्रय मध्य जिन मन्दिरं सोहई,
साठि जिनगेहप्रति गेह वसु मोहई ।
अधिक शतक एक जिन बिंब रतननिमई,
आठ शुभ मंगल द्रव्य धर शुभमई ॥
बिंब अठ एकसौ रतनमय सोहही ।
देव देवी सरव नयन मन मोहही ॥
पांचसै धनुष तन पद्म आसन परं ।
भवन जिन साठि प्रतिमा नमौं सुखकरं ॥
लल नख मुख नयन श्याम अरु सेत हैं,
श्याम रंग भौंह सिर केश छवि देत हैं ।
वचन बोलत मनौं हसत कालुष हरं,
भवन जिन साठि प्रतिमा नमौं सुखकरं ॥
कोटि शशि भानु द्युति तेज छिप जात है,
महा वैराग परिणाम ठहरात है ।
वैन नहीं कहै लखि होइ सम्यक धरं,
भवन जिन साठि प्रतिमा नमौं सुखकरं ॥

पद्धड़ी छन्द—

जय सौधर्मादिक कल्पवास, परिवार सहित बहु गुण निवास ।
व्यन्तर ज्योतिष भावन सुर, सब इन्द्रनि करि वंदित स्वमेव ॥

आवैं अष्टान्हिक दिननि माहि, अयवार विषैं पूजन रचाहि ।
क्षीरोदधि जलतैं करिऽभिषेक, मंगल गावैं ध्यावैं अनेक ॥
जल गंध पुष्प बहु सुधापिंड, रतननिके दीपक धूप मंड ।
अमृतफल वर युत अर्घलाय, फिरि आरति करि निज सीस नाय ॥
जै हरषत हुव नाचैं सुरेन्द्र, सुर ललना सग बाजे बजेन्द्र ।
जै द्रुम द्रुम द्रुम बाजे म्रदंग, सारगी सन नन सार रंग ॥
किंन सकिंनन किन किन रटत, छलरच्छाछन घुघरू खटंत ।
तननं तननं तन तान लेत, ननन ननन नन तार देत ॥
छम छम छम छम सुरतिय नचंत, चम चम चम चम कुचि देहवन्त ।
नम नम नम नम नम नमत पाइ, जिनराज छवी निरखैं अघाय ॥
बहु सुर सुरललना इन्द्र संग, जह रास मण्डलो रस अभंग ।
ताथेइ ताथेइ थेइ धरत ताल, चटपट अटपट पट सब सुनाल ॥
गंधर्व वीन मुहचंग सूर, यौं गान करैं जिनवर हजूर ।
बहु भक्तिलीन सुरपति जु होइ, जिन थुति करनेकौं उमग सोइ ॥
जै जै तुम केवलज्ञान धार, जै मोह तिमिरकौ चूर सार ।
जग रक्षक करुनावन्त देव, हम तुम चरणन की होहु सेव ॥
यह अरज लीजियै भो दयाल, मुनिगण पूजैं तुमकौ त्रिकाल ।
यौं भक्ति करैं सुरपति सुजाइ, ह्यां शक्ति रहित जिन गुण सुगाइ ॥
हम तुच्छ बुद्धिकौं पाइ देव, क्यौं करि सुकहैं निज देहु सेव ।
हे करुणासागर दीन जान, जग दुखतैं काढौं सुजस खान ॥
इह मंगल पाठ कियौ बनाइ, मंगल करता हमकौं सुहाइ ।

दोहा—

साठि जिनालय आरती, तिर्यग क्षेत्र मझार ।

कही भक्तितैं अल्पमति, जग जीवन सुखकर ॥

(जयमालादि महार्घ)

कवित्त—

मंगल अरहंत सिद्ध साधु श्रुतचैत्य चैत्यालय जिनवृष जान ।
नाम थापना द्रव्य भाव खित काल छहौं विधिकर अघ हान ॥
पूजन इनका जासु पाठमैं मंगल पूजापाठ बखान ।
वांचै सुनैं भाव सेती भवि जग सुख लहि पहुँचै निर्वान ॥
बालकपनतैं पाठ पढै नर विद्या अधिकी लहै निदान ।
जात रूप कुल लावन वपुमैं रोग रहित संपति अधिकान ॥
पुत्र पौत्र युवती वर लक्षण राजमान हुव राजमहान ।
सुर सुरपति खग नरपति ह्वै कर कर्म काटि पहुँचै निर्वान ॥

(इत्याशीर्वादः)

॥ इति तिर्यंचक्षेत्र अकृत्रिम चैत्यालय साठि-जिनपूजा समाप्ता ॥

卐

अथ ज्योतिषलोक-जिनग्रह पूजा

कवित्त—

जुत सत छप्पन वर्ग करौ भवि पैसठि सहस पांचसै जान ।
छत्तिस अंगुल जगत प्रतरकौं ताके संख्य भाग परवान ॥
असंख्यात श्रीजिनग्रह सोभैं जोतिषलोकविषै भवि जान ।
तिनकी थुति करिकै आह्वानन करौं सुमस्तक नय हित ठान ॥

ॐ ह्रीं दोयसै छप्पन का वर्ग पैंसठि हजार पांचसै छत्तीस सूच्यांगुल का वर्ग प्रतरांगुल सो पण द्वीप्रमाण प्रतरांगुल का भाग

जगत प्रतरकौ दिये जो प्रमाण होय तितने ज्योतिषी है, बहुरि संख्यात ज्योतिषी एक बिंबविषै पाइयै, एक एक बिंबविषै एक एक चैत्यालय पाइये तातैं ज्योतिषीनि के प्रमाणकौं संख्यात का भाग दिये बिंबनिका वा चैत्यालयनिका प्रमाण आवै तिनि चैत्यालयनिविषैं विराजमान बिंब श्रीजिना: !!!

अत्रावतरावतर संवौषट् आह्वाननं ॥

" " अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठ: ठ: स्थापनं ॥

" " अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणं ॥

नाराच छन्द—

हिमवन उद्भवेन मिष्ट इष्ट लेइ वारया,
जिनेन्द्र चर्न धार देइ पाप मैं पछारया ।
चन्द सूर ग्रह नक्षत्र तारकादि पंच है,
असंख्य बिंब माहि श्रीजिनं ग्रहं सुसंच है ।।

ॐ ह्रीं पंचप्रकार ज्योतिषी चन्द्र सूर्य ग्रह नक्षत्र तारेनि प्रतिबिंबनिमैं जिनग्रह सम्बन्धी श्रीजिनेन्द्रेभ्यो जलं० ।।

चंदनेन गंगजलेन केसरेन घृष्टया ।
सुचर्चकै। जिनेन्द्र चर्न भवाताप कृष्टया ॥
चन्द सूर ग्रह० ।। चन्दनं० ॥

चन्द पूर्ण किर्न वा द्रकोट गंध समजुतं ।
तन्दुलेन पुंज देइ जिनपदेय अग्रतं ॥
चन्द सूर ग्रह० ॥ अक्षतं० ॥

गुलाब केतुकी जुही सु केवरौ अनूप है ।
सुगंधतैं मधू झंकार पूजतेन भूर है ॥
चन्द्र सूर ग्रह० ॥ पुष्पं० ॥

व्यंजनेन षट् रसेन घेवरादि संयुतै ।
क्षुधादि रोग कौं हरेइ पूज्यते जिनोधतै ॥
चन्द सूर ग्रह० ॥ नैवेद्यं० ॥

रत्नदीपतैं अंधेर मन्दिरे पलाय है ।
जिनेन्द्र चन्द्र पूजतै सुमोह सूल जाय है ॥
चन्द सूर ग्रह० ॥ दीपं० ॥

चन्दनादि सुद्ध द्रव्य चूर्ण अग्नि खेइयै ।
जिनेन्द्र चर्न पूजते अष्ट कर्म कौं नसेइयै ॥
चन्द सूर ग्रह० ॥ धूपं० ।

श्रीफलादि पक्व मिष्ट रस सुवर्न ल्याइयै ।
जिनेश अग्रधार मोक्ष श्रेष्ठ फल सु पाइयै ॥
चन्द सूर ग्रह० ॥ फलं० ॥

नीर गंध आदि अष्ट द्रव्यकौं संजोइकैं ।
श्री जिनेश पाय पूजि नाचि गाय कोइकैं ॥
चन्द सूर ग्रह० ॥ अर्घं० ॥

卐

अथ प्रत्येक पूजा—

अडिल्ल—

चन्द्र अर्क ग्रह और नक्षत्तर तार है ।
भेद पंच परकार बिंब जौ सार है ॥
इक इक बिंबनि माहिं एक जिनगेह है ।
पूजौं जिन प्रतिमा अंग नय धरि नेह है ॥

ॐ ह्रीं पंच प्रकार ज्योतिषीदेव बिंबनिमैं श्रीजिनगेह-श्रीजिनेन्द्रेभ्यो अर्घं० ॥

सात सतक नव्वै पर तारे राज हैं ।
दश ऊपरि रवि असी चंद सुभाज हैं ॥
चव नक्षत्र बुध चारि तीन परि शुक्रजी ।
तीन गुरू अर तीन अंगारक चक्रजी ॥

दोहा—

तीन ऊपरैं शनि कह्यौ, नवसै तुंग महान ।
इकसै दश जोजन महा, जिन पूजैं सुखमान ॥

ॐ ह्रीं चित्रापृथ्वीतैं सातसै नव्वै जोजन तारौंके बिंब हैं, ता ऊपरि दश सूर्य, तापरि अस्सी चंद्रमा, तापरि चारि नक्षत्र, ता ऊपरि च्यारि जोजन बुध, तिनतैं तीन शुक्र, तिनतैं तीन ऊपरि गुरु, तिनतैं तीन जोजन ऊपरि मगल, तिनतैं तीन जोजन ऊपरि शनिश्चर इक इकमैं दश जोजन की मुटाई लिये नवसौ जोजन तुग ज्योतिप चक्र-तामै जिन चैत्यालयनिमैं श्रीजिनेन्द्रेभ्यो अर्घं० ॥

अडिल्ल—

ग्रह अट्ठासी विषै पांच घटि जानियैं ।
बाकी तेरासी तिन नगर प्रमानियैं ॥
बुध शनिश्चर बिंब विराजैं सास्वते ।
पूजौं जिनग्रह हरषित बहु वकैं राजते ॥

ॐ ह्रीं तिरासी ग्रहनिके नगर बुध शनि बिंबमध्य सास्वते श्री जिनग्रह-जिनेभ्यो अर्घं० ॥

दोहा--

सात सतक निव्वै गिनौं, अंत सतक नवमान ।
एक सतक दश ऊपरैं थूल ज्योतिषी जान ॥

ॐ ह्रीं असंख्यात ज्योतिषी मध्य जिनग्रह-श्रीजिनेभ्यो अर्घं० ॥

चौपाई—

तारनितैं तारनिका अंतर, जानि बराबरतैं भव अन्दर ।
जघनि मध्य उत्कृष्ट बखान, कोस सातवां भाग प्रमान ॥
मधिपचास उत्कृष्ट हजार, जोजन भाषे श्रीजिन सार ।
गेह असंख्यबिंब भगवान, पूजौं आठौं द्रव्य मिलान ॥

ॐ ह्रीं तारनितैं तारनिका तिर्यक् कहियै बराबरितैं अन्तर जघन्य कोस एक सातवां भाग मध्यम पचास जोजन, उत्कृष्ट हजार जोजन अंतर सहित बिंबनिमैं श्रीजिनग्रह-श्रीजिनेभ्यो अर्घं० ॥

अडिल्ल -

गोलेकौ खंड अर्द्ध अर्द्ध नीचैं करौ ।
ऊपरि थापन होई तिसी विधि उर धरौ ॥
जोतिसदेव विमान नगर तामैं वसै ।
जिनग्रह तिनमैं राजैं वसुविध जज असै ॥

ॐ ह्रीं ज्योतिषदेवनिके विमान अर्द्ध गोले के आकार, तिनमैं नगर श्रीजिनग्रहमंडित श्रीजिनेन्द्रेभ्यो अर्घं० ॥

जोजन इकसठि भाग चन्द्र छप्पन कह्यौ ।
रवि अडतालिस भाग कोस भागँव लह्यौ ॥
किंचित ऊन गुरू अरु बुध मंगल सनी ।
अर्द्ध कोश परवान यजौं जिनवर धनी ॥

ॐ ह्रीं ज्योतिषीदेवनि के विमान व्यास जोजन एक के इकसठ भाग, मध्य छप्पनभाग, चन्द्रमा अडतालिस भाग, सूर्य कोस एक, शुक्र किंचित्, गुरु, बुध, मंगल अर्द्धकोस प्रमाण सम्बंधो श्रीजिनग्रह-श्रीजिनेन्द्रेभ्यो अर्घं० ॥

तारनि के विमानिका व्यास सु जानियैं ।
कोस चौथाई आध पौण कोसानियै ॥
कोस नक्षत्तर व्यास मुटाई अर्द्ध है ।
सब ज्योतिष को मान जिनेश्वर वृद्ध है ॥

ॐ ह्रीं ज्योतिषव्यास सम्बंधो श्रीजिनग्रह-श्रीजिनेन्द्रेभ्यो अर्घं० ॥

दोहा—

राहु केतु इन द्वयनिके, किंचित कम जोजन्न ।
शशि रवि नोचैं नभगमन, जग जिनवानी धन्न ॥
मास छठे शशि रवि प्रति, राहु केतु आछाह ।
ग्रहण इसीको कहत हैं, यजौं जिनालय पांह ॥

ॐ ह्रीं राहु-केतुके विमान चिंकित् ऊन जोजन एक सूर्य चन्द्र नीचै गमन, छठे मास चन्द्रमा विमान राहु सूर्यका विमान केतु आच्छादै-इसीको ग्रहण कहैं--श्रीजिनेभ्यो अर्घं० ॥

शशि रवि नीचै अंगुलं, चवप्रमाण अंतराह ।
राहुकेतु ध्वजदंडकौं, यजौं जिनेश्वर पांह ॥

ॐ ह्रीं चन्द्रके नीचैं राहुके विमान की ध्वजादंड चार अंगुल प्रमाण अंतर, रविकैं नीचैं केतु के विमान की ध्वजादंड चार अंगुल प्रमाण अंतर जिनग्रह-श्रीजिनेन्द्रेभ्यो अर्घं० ॥

चन्द्र शीत रवि उष्णकर, बाहन बारह सहस ।
शुक्र अढाईसै किरनि, शेष मंद यज जिन्ह ॥

ॐ ह्रीं चन्द्रमा-सूर्य शीत-उष्ण बारह बारह हजार किरनि, शुक्र अढाईसै किरनि शेषमन्द किरनि-श्रीजिनेन्द्रेभ्यो अर्घं० ॥

अडिल्ल—

शशिमण्डल षोडशवा भाग बढै घटै ।
शुक्र कृष्णपक्ष अंत तही सित असिततै ॥
जोजन इकसठि भाग चन्द छप्पन लहे ।
कला इकसठित्रय वढै घटै जिनजी कहे ॥

दोहा—

इक दिन दिन सितपक्षमैं, बढै कला शशि एक ।
तैसे ही घटि असितमैं, राहु तथा स्वयमेक ॥

ॐ ह्रीं चन्द्रमाविमान जोजन एकका इकसठि भागमैं छप्पन-भाग विमान, तामै एक एक भाग शुक्लपक्षमैं बढै पूनम तक, तैसें कृष्णपक्षमैं घटै स्वयमेव तथा केई आचार्यनिके मतमैं राहुके विंबनिसै, श्रीजिनेन्द्रेभ्यो अर्घं० ॥

अडिल्ल—

सिंह वृषभ हस्ती अर जटिल प्रमानियैं ।
देव होइ ले चालैं दिश प्रति मानियैं ॥
शशि रवि के सोलह सहस जु जानियैं ।
ग्रह वसु चौंवन छत्र दोई तारानियैं ॥

ज्योतिषी गिरिकी प्रदक्षिण नित्यप्रति गमना करैं ।
नक्षत्र तारे एक पथमैं गमन यौं निशदिन धरैं ॥

दोहा—

शशि रवि ग्रह ये तीन बिंब, पथ अनेक सचार ।
परधि कदाचित् कैइ इक पूजौं जिनग्रह सार ॥

ॐ ह्रीं ज्योतिषमंडल श्रीजिनग्रहसम्बन्धी श्रीजिनेभ्यो अर्घं० ॥

अडिल्ल—

दोइ चार बारह जुग चालिस जानियै ।
बहत्तरि ज्योतिष युत शशि रवि मानियै ॥
जंबू लवन धातकी कालोदधि विषै ।
पुष्कराद्धंमैं श्रीजिनग्रह पूजौं लखै ॥

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपमैं दोय चन्द्रमा दोय सूर्य, लवण मैं चार चंद्रमा चार सूर्य, धातकीखंडमैं बारह चन्द्रमा बारह सूर्य, कालोदधिमैं ब्यालिस ब्यालिस चन्द्रमा सूर्य, पुष्कराद्धंमैं बहत्तरि चन्द्रमा बहत्तरि सूर्य परैं स्थिर-श्रीजिनेभ्यो अर्घं० ॥

प्रथम दीप छत्तीस एक शत जानियैं ।
उनतालीस धरौ दधिमैं परमानियै ॥
एक हजार दश दूजे दीप विषै लसै ।
इकतालीस हजार बीस से कम लसै ॥
कालोदधिके माही पुष्करदीपमै ।
सहस तिरेपन द्वै सत तीस लखौ जमैं ॥
ध्रुवतारे थिर रूप सदा इक थल रहै ।
श्रीजिनग्रहमैं पूजौं जिन जो क्रम दहै ॥

सतरै उनतिस जोजन का अब भाग एकसौ चवली ।
एक भाग ताकौ अब लीजै जिनग्रह पूजौं धवली ॥

ॐ ह्रीं सूक्ष्मपरधिवलय व्यासतैं शशितैं शशिका रवितै रविका अंतर एक लाख एक हजार सतरै उनतीस जोजन की एकसौ चवालीस भागमै एक प्रमाण-श्रीजिनेन्द्रेभ्यो अर्घं० ॥

चंद्र एक परिवार जु इतना अट्ठासी ग्रह जानौं ।
अट्ठाइस नक्षत्तर गिणना तारे सुनि उर आनौ ॥
छ्यासठि सहस जानि नवसत अर पिचहत्तर गनि लीजै ।
कोडाकोडी श्रीजिनमंदिर जज करि आनंद पीजै ॥

ॐ ह्रीं चन्द्रमा का परिवार अट्ठासी ग्रह, अठाइस नक्षत्र छ्यासठि हजार नवसै पिचहत्तर कोडाकोडी तारे तिनमैं जिनमंदिर-श्री जिनेभ्यो अर्घं० ॥

अडिल्ल—

नेमिचंद आचारज जगमैं सूर हैं ।
भव्य हृदय अंधियार दूर बुधि पूर है ॥
जिन त्रैलोक्य कथन कीनौं ग्रंथनि विषैं ।
भाषा टोडरमल्ल करी किंचित लखै ॥
गहन सूक्ष्म गणना का कथन कीनो जहां ।
बड़ी बुद्धिका काम नहीं समझै तहाँ ॥
बुधि सारू ले अर्थ सुगम इसमैं कहौ ।
श्रीजिनग्रह पूजनकौं हम निहचै लहौ ॥

ॐ ह्रीं श्रीजिनग्रह सम्बंधी श्रीजिनेन्द्रेभ्यो अर्घं० ॥

पंचभेद सुर ज्योतिष पटल बखानियैं ।
चन्द्र सूर ग्रह नक्षत्तर परमानियैं ॥
तारे बिंबनिमैं श्रीजिनवर गेह हैं ।
जानि असंख्य यजौं मैं मन वच नेह है ॥

ॐ ह्रीं चद्रमा सूर्य ग्रह नक्षत्र तारे असख्यात जम्बूद्वीप लवण समुद्रतैं स्वयंभूरमण उद्धिपर्यंन्त असख्यात वलय तिनमैं श्रीजिनग्रह-जिनप्रतिमा-श्रीजिनेभ्यो अर्घं० ॥

जयमाल–आर्या–छन्द—

पारसप्रभु करुणानिधि जग जिय दुखियाय जान दुख हारौ ।
हम वदैं तुम चरननि चरण रहौ हृदयाबुजं सुथिरो ॥

पद्धडी–छन्द—

जै जै जै जै तुम जगत पूज्य, दुख हर सुख करनेकौं न दूज ।
तुम शिव सुख करता भो दयाल, वदैं सुर नर तुमकौं त्रिकाल ॥
तुम स्वयंबुद्ध जगबोधदाय, शिवमगकौ पथ भविकौं दिखाय ।
तुम बुद्ध सही शुभ बुद्ध योग, सुखकर शंकर यातैं प्रयोग ॥
त्वं सही विधाता मोक्षपंथ, पुरुषोत्तम तुम शिव अर्थ थंथ ।
तुम केवलज्ञान प्रकाश धार चर अचर लखन हमकौं विचार ॥
इह अरज हमारी लेहु नाथ, तुम चरननिकौं हम धरै माथ ।
शिव सुख द्यौ ना निज सेव देहु, बुध धरौं निवारौ दुःख मेहु ॥
जोतिस बिबनिमैं जिन सुगेह, तिनकी जयमाल रचौं सुनेह ।
इनि भेद पचविधि कह्यौ देव, शशि रवि ग्रह नख तारे जिनेह ॥
इह नभ मडलमैं रहौ पूर, चर अचर सुरा वै ज्योति भूर ।
नर क्षेत्र विशै विहरत सदीव, बाहिर थिर रूप दिपै अतीव ॥

इक चंद सूर ग्रह वसु असीय, अट्ठाइस नक्षत्तर गिनीय ।
तारौं की गणना सुनौं भाइ, छ्यासठि हजार नवसत[१००] बताय ॥
पिचहत्तरि कोडाकोडि गाइ, इक वलय जिनेश्वर ध्वनि बताइ ।
इस दीप जबुके विषै जानि, जुग वलय सदा विचरै प्रमान ॥
लवनोदधि चव बारह जु दोप, कालोदधि जुग चालीस नीप ।
श्री पुष्करार्द्धमैं चन्द्र सूर, बहत्तरि भाषे जिन हजूर ॥
नरक्षेत्र वलय जोतिस महान, गिरि परदक्षण नित रूप मान ।
ध्रुवतारे भो इसमैं बताइ, गिनती जिनवर जी कही गाइ ॥
वर मानुषोत्र गिरि परैं जाइ, पंचास सहस जोजन कहाइ ।
इक वलय मांहि इक शत गिनेय, चौंवालिस शशि रवि पर सुभेय ॥
इक लक्ष परै चव अधिक जान, दीपांनक यौं इक लख प्रमान ।
फिरि सहस पचास उदधि पराइ, जुग सत अठासी शशि दिनाइ ॥
इस भांति स्वयंभू उदधि अत, ज्योतिस मंडल कौ गिनौ सन्त ।
दोपोदधि सागर दोय अर्द्ध, गिनगा असंख्य रोमन सु अर्द्ध ॥
दीपोदधि गणन असंख भेव, तिह वलय असंख्याते स्वमेव ।
शशि आदिक बिंबनिमै सुगेह, जिनप्रतिमा राजैं वसु सतेह[१०८] ॥
इक इक विमानमै सख्यदेव, जिन पंचकल्यानक करैं सेव ।
अति मोद धरैं आवै जुहाय, तहां कल्यानक प्रथवी सुहाय ॥
जोतिस सुरकौ नहि पारवार, श्रीनेमिचदजी बुध अपार ।
त्रैलोक्यसार कथनी भनेइ, टोडरमल भाषाकौं रचेय ॥
नभ मंडल ज्योतिसबिंब माहि, श्रीजिनग्रह मैं जिनबिंब जाहि ।
पद्मासन मुद्रा शांतिरूप, शुभ तुग रतनमय अति अनूप ॥

सिंहासन राजै छत्र शोभ, सित चंवर ढरै तन दुति अछोभ ।
मंगल वसु द्रव्य धरे मनोज्ञ सुर सुरी नचैं धरि भक्ति योग ॥
पण भेद ज्योतिषी इन्द्र आय, इन्द्रानी ज्योतिषनी सुहाय ।
वसु भेद देव परिवार सेव, पूजै ध्यावैं वंदै थुतेव ॥
केइ बाजे बजवावैं अपार, केइ गान करै सुरतान तार ।
केइ नृत्य करै अति भक्ति लाइ, जिनजी आगै जुग कर मिलाइ ॥
तुम जगत कूपतैं कर उधार, भव-वनी जलावन मेघ-धार ।
दुख-जल सोखन दिन पति महान, भव-ताप मिटावन चंद्र मान ॥
तुम नाम-मत्र अहि-अघ नसाय, तुम नाममंत्र विष अमृत थाय ।
तुम नाममंत्रतैं स्वर्ग-मोक्ष, जिय नर्क, निगोद मिटै अदोष ॥
इम भक्ति करैं लहि पुन समूह, छेदैं अघकौ हरिहैं जुदूह ।
हम ह्यां जिनवरकौं यजैं सार, आरति करि भक्ति करैं अपार ॥
हे करुणासागर दीनबन्धु !, भव भवकौ मेटौ दुख प्रबंध ।
तुम बिन मेरैं नहि और दूज, दुख मेटौ जिन त्रैलोक्य पूज ॥

दोहा—

ज्योतिषमंडल जिनभवन, श्रीजिनदेव महत ।
आरति कर जय नाम तुम, करहु कर्मकौ अंत ॥ (जयमालादि महार्घं०)

कवित्त—

मंगल अरहंत सिद्ध साधु श्रुत चैत्य चैत्यालय जिनवृष जान ।
नामथापना द्रव्य भाव क्षित काल छहौं इहि विधि परवान ॥
पूजन इनका जासु पाठमैं, मंगल पूजा पाठ बखान ।
वांचै सुनै भावसेती भवि, जग सुख लहि पहूँचै निर्वान ॥

बालकपनतै पढै पाठ जौ विद्या अधिकी लहै निदान ।
जात रूप कुल लावन वपुमै रोग रहित संपति अधिकान ॥
पुत्र पौत्र युवती वर लक्षण राज्यमान्य बहु राज महान ।
सुर सुरपति खग नरपति ह्वै कैं कर्म काटि पहुंचै निर्वान ॥

(इत्याशीर्वादः)

(इति ज्योतिषचक्र पूजा समाप्ता-मध्यलोक-अकृत्रिमजिनालयपूजनं सम्पूर्ण)

卐

अथ ऊर्द्धलोक-जिनगृह पूजा

कवित्त-

ऊरधलोक महा उत्तम है षोडश स्वर्ग कल्पवासीय ।
कल्पातीत जानि अहमिंद्र नौग्रीवक अनुदिश जानीय ॥
पंचोत्तर सर्वार्थसिद्धि तक त्रेसठि पटल श्री मंदरीय ।
लख चौरासी सहस सत्याणव तेइस जिनमैं जिन प्रतमीय ॥
नव सत सतरह कोटि जु मरसठ लक्ष और वसु सहस भनेय ।
चार शतक चवरासी ऊपर जिनबिंब सोभै अधिक दिपेय ॥
मध्यलोकतैं सप्त तुंग भनि राजू किंचित हीन रहेय ।
तामैं शान्त रतनमय राजै आह्वानन जुग जोर करेय ॥

ॐ ह्रीं ऊर्द्धवलोके कल्पकल्पातीत पटलस्थविमानेषु श्रीजिनचैत्यालय सम्बन्धी श्रीजिनेन्द्राः अत्रावतरतावतरत संवौषट् अह्वाननं ।
,, ,, ,, अत्र तिष्ठत तिष्ठत ठः ठः स्थापनं ॥
,, ,, ,, अत्र मम सन्निहितो भवत भवत वषट् सन्निधीकरणं ॥

अथाष्टकं-चाल होली की

गंगाजल झारी कंचन भरि शीतल मिष्ट सु लावूं ।
निर्मल श्रीजिन चरण धार दे कर्म मैल नसवावूं ॥
सहज निर्मल पद पाऊँ ॥

इहि विधि पूज रचाऊँ जातैं भव फेरि न आऊं ।
स्वर्गलोक मैं श्रीजिनमन्दिर जिनप्रतिमा गुण गाऊँ ॥
चौरासी लख सहस सत्याणव तेइस शीश नमावूं ।
सहज निर्मल पद पाऊँ ॥ जलं० ॥

मलयागर चदन शुभ बावन केशर संग घसाऊँ ।
रत्न कटोरी मैं धरि श्री जिनचरण चरचि हरषाऊँ ॥
भ्रमन आताप मिटाऊँ ।
इहि विधि० ॥ चन्दनं० ॥

तंदुल सित द्वयकोटि बराबरि गंध चंदवत लाऊँ ।
पुंज धरौं श्रीजिनवर आगै हरष हरष गुन गाऊं ॥
अखयपदकौं ललचाऊँ ॥
इहिविधि० ॥ अक्षतं० ॥

कमल केतुकी जुही चमेली अति सुगन्ध महकाऊ ।
श्रीजिनवरके आगै धरिकैं हाथ जोरि सिर नाऊ ॥
काम के बाण मिटाऊं ॥
इहिविधि० ॥ पुष्पं० ॥

पूरी फेनी घेवर गूझा खुरमा लाडू लाऊं ।
सद अति स्वाद छहौं रस गर्भित श्रीजिन अग्र धराऊं ॥

क्षुधादिक रोग हराऊं ॥
इहिविधि० ॥ नैवेद्यं० ॥

रतनदीप तमहर परकाशक शक्तिहीन कहां पाऊं ?
सद्य घीव वाती कपूरकी अग्नि माहि प्रजलाऊं ॥
जगतपति यज हरषाऊं ॥
इहिविधि० ॥ दीपं० ॥

कृष्णागर चन्दन दशविधि ले गंध द्रव्य रलचाऊं ।
चूरण करि धूपायनि माही खेय मोद मन लाऊं ॥
श्रीजिनचरण चढाऊं ॥
इहिविधि० ॥ धूपं० ॥

श्रीफल लोंग छुहारे पिस्ता किसमिलि दाडिम लाऊं ।
श्रीजिनवर के आगैं जज करि मुक्ति महाफल पाऊं ॥
फेरि जगमैं नहिं आऊं ॥
इहि विधि० ॥ फलं० ॥

जल फल वसुविधि ले उत्तमविधि अर्घ बनाई सुभाऊं ।
श्रीजिन पूजि हरष धरि मनमैं नाच गाय बलि जाऊं ॥
मनुषभवके फल पाऊं ॥
इहि विधि० ॥ अर्घं० ॥

अथ प्रत्येक पूजा

अडिल्ल ---

*लख चौरासी सहस सत्याणव जानियै ।
तेइस अधिक विमान ऊर्द्धमैं मानियैं ॥

* ८४९७०२३ वैमानिक देवो के विमान एव जिनचैत्यालयो की संख्या ।

इक विमानमें इक जिनमन्दिर सोहनौं ।
तामैं श्रीजिनदेव बिम्ब जज मोहनौं ॥

ॐ ह्रीं स्वर्गलोक विमान-संख्या प्रमाण जिनमन्दिरेभ्यो अर्घं० ॥

गीता-छन्द—

सौधर्म[1] अरु ईशान जानौं सनत्कुमार महेन्द्र है ।
ब्रह्म ब्रह्मोत्तर कह्यौ जिन लांतव। दिवसेन्द्र है ॥
कापिष्ट वसुमौं शुक्र नवमौ महाशुक्र सु सोभनौ ।
सतार अरु सहस्रार आनत प्राणत जिनजी गनौं ॥
आरणाच्युत स्वर्ग षोडश इन्द्र[2] बारह जिन कहे ।
आदिके चव अन्त चव मधि आठमें चव सुभ लहे ॥
कल्प[3] संज्ञा जुगल[4] वसु है इन्द्र तह बारह सही ।
तिन विमाननिमैं सु श्रीगृह पूजिहौं वसु अग ही ॥
ॐ ह्रीं विमानस्थ श्रीजिनमंदिरेभ्य अर्घं० ॥

अडिल्ल-छन्द—

स्वर्ग ऊपरैं नौग्रीवक[5] नौ पटल है ।
अधिके त्रय मधि त्रय ऊरध त्रय धवल है ॥
नौ अनुदिश वैमान अंत पंचोत्तरा ।
जिनमैं श्रीजिनचैत्याले सर्वोत्तरा ॥

ॐ ह्रीं नवग्रीवक नव अनुदिश पंच अनुत्तर विमानस्थ श्रीजिनेभ्यो अर्घं० ॥

---

१ ये १६ स्वर्गों के नाम हैं. २ सोलह स्वर्गों में १२ इन्द्र होते हैं. ३ स्वर्गों की कल्प संज्ञा है. ४ स्वर्ग दो दो के हिसाब से स्थित हैं—कुल ८ युगल हैं. ५ नव ग्रैवेयक ३-३ के हिसाब से हैं.

अर्चि[1] अर्चिमालनि अरु वैर वैरोचना ।
पूर्वादिक चव दिशमै सोहै मोचना ॥
सोम सोमधर रूप अंकए फटिकरा ।
चव विदिशामै जानि श्रीग्रह एकरा ॥
मध्य माहि आदित्य नाम इन्द्रक कहा ।
नौ अनुदिश विमान के नाम जु सुभ लहा ॥
तिनमै , श्रीजिनगेह विराजै सार जी ।
पूजौं वसु विधि अग नाय क्रम हार जी ॥

ॐ ह्रीं नव अनुदिशविमानस्थ श्रीजिनमन्दिरेभ्य: अर्घं० ॥

विजय[2] वैजयन्त और जयन्त सु बाखानियै ।
अपराजित चव दिशनि ,मध्य उर आनियैं ॥
सर्वारथसिध मध्य जान इन्द्रक जहां ।
पूजौं श्रीजिन मन्दिर सोभैं मैं तहां ॥

ॐ ह्रीं पंच-अनुत्तर विमानस्थ श्रीजिनमन्दिरेभ्यो अर्घं० ॥

ड्योढ ड्योढ गिर तलेतैं सुरग सुराजई ।
जुगल सुरंग अरु जुगल सुरंग वर छाजई ॥
अर्द्ध अर्द्ध राजू ऊपरि छह जुगल हैं ।
इक मैं नौग्रीवक[3] अनुदिश पण सुकल है ॥

ॐ ह्रीं सुमेरुपर्वत के तलै डेढ़ राजू तुग सौधर्म-ईशान है, डेढ़ राजू वासै ऊपरै सनत्कुमार माहेन्द्र युगल है, ता ऊपरि आध आध

---

१ ये ९ अनुदिश के नाम हैं २ ये पाँच अनुत्तर है ३ नवग्रैवेयकके नाम—सुदर्शन, अमोघ, सुप्रवुद्ध, यशोधर, सुभद्र, सुविशाल, सुमनस, सौमनस, प्रीतिकर.

राजूमैं छह युगल १२ स्वर्ग हैं और एक राजूमैं नौ ग्रीवक, नव अनुदिश, पच अनुत्तर विमान हैं, ऊपरि सिद्धशिलामैं सिद्ध समूह श्री जिनेभ्यो अर्घं० ॥

स्वर्ग प्रति कितने जु विमान हैं।
गिनति ताकी सुनि भवि जान हैं॥
गिनि जु बत्तिस अट्ठाईस जी।
लक्ष बारह आठ कहीस जी॥
स्वर्ग दो मैं चार सु जानियै।
तीन जुगमैं सहस प्रमानियै॥
पचास चालिस छह जिन जी कही।
चारमैं सत सप्त भणों सही॥
अधो ग्रीवक सौ ग्यारे कहे।
मध्य इक सत सप्त जु जिन बहे॥
ऊरध इक्यावन नव अनुदिशा।
पंच पंचोत्तर जिनग्रह लसा॥

ॐ ह्रीं सौधर्म स्वर्ग मैं बत्तीस लाख विमान, ईशानमै अट्ठाईस लाख, सनत्कुमार मैं बारह लाख, माहेन्द्र मैं आठ लाख, ब्रह्म ब्रह्मोत्तर मैं मिलि चारि लाख, लान्तव कापिष्टमै ४० हजार, शुक्र-महाशुक्र मैं ४० हजार, शतार-सहस्रारमैं ६ हजार, आनत-प्राणत आरण-अच्युत चार स्वर्गमैं सातसै, एक सौ ग्यारह अधोग्रीवकमैं, एंक सौ सात मध्यम ग्रीवकमैं, इक्यानवे ऊर्द्धग्रीवकमैं नव-अनुदिशमैं पंच-अनुत्तरमैं, इस भांति चौरासी लाख सत्याणवै हजार तेईस विमान इतने-तिनमैं श्रीजिनालयस्थ श्रीजिनेभ्यो अर्घं० ॥

प्रथम स्वर्ग जुग कल्प पटल इकतीस हैं।
सनत्कुमार माहेन्द्र सप्त भनि ईस हैं॥
ब्रह्म जुग्ममैं चार परै जुग दोय हैं।
शुक्र युग्ममैं एक परै इक जोय हैं॥
आनतादि चव माहि पटल ए छह कहे।
षोडश स्वर्ग जुगल वसु जानौ सुख लहे॥
बावन पटल सु जानि ग्रीव नौ एक है।
अनुदिशमैं इक पंच पंचोत्तर से कहै॥

ॐ ह्रीं सौधर्म-ईशान जुगलविषैं इकतील पटल, सनत्कुमार-माहेन्द्रमैं सप्त, ब्रह्मब्रह्मोत्तर जुगलविषै चारि, लांतव-कापिष्ठ युगलमैं दोइ, शुक्र-महाशुक्रमै एक, सतार-सहस्रार युग्ममैं एक, आनत-प्राणत आरण-अच्युत स्वर्ग के युग-युग्ममै छह, नौग्रीवकमैं—अधः-मध्य-ऊर्द्ध तीन तीन, अनुदिशमै एक, पंचोत्तरमैं एक, इस भांति त्रेसठि पटल विमानस्थ श्रीजिनमन्दिरेभ्यो अर्घं० ॥

इन्द्रक मध्य विमान पटल के आदि ही।
असंख्यात जोजन अन्तर दूजा दही॥
इस क्रमतैं भवि जानि अंत पर्यंत ही।
नाम कहौं सुनि संत यजौं शिवकंत ही॥

ॐ ह्रीं प्रथम स्वर्ग के प्रथम पटलमैं मध्य इन्द्रक विमान, तातैं असंख्यात योजन परै दूसरे पटल का इन्द्रक विमान है, इस ही क्रम तैं अन्त तक श्रीजिनेभ्यो अर्घं० ॥

आदि नाम रुडगइन्द्रक जिनजीनैं कहा।
सरवारथसिद्ध अन्त विषैं इक लहा॥

गिनत जानि त्रयसठि मध्यमैं राजई।
पूजौं श्रीजिनमन्दिर सोभा छाजई॥

ॐ ह्रीं प्रथमतैं उडग इन्द्रककौं आदि सर्वार्थसिद्धिके अंतके विषैं अवस्थित श्रीजिनेभ्यो अर्घं०॥

गिरिराजाके शिखर रोम अंतर विषै।
प्रथम स्वर्ग को उड इन्द्रक नामै लषै॥
सिद्धसिला ले बारह योजन अधोमैं।
सरवारथ जु विमान अंतका सुधोमैं॥

ॐ ह्रीं सुमेरु रोमांतर उडुतैं विमान तिष्ठै है, अत विषैं सर्वार्थ सिद्धि विमान सिद्धशिल तैं बारह जोजन अधोमैं तिष्ठै है–इसका मधि शनि इन्द्रक–श्रीजिनेन्द्रेभ्यो अर्घं०॥

निज निज वैमाननि ध्वज अंतक पटल लौं।
पृथवी अंत प्रमाण जानि जिय सकल लौं॥
कल्पवासि वा कल्पातीत सु जानियै।
श्रीजिनगृह पूजौं वसु द्रव्य मिलानियै॥

ॐ ह्रीं अपनी अपनी इन्द्रक की ध्वज सो कल्पसम्बन्धी पृथिवी अंत जानना, जैसे सौधर्म–ईशान जुगल विषैं इकतीसवां अंतका इन्द्रक का ध्वजादण्ड जहां है तहां सौधर्म जुगलका अंत है, ऐसैं ही अन्यत्र जानना; बहुरि कल्पातीत सम्बन्धी पृथ्वी अंत लोक का अंत है, तहां कल्पातीत पृथ्वीका अंत–श्रीजिनेन्द्रेभ्यो अर्घं०॥

दोहा—

उड इन्द्रक जोजन कह्यौ, पैंतालीस लखेह।
सर्वारथ इक लक्षका शेष अनुक्रम लेह॥

ॐ ह्रीं इन्द्रकविमान–श्रीजिनेन्द्रेभ्यो अर्घं०॥

वचनिका (गद्य)

मनुष्यक्षेत्र प्रमाण पैंतालीस लाख जोजन व्यासकौं धरै ऋजु-विमान नामा इन्द्रक है। बहुरि सर्वार्थसिद्ध विमान लाख जोजन जम्बूद्वीप समान व्यासकौं धरै है। बहुरि दोऊनिमैं विशेष ग्रहण करियै तहां पैंतालीस लाखमैंस्यों एक लाख घटाइयै, चौंवालीस लाख अवशेष रहे, तिनकौं एक घाटिकका भागदीजिए; तहाँ इन्द्रक प्रमाण तिरेसठिमैंसौं एक घटाइयै, बासठि ताका भाग दीये सतरह हजार नौ सौ सतसठि जोजन तेईस जोजनका इकसठिवां भाग प्रमाण आया सो इन्द्रक इन्द्रक प्रति हानिचय जानना। याकौ वर्णन पैंतालीस लाख जोजन ऋजुविमान है, यामैं सतरह हजार नवसै सतसठि जोजन अरु तेईस का इकत्तीसवां भाग प्रमाण हानिचय घटाइयै, तब चौंवालीस लाख गुणतीस हजार बत्तीस जोजन आठ का इकतीसवां भाग प्रमाण रहा, सो इतना दूसरा इन्द्रक का प्रमाण व्यास है। यामैं हानिचय घटाइयें, तीसरा इन्द्रक प्रमाण व्यास है। ऐसैं ही क्रमतैं यावत् अंत इन्द्रक का एक लाख जोजन व्यास रहै, तावत् पूर्व पूर्व इन्द्रक व्यास मैं हानिचय घटाए उत्तर इन्द्रक का व्यास प्रमाण हो है, इस भांति जानना।

आगैं श्रेणीबद्धविमानों का अवस्थान का स्वरूप है:—

अडिल्ल—

इन्द्रक प्रथम दिशनि प्रति श्रेणीबद्ध हैं।
बासठि बासठि चउदिशमैं स्वयंसिद्ध हैं॥
आगैं इन्द्रक प्रति चय चय दिशि हानि हैं।
अंत माहिं चय जानि जिनालय मानि हैं॥

ग्रीवकमैं ४२८, मध्यमैं ३३९, ऊर्द्धमैं २३०, अनुदिश-पंचोत्तरमैं १३१ ग्यारह थानमैं निन्याणवैं का क्रमहानि-श्रीजिनेन्द्रेभ्यो अर्घं० ॥

प्रथम ही जुगल विमाण रंग पण वर्ण हैं।
सनत्कुमार माहेन्द्र कृष्ण विनु वर्ण है ॥
ब्रह्मादिक चव कल्प नील विनु तीन हैं।
शुक्रादिक चव कल्प रक्त विनु छीन हैं ॥
आणतादि चव आनुत्तर पर्यंत जी।
स्वेतवर्ण अति सोभ रतन दुतिवन्त जी ॥
तिनमैं राजै श्रीजिनवरके धाम जू।
अष्ट द्रव्यकौं लेय जजौं अभिराम जू ॥

ॐ ह्रीं सौधर्म-ईसान स्वर्गके विमान पंच रतनमई, आगैं सनत्कुमार-माहेन्द्र कृष्ण बिना चार रंग, ब्रह्मादिक च्यारि स्वर्गनिमैं नील बिना तीन रंग, शुक्रादिक चार स्वर्गनि में रक्त बिना दोय रंग हैं, आनतादि चार स्वर्गनितैं अनुत्तर पर्यंत एक श्वेत रत्नमय-श्री जिनेन्द्रेभ्यो अर्घं० ॥

दोइ स्वर्ग जल के आधार जानौं सही।
दोइ पवन आधार आठ जल पवन ही ॥
बाकी चव दिव कल्पातीत विमान हैं।
निराधार नभमैं पूजौं जिन थान हैं ॥

ॐ ह्रीं दोइ स्वर्ग जलरूप युगलस्कंध परमाणुनिके आधार, दोइ पवनरूप युगल स्कंध परमाणूनिके आधार, वसु दोनोंके आधार, बाकी चार स्वर्ग-नौग्रीवक-नौ अनुदिश पंचोत्तर निराधार आकाशमैं श्रीजिनेन्द्रेभ्यो अर्घं० ॥

दोहा—

इन्द्रक जोजन संख्य है, श्रेणीबद्ध असंख्य ।
सख्यासंख्य प्रकीर्णका, जिनवर यजौं निशंख ॥

ॐ ह्रीं स्वर्गलोक त्रेसठि इन्द्रक विमान संख्यात जोजन प्रमाण, श्रेणीवद्ध असंख्यात जोजन प्रमाण, प्रकीर्णक संख्यात-असंख्यात दौनौं प्रमाण लियैं-श्रीजिनेभ्यो अर्घं० ॥

निज निज दिव विमानमैं, पंचम भाग गिनेह ।
सख्याते जोजन कहे, शेष असंख्य भनेह ॥

ॐ ह्रीं विमान पकति निज निज नियोग सम्बन्धी तामैं पाचवां भाग सख्यात जोजन, शेष असंख्यातजोजन प्रमाण-श्रीजिनेभ्यो अर्घं० ॥

अडिल्ल—

वत्तिस लाख विमान आदि दिवपति धनी ।
इकतिस षटलनि माहि कहानि वसै भनी ॥
ताकूं नेमिचन्द ग्रंथनि यौं भापियौ ।
सुनौ भव्य दे कान अर्थ मन राखियौ ॥
पटल अंत इन्द्रकतैं दक्षिण दिश विषैं ।
श्रेणीबद्ध अठारह सुरपति ग्रह अषैं ॥
उत्तर दिशमैं श्रेणीबद्ध अठारमा ।
उत्तरेन्द्र ग्रह तामैं निवसैं सुख समा ॥
सोलम चौदम चारि दशम अष्टम कहा ।
छठा जुगमका जान इन्द्र का ग्रह लहा ॥

तामैं निवसै सुरपति व मुख सचरैं ।
यजौं श्रीजिनगेह पाप छिन छिन झरैं ॥

ॐ ह्रीं सौधर्म-ईसान जुगलके इन्द्र इन्द्रकविमानतैं लगता दक्षिण उत्तर दिशानिमैं श्रेणीबद्धविमाननिकी पंकतिमैं अठारमामै महाविभव संयुक्त मंदिरमैं निवसै है तैसै ही दोइ दोइक विमाननिमैं सनत्कुार माहेन्द्र निवसै, अपने अपने पंकतके पटकके इन्द्रक विमानसैं दक्षिण उत्तर विमानमैं तिष्ठै सोलमैं सनत्कुमार-माहेन्द्र चौदमैं ब्रह्म-ब्रह्मेन्द्र बारमैं मे लांतवेन्द्र दशमेमैं शुक्रेन्द्र आठवेंमें शतारेन्द्र अंतके पटलतैं लगता छट्ठे श्रेणीबद्ध विमानमैं आनतेन्द्र उत्तरमै प्राणतेंद्र तैसैही छट्ठे मैं दक्षिण-उत्तरमै आरणेन्द्र अच्युतेंन्द्र अवस्थित-श्रीजिनेभ्यो अर्घं० ॥

दोहा—

जिस विमानमैं इन्द्रग्रह, इन्द्र नामतैं नाम ।
वा विमानकौं जानियैं, जजौं जिनेश्वर धाम ॥

ॐ ह्रीं विमान नाम इन्द्रके नाम, जैसे-सौधर्मेन्द्र जिस विमानमैं वसै ताका नाम सौधर्मविमान-श्रीजिनेन्द्रेभ्यो अर्घं० ॥

इन्द्र स्थिति जु विमानके, चारों पार्श्व विमान ।
पूर्वादिक चव दिश विषैं, सब इन्द्रनिके मान ॥

ॐ ह्रीं इन्द्रस्थित विमानके चारौं पार्श्वनिकैं पूर्वादि दिशामैं दक्षणेंदुकैं वैडूर्य रजत अशोकम्रषत्कमाररुचिक मन्दिर अशोक सप्तछंद ए चारौं विमान उत्तरेंद्रकैं-ऐसै दक्षणेंद्र उत्तारेन्द्र सबनिकैं-श्रीजिनेभ्यो अर्घं० ॥

अडिल्ल—

सूर हिरण भैंसा मांछल काछिव[१] कड़ा ।
मींडक[२] घोड़ा हस्ती चन्द्र अहि[३] असि[४] लहा ॥
छेला[५] बैल कपिल[६] तरु[७] चौदह चिन्ह हैं ।
दिव बारम जुग जुग मुकुट सुर भिन्न हैं ॥

ॐ ह्रीं सौधर्मादि बारह स्वर्ग, आनत-प्राणत; आरण-अच्युत चौदह स्थानकनिमैं चौदह चिन्ह देवनिके मुकुटनिमैं हैं-श्रीजिनेन्द्रेभ्यो अर्घं० ॥

गीता छन्द—

सौधर्म चव अरु जुगल चवमैं एक चव सुरगनि विषैं ।
नव जायगा[८] सुरपति नगर चौकोर जानौं जिन लषैं ॥
चव[९] अस्सी, अस्सी अरु बहत्तरि और सत्तरि जानियैं ।
साठि और पचास चालिस तीन बीस सु आनियैं ॥

दोहा—

जोजन विस्तर नगर है, सुरतिय[१०] जुत दिवराज[११] ।
निवसैं पुन[१२]फल भोगवैं, पूजौं श्रीजिनराज ॥

ॐ ह्रीं सौधर्मादि चारि स्वर्गनिमैं इन्द्रनिके नगर चौकोर चौरासी, अस्सी बहत्तरि, सत्तरि जोजन प्रमाण, ब्रह्म ब्रह्मोत्तर जुगलमैं, लांतव कापिष्टमैं, शुक्र-महाशुक्र विषैं, सतार-सहस्रार चारि जुगलमैं क्रमसैं साठि, पचास, चालिस, तीस जोजन विस्तार, आनत प्राणत, आरण

१ कछुवा २ मेढक ३ सर्प ४ तलवार. ५ बकरा ६ गाय. ७ वृक्ष. ८ जगह-स्थान ९ चौरासी १० देवांगना ११ इन्द्र. १२ पुण्य ।

अच्युत चारि स्वर्गनिमैं बीस हजार जोजन नगर विस्तार-श्रीजिनेन्द्रेभ्यो अर्घं० ॥

अडिल्ल—

छह जुगलनिमैं अंत माहि चव दिवनमैं ।
नगर कोट तुंग जान अनुक्रम सबनिमैं ॥
तीन सतक, अढाईसै, दोसै डेढसै ।
सौ व बीस सौ अस्सी जोजन सुभ लसै ॥

ॐ ह्रीं नगर व्यास अनुक्रमसैं षोडश स्वर्गनिमैं जान-श्रीजिनेन्द्रेभ्यो अर्घं० ॥

कोट नीव चौराई सम जानौ सही ।
थान सप्तमैं अनुक्रमतैं जिनवर कही ॥
पंचाशत् पच्चीस, अर्द्धतैं अर्द्ध ही ।
चार, तीन, अढाई जोजन सर्द्ध ही ॥

ॐ ह्रीं इन्द्रनगरके कोटकी नीव वा चौराई सम सप्त थानकनिमैं पचास, पच्चीस, साढे बारह, सवा छह, चारि, तीन, अढाई इस प्रमाण-श्रीजिनेन्द्रेभ्यो अर्घं० ॥

नगर कोट दिश दिश प्रति गोपुर जिन कहे ।
सप्त थान गिनि तुग जिनागममैं लहे ॥
चारि, तीन द्वय अधिक साठि सौ जानियै ।
चालिस बीस अधिक सौ जोजन मानियै ॥

ॐ ह्रीं सौधर्म-ईसान जुगलमैं चारसै जोजन तुंग कोटमैं दिश दिशमैं प्रति दरवाजे हैं, सानत्कुमार-माहेन्द्र जुगलमैं तीनसै, ब्रह्म ब्रह्मो-

त्तर जुगलमैं दोयसै, लांतव-कापिष्ट जुगलमै एकसौ साठि, शुक्र-महाशुक्र जुगलमैं एकसौ चालीस, शतार-सहस्रार जुगलमै एकसौ वीस जोजन, आनत-प्राणत, आरण-अच्युत चारि स्वर्गनिमैं सौ जोजन इस प्रमाण लिये-श्रीजिनेभ्यो अर्घं० ॥

दोहा—

गोपुर चौड़ाई कही, सप्त थान क्रम लाह ।
सौ निव्वै अस्सी सतरि, सठि चालिस तीस बताह ॥

ॐ ह्रीं गोपुरिकी चौड़ाई सप्तस्थानविषैं सौ, निव्वै, अस्सी, सत्तरि, साठि, चालीस, तीस इस क्रम लिये-श्रीजिनेभ्यो अर्घं० ॥

अडिल्ल—

सौधर्मादिक चारि थान परमानियैं ।
ब्रह्म जुगल आदिक चव जुग उर आनियैं ॥
अन्त चारि दिव नव थावक ए मन धरौ ।
सामानिक देवनिकी संख्या चित करौ ॥
चवरासी अस्सी जु बहत्तरि सत्तरा ।
साठि पचास रु चालिस तीसरु वीसरा ॥
निज निज सामानिक सुरतैं चौगुन भनौं ।
अंगरक्ष सुर सहस यजौं श्रीजिन गनौं ॥

ॐ ह्रीं सौधर्मादि चव स्वर्गमैं इन्द्रनिकैं क्रमतैं चौरासी, अस्सी, बहत्तरि, सत्तरि हजार सामानिकदेव है, ब्रह्म-ब्रह्मेन्द्रादिक चारि जुगलके चारि इन्द्रनिकै साठि, पचास, चालीस, तीस, तीस तथा अतकै आनत-प्राणत, आरण-अच्युत चारि स्वर्गनिके इन्द्रनिकैं बीस

बीस हजार सामानिक देव है। अंगरक्षक देव सामानिक देवनिसौं चौगुणे नव स्थानमैं क्रमतै-जैसे; सौधर्मेन्द्रकै ८४ हजार सामानिक देव कहे-तहां ३३६००० अंगरक्षक देव जानौं। इस क्रमतैं-श्रीजिनेभ्यो अर्घं० ॥

देव अनीक सप्तविधि क्रमतै जानियैं।
वृषभ तुरंग रु रथ गज़ गंधर्व मानियैं॥
सुभट नृत्यकारणी एकमैं सप्त हैं।
कच्छ कच्छ प्रति दूने दूने लप्त हैं॥
सामानिक देवनि की संख्या जास सम।
प्रथम कच्छका जानि तास दूना करन॥
सप्त अन्त पर्यंत करौ जौ एककी।
त्यौंही छह की करौ जजौं ध्वज चैतकी॥

ॐ ह्रीं जिस स्वर्गके इन्द्रकै सामानिक देवनिकी संख्या कही, समान सप्त अनीक जौ सेना ताकी एक कच्छ का पहला भेद-सो प्रमाण लियै आगै दूना दूना अंतपर्यंत-श्रीजिनेभ्यो अर्घं० ॥

सप्त कच्छके सप्त महत्तरि देव हैं।
दाम इष्ट हर दामा मातुल एव हैं॥
ऐरावत वा वायु अरिष्ट साल ही।
नीलांजना जु नाम नृत्य की आन ही॥

ॐ ह्रीं सप्तसेना के महत्तर देव नाम-श्रीजिनेभ्यो० अर्घं० ॥

महादामपट अमतम तीरथ मंथनं।
पुष्पदंतसम लघू परक्रम गीतनं॥

पुरुषवेद ए नाम वेदनिय एक जी ।
नाम महासेन उत्तर दिव पतक जी ॥

ॐ ह्रीं उत्तरेन्द्रकैं सप्तकच्छ महत्तर देव नाम-श्रीजिनेभ्यो अर्घं०॥

चव सुरगनिके चव अस्थानक जानियैं ।
चारि जुगल के चारि अंत चव मानियैं ॥
नौ जागैं तुम गिनौं पारषद देवजी ।
तीन सभा के जान अनुक्रम लेवजी ॥
अभ्यंतर मधि बाह्य प्रथम थानक कह्यौ ।
बारह चौदह सोलै सहस जु सुर लह्यौ ॥
दश बारह चौदह दूजे थानक सही ।
वसु दश बारह सहस थान तीजे लही ॥
छह वसु दश चौथे थानकमैं जानियैं ।
चव छह वसु पंचम सुर संख्या मानियै ॥
दोइ चार छह छट्टे सप्तम गिणि जुलौ ।
एक दोय चव सहस जान सरधा जुलौ ॥
पणसत सहस रु दोहनार सुर जानियैं ।
ढाइसै पणसत हजार परमानियैं ॥
इह प्रमाण षोडश स्वर्गनिके इन्द्रकैं ।
बारह सभा मझार जजों शत इन्द्रकैं ॥

ॐ ह्रीं सोलह स्वर्ग बारह इन्द्रनिकैं पारिषद देव अभ्यंतर मध्य बारिली सभा वरती तिन संख्या संयुक्त-श्रीजिनेन्द्रेभ्यो अर्घं० ॥

इन्द्र नगरके कोट पंच तुम जानियैं ।
अंतरालका कथन सुनौं उर आनियै ॥

तेरह त्रेसठि चौंसठि चौरासी भनौं ।
जोजन लक्ष प्रमाण यजौं जिनवर मुनौं ॥

ॐ ह्रीं इन्द्रनगरके कोट पांच अंतराल चार क्रमतै तेरह त्रेसठि चौंसठि चौरासी लक्ष जोजन प्रमाण-श्रीजिनेद्रेभ्यो अर्घं ॥

अंतराल पहले अंग रक्षक देवजी ।
सेना नायक निवसैं ग्रह सुहमेवजी ॥
दूजेमैं त्रय सभा पारिषद ग्रहनिमैं ।
सामानिक सुखसैं तीसरे तरमैं ॥

अडिल्ल—

चौथेमैं आरोहक वृष चढैजे ।
आभियोग्य किल्विष सुर निवसै बैठैजे ॥
कोट पांचवेके बाहिर पर जाइयै ।
जोजन सहस पचास तहां वन पाइयै ॥

नंदनवन है नाम महा सुखकार जी ।
सुख मैं सुर सुरपति तिय रमैं सुसारजी ॥
नाम विशेष सुरनिग्रहतैं दिश चवविपैं ।
वन अशोक अर सप्त चंप आम्रस अषै ॥
वन लंबाई चौड़ाई भवि जानियैं ।
सहस एक पण सतक हृदयमैं आनियैं ॥
तिन वन मध्य विराजै सुंदर चैत्यतरु ।
जंबूवृक्ष समान जजौं भवदुख हरु ॥

ॐ ह्रीं इन्द्रनिके नगरनिमैं पांच कोट प्रथमकोट के अंतरालमैं

अंगरक्षक सेना ३. नाटक दूसरे अन्तरालमें पारषद सभाके बैठनेवाले तीसरे सामानिक चौथेमें आरोहक अभियोग विल्विष पंचव कोटमैं पचास हजार जोजन लम्बे पांचमे जोजन चौड़े अशोक सप्तछंद पंचक आम्र चार वन तिन मध्य वन नाम कर चार चैत्यवृक्ष जंबू वृक्ष समान लंबाई ऊंचाई चोडाई शोभा सयुक्त श्रीजिनेभ्यो अर्घं० ॥

ता वृक्षनिके चवदिशमैं जिनप्रतिमा ।
राजैं पद्मासन पूजैं सुर उत्तमा ॥
तिनकों मैं वंदौं पूजौं इहां शक्ति बिन ।
भाग येग दर्शन प्रापति होसी[1] कथन[2] ॥

ॐ ह्रीं वृक्षनिके चारौं पार्श्वनिमैं चव दिशमैं पद्मासन जिनबिंब विराजमान श्रीजिनेभ्यो अर्घं० ॥

बहु जोजन जा परैं वननितैं जाइकैं ।
लोकपाल देवनिकी नगर सुहाइकैं ॥
साढ़े बारह लख जोजन विस्तारमैं ।
पूजौं श्रीजह जिनवरजी तिन्नारमैं ॥

ॐ ह्रीं इन्द्रनिके नगरतैं पांच कोटतैं परैं वन, तासौं बहुत जोजन परैं जाइ चारि दिशनिमैं साढ़े बारह लाख जोजन विस्तार धरैं नगरकी बहु शोभा धरे श्रीजिनेभ्यो अर्घं० ॥

नरदेवीनिके विर्षे जेथ वेदवा कहीं ।
तैसें ही सुरगतिमैं तुम जानौं सही ॥
तिनमैं जे हैं मुख्य महत्तर जानियैं ।
तिनके नगर जु विदिशामैं परमानियैं ॥

---

[1] होगी [2] [illegible]

लख जोजन विस्तार सु श्रीजिनजी कही ।
न्यून पुन्य करि भी इस माफिक सुख लही ॥
जो भवि पूजै समकति युत जिनराजकौं ।
ताकौ फल को कहै यजौं महाराजकौं ॥

ॐ ह्रीं महत्तरिनगरप्रमाण-श्रीजिनेभ्यो अर्घं० ॥

सौधर्मादिक जुगल छहौं इक अंतकौं ।
तीन तीन ग्रीवक इक अनुदिश अंतकौं ॥
बारह जागै[1] ग्रहन तुग तुम जानियै ।
छहसै, पांचसै, साढ चव चव आनियै ॥
साढै तीनसै, और तीनसै, ढाईसै ।
दो सौ, डेढ़सै, सौ, पचास पचीस है ॥
जोजनकौ परमान जिनेश्वर भाषियौ ।
श्रीजिनग्रहकौं यजौं महा अभिलाषियौ ॥

ॐ ह्रीं ग्रहनिको ऊंचाई-श्री जिनेभ्यो अर्घं० ॥

सब इन्द्रनिकै पटदेवी वसु ही कही ।
छह जुगलनिकै अन्त शेष ए सप्त ही ॥
सोलह, वसु, चव, दोई, एक ता अर्द्ध ही ।
तासु अर्द्ध परवार देवि जज दुर्द्ध ही ॥

ॐ ह्रीं इन्द्रनि प्रति आठ आठ महादेवी है, परिवार सोलह सोलह हजार प्रथम जुगल, तासैं अर्द्ध अर्द्ध पर्यंतलौं देवो सहित-श्रीजिनेभ्यो अर्घं० ॥

---

[1] स्थान जगह ।

गीता—छन्द—

शची पद्मा शिवा श्यामा कालिंदी सुलसा भली ।
आजुका अरु भानु वसुमी दक्षिणेन्द्रह पट रली ॥
श्रीमती रामा सु सीमा प्रभावती जयसेनया ।
छट्ठी सुषेणा और वसुमित्रा वसुंधर मेनया ॥

ॐ ह्रीं दक्षिणेन्द्रकी व उत्तरेन्द्रकी पटदेवी नाम-श्रीजिनेभ्यो अर्घं०॥

अडिल्ल—

पटदेवी वसु भिन्न भिन्न विक्रय सुनौं ।
छह जुगलिनमैं अंत सेस चवमैं मनौं ॥
सौलै बत्तिस चौसठि सतवसु वीसजी ।
द्वै छप्पन पणसै अर वारह सहसजी ॥
जानि लाख दश सहस चारि फुनि वीस हैं ।
सोलह सहस प्रथमतैं अंत गनीस हैं ॥
पुण्यतणैं परभाव देव सुरतिय रमैं ।
जजौं जिनेश्वर पाय पाप सबके वमैं ॥

ॐ ह्रीं सौधर्मादिक छह जुगल प्राणतादि चवनिमैं इंद्रनिकैं आठ आठ महादेवी हैं, सो प्रथम जुगलमैं अग्रदेवी विक्रिया सोलह हजार देवांगना एक एक देवी करैं, दूसरेमैं बत्तीस हजार, तीसरेमैं चौसठि, पांचवेमे एक लाख अठाईस हजार, छट्ठेमैं दोय लाख छप्पन हजार, सप्तमे मैं पांच लाख बारह हजार, आठवैंमैं दश लाख चौवीस हजार विक्रिया देवी करै-इस भांति श्रीजिनेभ्यो अर्घं० ॥

वीस वीस हजार एक पट देवि की ।
तिनमैं वल्लभ इन्द्रनिकैं कुन सेवकी ॥

छह जुगलनिमैं अंत शेष चव जानियैं ।
बत्तिस सहस आठ अरु द्वै परमानिनियैं ॥

ॐ ह्रीं सौधर्म-ईशान जुगल पहले मैं बत्तीस हजार, आठ हजार, दोइ हजार, पांचसै, ढाईसै, सवासै, तिरेसठि इस भाँति वल्लभा इन्द्रकै अति वल्लभ तातैं वल्लभा कहिये-श्रीजिनेभ्यो० ॥

देवी मंदिर तुंग तासतैं वल्लभा ।
जोजन वीस अधिक मंदिर सोभै सभा ॥
इन्द्र नम्र हैं तिनतैं पूरब दिश विषैं ।
शोभै जिनकौं यजौं पाप गल तत्क्षणैं ॥

ॐ ह्रीं देवीनिके मंदिर तुंग बीस जोजन वल्लभनिके मंदिर-श्रीजिनेभ्यो अर्घं० ॥

दोहा--

अमरावती सुइन्द्रकी, ताके मधि वर गेह ।
दिसा ईसान विषैं सभा, मध्य सुधर्मा जेह ॥
सौ जोजन लंबी अरध. चौडी पिचहत्तरेह ।
महा मनोज्ञ रतना[जड़ित, पूजौं श्रीजिनगेह ॥

ॐ ह्रीं अमरावती पुरीके ईशान दिशमैं महा सुभग मंदिरके मध्य सभा मंडप स्थान सौ जोजन लंबा पचास जोजन चौड़ा पिचहत्तरि जोजन तुंग महामनोज-श्रीजिनेभ्यो अर्घं० ॥

गीता-छन्द--

स्थान मंडप जु वरनें तीन द्वार मनोहरं ।
पूर्व दक्षिण और उत्तर चोर वसु जोजन वरं ॥

शुभ तुंग सौलै जोजन त्तर सभा मधि इन्द्रासनं।
ता अग्र वसु देवीनि पटका आसनं सुखरासनं ॥
पट्ट देवी परैं पूरब सोम यम अरु वरुन के।
चवथौ कुवेर जु लोकपालनि शोभ हैं आसननि के ॥
ऱ्य जात सभा जु सुरनि आसन बार चौदह सहस हैं।
सौले जु वरनें इन्द्रतैं अग्नेयमैं सब सरस हैं ॥
तेतीस त्रयस्त्रिशत जु देवा दिशा नैरितिके विषैं।
सेन नायक सप्त आसन जानि पश्चिम दिशविषैं ॥
देव सामानिकनि आसन वायु अरु ईशानमैं।
अर्द्ध व्यालिस सहस वायव अरु ईसान दिसानिमैं ॥

अडिल्ल—

सौधर्म के दिव इन्द्र सहस चवरासिया।
आसन चव दिसमैं इतनें इत भाषिया ॥
इह अद्भुत वर ठाठ रच्यौ है पुन्यतैं।
श्रीजिन पूजौं वसु द्रव्यनितैं धन्यतैं ॥

ॐ ह्रीं अद्भुतविभव-श्रीजिनेभ्यो अर्घं० ॥

गीता छन्द—

स्थान मंडपतै जु आगैं एक जोजन चौड है।
छत्तीस जोजन तुंग वरनौं पीठि सहित जु जोड है ॥
कोस इक इक कै लियैं विस्तार बारह धार है।
मानतंभ जु गोल शोभित यजौं श्रीजिन सार है ॥

ॐ ह्रीं स्थान मण्डप आगैं मानस्तंभ पीठि सहित बारह धार लियैं गोल-श्रीजिनेभ्यो अर्घं० ॥

अडिल्ल—

मानस्तंभ विषैं पिटारे लटकने ।
वस्त्राभरननि मंडित सोभैं चटकते ॥
तीर्थङ्करकौं दिवपति ल्याते लेइकै ।
बहु विधि सेवा करै लहै वसु श्रेयकै ॥

ॐ ह्रीं करंड सहित मानस्तभ श्रीजिनेभ्यो अर्घं० ॥

भरतैरावत पूर्व पश्चिम विदेहमैं ।
प्रथम स्वर्ग अर द्वितीय त्रतीय चव लेहमैं ॥
जानि पिटारे अनुक्रम तीर्थंकर जिना ।
लावै नावैं सुरपति पूजन श्रीजिना ॥

ॐ ह्रीं चारि स्वर्गनिमैं पिटारे भरतैरावत पूरब पश्चिम विदेह चव क्षेत्रमै अनुक्रम-श्रीजिनेभ्यो अर्घं० ॥

मानस्तंभनि ढिगि मन्दिर उपपाद है ।
लम्बा चौडा ऊंचा वसु जो जाद है ॥
रतनमई दो शय्या सुंदर जानियैं ।
इन्द्र जन्म तहां होइ जजौं जिन आनियैं ॥

ॐ ह्रीं उपपाद दोइशय्या सहित मन्दिर श्रीजिनेभ्यो अर्घं० ॥

दोहा—

शय्याग्रह चव दिशनिमै, जिनमन्दिर रमनीक ।
बहु शिखरनि करि शोभते, पूजौं मस्तक धीक ॥

ॐ ह्रीं जिनमन्दिरेभ्यो अर्घं० ॥

कल्पवासिनी सुरतिया, तिन उपजनिके थान ।
छह लख प्रथमहि सुरगमैं, चव लख दूजे मान ॥
इन विमानिमै उपजिकै, दक्षिण सममंधीय ।
आदि सुरगमै जानियैं, उत्तर ईसानीय ॥
निज नियोग सुर आयकैं, ले जावैं निज थान ।
केवल देवी ही वसै, जजहूं श्री भगवान ॥

ॐ ह्रीं नियोग उत्पत्तिस्थान सहित-श्रीजिनेभ्यो अर्घं० ॥

शेष विमान जु जुग सुरग, उपजै सुर सुरतीय ।
श्रीजिन पूजौं भावसौं, भूमि धारि मस्तीय ॥

ॐ ह्रीं शेषविमाननिमै देव-देवी उत्पत्तिस्थान-श्रीजिनेभ्यो अर्घं० ॥

कवित्त—

दोय स्वर्गमैं काय भोग है दोइ स्वर्गमैं फरस विचार ।
चारि स्वर्गमैं रूप देखिकर चार स्वर्गमैं शब्द सु सार ॥
चार स्वर्गमैं मन करि जानौ आगै सहजभाव अविकार ।
श्री जिनेन्द्रकौं पूजैं, वसुविधि जामैं काम विथा न लगार ॥

ॐ ह्रीं कामसेवन देव-देवांगना इस अनुक्रम करि-श्रीजिनेभ्यो अर्घं० ॥

अडिल्ल—

प्रथम जुगल सुर अवधि विक्रिया जानियैं ।
नरक प्रथम परजन्त सु उरमै आनियैं ॥

दूजेमैं दूजे तक जुगम जुग तीसरे ।
पण छट जुगम जु चवथे तक जानीसरे ॥
सत वसु जुग पंचम तक अवधि विशेखिये ।
नौग्रीवक अहिमिन्द्र छठे पर वेसिये ॥
पंच अनुत्तर अहिमिंदर सप्तक विषैं ।
सर्व द्रव्य सब काल ज्ञान जिनवर लखैं ॥

ॐ ह्रीं प्रथम जुगलके देवनिकी विक्रिया पहले नरक तक, दूजे जुगलकी दूसरे नरक तक, तीसरे-चवथे जुगलकी तीसरे नरक तक, पांचवें-छट्ठे जुगल की चवथे नरक तक, सातवें-आठवें जुगल की पांचवें नरक तक, नौग्रीवक के अहमिंद्रनिकी छट्ठे नरक तक, पंच-अनुत्तर विमानवाले अहिमिंद्रनिकी सप्तमैं नरक ताईं अवधि-विक्रिया त्रसनाडी किंचित् ऊन-श्रीजिनेभ्यो अर्घं० ॥

जन्मांतर वा मरणांतर स्वर्गनि विषैं ।
प्रथम जुगलमैं सप्त दिना जिनवर अषैं ॥
दुतिय जुगलमैं पक्ष एकका जानियैं ।
जुगल जुगल का एक मास परमानियैं ॥
चव स्वर्गनिमैं दोय मास अंतर सही ।
चारनिके चव मास जिनेश्वर वरनही ॥
अहमिंदर षट् मास अंतरासुनिभैया ।
पूजौं श्रीजिनराज कर्म अरिकौं जया ॥

ॐ ह्रीं दोइ स्वर्गके देवनिकौ जन्म मरणकौ अंतर सप्तदिन, दोइमैं एक पक्ष, च्यारिमैं एकमास, चारमैं दोइ मास, च्यारिमै च्यारि मास, आगैं अहिमिंद्रनिमै षट् मास पर्यंत-श्रीजिनेभ्यो अर्घं० ॥

इन्द्र इन्द्रकी वसु पटदेवी जानियैं ।
लोकपाल छह मास जु अंतर मानियैं ॥
त्रायत्रिंशत अंगरक्षक अर सामानिका ।
पारिषद सुर मास चारि भव जानका ॥

ॐ ह्रीं इन्द्रकी पट देवी, लोकपाल इनिका उत्कृष्ट अंतराल छहमास, त्रायस्त्रिंशत, अंगरक्षक, सामानिक, पारिषद ए च्यारि देवनिका अंतर च्यार मास-श्रीजिनेभ्यो अर्घं० ॥

गीता-छन्द

जे मनुषभवमैं तिर्यनिके संग कामसेवन जे करैं ।
तेसु शुभ योगनिथकी वे प्रथम जुगमैं अवतरैं ॥
तहँ भी सुविटकुरु जघनि धारैं आपुकौ जिन कहत हैं ।
जे गान वा दासत्व क्रम करि उहाँ भी कुल लहत हैं ॥

ॐ ह्रीं इहां जैसे मनुष्य जो आजीविकाके साधन गानादिक दास कर्म करैं या स्त्रीनितैं विशेष राग राखैं, बहुरि किंचित् शुभ परिणामके योगतैं पुन्य बांधि देव होइ तो स्त्रीनि रागवाले ईशान पर्यंत जाय, गानवाले लांतव पर्यंत, दासकर्मवाले अच्युत पर्यंत, विट-कुलमैं जघन्य आयु पाय-श्रीजिनेभ्यो अर्घं० ॥

अडिल्ल—

प्रथम कल्पकी आयु जघनि इक पल्यकी ।
उत्कृष्टी दो सागरकी हत शल्यकी ॥
सनत्कुमार माहेन्द्र भिन्न भिन्न सातकी ।
ब्रह्म जुगलमैं दशकी है सुर जात की ॥

लांतव जुगमैं चौदह, सोलह अग्र ही ।
अष्टादश पुनि बीस और बाईस ही ॥
नौग्रीवक इक इक अधिकी भवि जानियैं ।
नौ अनुदिशि पंचोतर इक अधि मानियैं ॥

ॐ ह्रीं सौधर्म-ईशान प्रथम कल्पमैं जघन्य एक पल्य, उत्कृष्ट दोय सागर, दूसरे दुकमैं सप्त, तीसरेमैं दश, चौथेमैं चौदह, पांचवेमैं सोलह, छट्ठेमैं अठारह, सातवेंमै बीस, आठवेंमैं बाईस सागर, प्रथम ग्रीवक तीनभाग अनुक्रमतैं तेईस चौबीस पच्चीस, मध्य भागमैं छब्बीस, सत्ताईस, अट्ठाईस, ऊर्द्धभागमैं उनतीस, तीस, इकतीस, अनुदिशमैं बत्तीस, पंचोत्तरमैं तेतीस सागर आयु-श्रीजिनेभ्यो अर्घं० ॥

जोगीरासा—

सम्यग्दृष्टी घात योग जुग दिवमैं सुरवर होवै ।
हीन महूरत अंत की वर उत्कृष्टी वर जोवै ॥
सुरग बारमैं तक तुम आगैं कहियै घातक नाईं ।
अपवर्तन इह भेद कह्यौ भवि पूजौं श्री जिनराईं ॥

ॐ ह्रीं सम्यग्दृष्टिजीव पहलैं भवकी आयु बांधी, परिणाम योगतैं हीन आयु राखैं तो स्वर्गमै जाय वामैं उत्कृष्टी आयुतैं अंतर्मुहूर्त घाटि आध सागर की अधिकी पावै, बारमैं स्वर्गतक आगै नहीं-श्रीजिनेभ्यो अर्घं० ॥

ब्रह्मलोकके अंतविषै वसु लौकांतिक वर देवा ।
वसै विमाननिमैं सुर मुनि है करै जिनेश्वर सेवा ॥

ईसानादि आठ वर दिशमैं गोल प्रकीर्णक जानौं ।
सारस्वत आदित्य वह्नि अरु अरुण जाति उर आनौं ॥
गर्दतोय तुषित अरु अव्याबाध जानि अरिष्टातैं ।
सात सातसै आदि जानि जुग सात हजार अर सातैं ॥
नव हजार जुगमै ग्यारहसै ग्यारह हैं जामातैं ।
इक इक कुलमैं भेद दोइ दो सुनौ कान दे भातैं ॥

ॐ ह्रीं ब्रह्म स्वर्गके अंत आठ दिशनिमैं लौकांतिक देव प्रकीर्णक गोल विमाननिमैं वसै हैं, आठ भेदमैं सारस्वत, आदित्य सातसै सात-सातसै सात, वह्नि-अरुण सात हजार सात-सात हजार सात, गर्दतोय-तुषित नव हजार नव-नव हजार नव-अव्याबाध-अरिष्ट ग्यारह हजार ग्यारह-ग्यारह हजार ग्यारह, अरिष्टदेव ऐनोभद्र विमानमैं वास-इस विशेप-श्रीजिनेभ्यो अर्घं० ॥

गीता छन्द—

लौकांति देवन के विमानन अंतरे में कुल लहूँ ।
सब भेद षोडश जानि भव जिय शेष नाम जो अब कहूं ॥
आन्याभि अरु सौर्याभ जानो चन्द अर सत्याभ जी ।
श्रेयकर छट्टा क्षेमंकर नमौ जिनकौ लाभ जी ॥
वृषभेश सप्तम कामधर निर्वाण रज दिग रंजितं ।
फुनि आत्मरक्षक सर्वरक्षक मरुत वसु विध अस्वतं ॥
इस भांति षोडश भेद वरनै गिनति सहस जु सप्त शत ।
द्वय द्वय अधिक लौं अंत ताई यजौं जिन नमि इन्द्रावत ॥

ॐ ह्रीं षोडश भेद सयुक्त लौकांतिक सात हजार सात, नव

हजार नव, ग्यारह हजार ग्यारह, तेरह हजार तेरह, पन्द्रह हजार पन्द्रह, सतरह हजार सतरह, उनईस हजार उनईस, इकईस हजार इकईस, तेईस हजार तेईस, पच्चीस हजार पच्चीस, सत्ताईस हजार सत्ताईस, उनतीस हजार उनतीस, इकतीस हजार इकतीस, तेतीस हजार तेतीस, पैंतीस हजार पैंतीस, सैंतीस हजार सैंतीस, स्थान-सोलह नाम अनुक्रम संयुक्त-श्रीजिनेभ्यो अर्घं० ॥

अडिल्ल—

वसु षोडश लौकांतिक देवन भेद है ।
तिनकी गिनती सुनौं कामकौं छेद है ॥
छह हजार वसु शतक जानि अडसठि सही ।
तीन लाख बावन हजार त्रय सत कही ॥
बावन ऊपर षोडश भेद सु जानियैं ।
सबका जोड़ धरौ चौबीसौं मानियै ॥
तीन लाख उनसठि हजार जुग सतकई ।
बीस जानि लौकांति ईस जिनपद नई ॥

ॐ ह्रीं सारस्वत्यादि अष्टविध अडसठिसै अडसठि वृषभेष्टादि षोडश तीन लाख बावन हजार तीनसै बावन सब मिलि तीन लाख उनसठि हजार दोयसै बीस लौकांतिक-श्रीजिनेभ्यो अर्घं० ॥

कैसै हैं वे लौकांतिक सुर सुर रिषी ।
आपसमैं बहु प्रीति धरै अनुभव सुखी ॥
हीन अधिकता रहित सर्व समान हैं ।
विषयनितैं विरकत्त नाम रिषी जान हैं ॥

अन्यत्वादिक अनुप्रेक्षा चितवन करैं ।
दया युक्त सनमान इन्द्र पूजन धरैं ॥
अंग पूर्व श्रुत धारक तीर्थंकरनिके ।
तप कल्याणक साधनकौं बहु मतनिके ॥
आयु अष्टसागर की सब की जानियै ।
एक अरिष्ट सुरनि नवकी परमानियै ॥
शिवगामी ए जीव जगतमैं धन्न हैं ।
पूजैं श्रीजिनराज सेवका पुन्न हैं ॥

ॐ ह्रीं लौकांतिक वर्णन श्रीजिनेभ्यो अर्घं० ॥

सद्दृष्टी घातायुक भावनि सुरनिमैं ।
सागर अर्द्धप्रमाण अधिक जानौं जमैं ॥
विंतर ज्योतिष आयु परा अधपल्य जी ।
उत्कृष्टीतैं अधिक जान हत सल्य जी ॥
मिथ्यादृष्टी घातयुष्क जो देव हुव ।
भवनत्रिकमैं पल्य असंख्य का भाग लव ॥
कल्पवासि पर्यंत भेद ऐसौ सही ।
पूजौं श्रीजिनदेव जगत महिमा लही ॥

ॐ ह्रीं सम्यक्दृष्टी घातायुष्क होइ आयु अर्द्धसागर अधिक उत्कृष्ट आयुतैं पावैं, मिथ्यादृष्टि भवनत्रिक कल्पवासी पर्यंत पल्य असंख्य जो भाग आयु अधिक-श्रीजिनेभ्यो अर्घं० ॥

सुरदेविनिकी आयु प्रथम पण कल्प की ।
सात रु नव ग्यारह तेरह पन्द्रह लखी ॥

सतरै उन्निस इकइस तेइस जानियै ।
पंचविंश सतविंश पराभव मानियै ॥
चौंतिस इकतालीस सु अडतालीस हैं ।
पचपन षोडश स्वर्गनि, अज्ञा ईस हैं ।
देह तुंग अब सुनौं चित्त इक लाइकैं ।
पूजौं श्रीजिनराज चित्त हरषाइकै ॥

ॐ ह्रीं सुरतिय आयु कथन-श्रीजिनेभ्यो अर्घं० ॥

दोय स्वर्गमैं सप्त हस्त तनु तुंग हैं ।
दोमैं छह परमान चार सरवंग हैं ॥
दोमैं चव साढे त्रय दोयनमैं सही ।
तीन हाथ चव माहि अधोग्रीवक लही ॥
हाथ अढाई जानौ मधिमैं दोकई ।
ऊपरिमैं इक हाथ सु श्रीजिन धुनि चई ॥
स्वर्गलोकका कथन अनूपम जानिकैं ।
पूज रचौं मन आनि सेव उर आनिकैं ॥

ॐ ह्रीं शरीर तुंग कथन-श्रीजिनेभ्यो अर्घं० ॥

देवनिकै उस्वास अहार सु जानियै ।
सागर पक्ष हजार अनुक्रम मानियै ॥
प्रथम जुगल दो सागर आयु कही मुनी ।
दोइ पक्ष दो सहस उस्वास उहारनी ॥

ॐ ह्रीं एक सागर एक पक्ष पीछैं श्वासोच्छ्वास हजार वर्ष वीतैं आहार इस क्रम सेती श्रीजिनेभ्यो अर्घं० ॥

तिरजंच जी ।
सम्यग्दृष्टी श्रावक नर तिरजंच जी ।
अच्युत तक उत्कृष्ट जाय सुभ संच जी ॥
मुनि द्रव्यलिंगी श्रावक सुदृष्टी गती ।
ऊपर ग्रीवक जाय जिनेश्वर वरमती ॥
सम्यग्दृष्टी मुनि सरवारथ सिद्धकौं ।
जाय, नहीं सन्देह श्रीजिन विद्धकौं ॥
भोगभूमिया सुदृष्टि प्रथम जुगलमैं ।
पहुंचैं, ऊपरि नाहिं भवनत्रक सकलमैं ॥
पंचागनि आदिक साधक जे परमती ।
भवनत्रकमैं जाय, उपर नह सतमती ॥
इक दंडी त्रयदंडी परित्राजक सही ।
सन्यासी आदिक पचम दिवमैं जही ॥
जानौं इह वर कथन सुनौं भवि कानदे ।
श्रीजिनकौं हम पूजैं मन वच आन दे ॥
ॐ ह्रीं स्वर्गादिक जानें का वर्णन-श्रीजिनेभ्यो अर्घं० ॥
कांजी भोजन करै देहतैं नेह ना ।
अच्युत दिव तक जाय, जांह संदेह ना ॥
सुरगतितैं आवैं पावैं कौनैं गती ।
इसका भी सुनि कथन जिनेश्वर शुभमती ॥

चौपाई—

सौधर्मेन्द्र शचीपति देवि, लोकपाल चवपति दछि नेव ।
लौकांतिक सब देव प्रधान, अहिमिंदर सरवारथ थान ॥

यकैं मोक्ष जाय सर्वथा, सिद्ध होय मेटैं दुख विथा।
त्रेसठि पद्वी धारक जीव, नर पशु भवनत्रिक नहिं ईव ॥
सुनिकै रुचि परतीत लखाय, श्रीजिन पूजौं मन वच काय।
तातैं अघ सब दूरि पलाय, बढै धर्म होवै सुख थाय ॥
ॐ ह्रीं गमनागमन कथन-श्रीजिनेभ्यो अर्घं० ॥

सुन्दरी—छन्द—

सुरग वैमानिक सुर होत है, पूर्वगिरितैं रवि ज्यौं जोत है।
झलझलात उदयकौं धरत है, तिम महूरत अंतर लहत है ॥
पूर्ण छह पर्यापत पाइकैं, सुगंध सुख स्पर्शन लाइकैं।
सुच किरनि धर देव धरै सही, सय्य ऊपरि जन्म लहै जही ॥
तयै आनंद बाजत वाजने, शब्द जय जय थुति युति साजने।
निज विभव परिवार विलोकिकैं, पाइ अचिरज फिरि अवलोकिकैं ॥
अवधि जुत निज सुरपद जन्मकौं, जानि कारण वृषजिन धन्नकौं।
जल भरति द्रह करि संस्नानकौं, पट्टरूपी लह अमरानिकौं ॥
दृष्टि युत स्वयमेव जिनेशकौं, पूजनें चाल्यौं अहलेवकौं।
करिऽभिषेक रु जिन पूजा करैं, बहुरि निज संपति ग्रह सुख करैं ॥
दृष्टि विनु परके बोधन थकी, पूजि जिन निज संपति लहवकी।
सुख उदधिमैं मगन रहै सदा, घरी समसागर चितवै मुदा ॥
पंचकल्यानक श्रीजिनदेवके, ज्ञान शिवसाधन मुनि सेवके।
कल्प भवनत्रिक सब जात है, थानतैं अहिमिंद्र नात है ॥
साधने तप तीरथनाथके, आवैं लौकांतिक भय माथके।
पूजि ध्यावैं, नावैं थुति करै, जाय निज थल बहुविधि सुखकरैं ॥

ॐ ह्रीं देव उत्पत्ति महिमा-श्रीजिनेभ्यो अर्घं० ॥

जीव जे तप विविध करैं इहां, ज्ञान युत आतम निरखैं ग्य ं ।
शील वस्त्र रतनमय पहरिकैं, सौम सज्जनता तजि कहरकैं ॥

जिन सु पूजैं गुरु आज्ञा धरैं, श्रुत अभ्यासैं विसकौं परिहरैं ।
ध्यान श्रीजिनकौं मनमैं लहै, स्वर्ग लछिमी वा शिवकौं पहै ॥

ॐ ह्रीं इन कारण कौं पाइ जीव स्वर्गादिक पद पाइ मोक्ष साधैं-श्रीजिनेभ्यो अर्घं० ॥

अडिल्ल—

वैमानिक कल्पनि का कथन कहैं कहां ।
तीन लोकमैं पुन्यवृक्ष का फल जहां ॥
रतनमई वैमान रतन ग्रह सोभने ।
कल्पवृक्ष तहां वृक्ष मनोरथ पोरने ॥
कामधेनुवत चिंतामणि जो सुख करै ।
त्यौंही सुखकौ पूरै नाम दुख नहिं धरै ॥
देवी देव परस्पर सज्जनता धरै ।
सुख समुद्रमैं मगन सुपनमैं दुख हरै ॥

दोहा—

नेमिचन्द्र त्रैलोक्य धर, सार ग्रंथ व्याख्यान ।
भाषा टोडरमल्लने, देखि स्वल्प मति आन ॥
मूल ताहि सद्बुद्धिके, धारक पुरुष प्रधान ।
छिमा धारि सुध कीजियो, अल्प बुद्धि सब बान ॥

— अथ जयमाल —

दोहा—

वैमानिक जिन चैत्यकी, आरति करौं विशाल।
जिन गुणकौ नहि पार है, धरौं चर्न तल भाल॥

पद्धडी-छन्द—

जै जै जै जै सर्वज्ञदेव, सुर नर खग मुनिगण करैं सेव।
जै केवलज्ञान तणें प्रभाव, चर अचर लखत पर विनु सहाव॥
जै जिन रवि वच किरननि प्रकास, भवि मोह अंधकौ करौ नास।
भव उदधि काढि शिव माहि धार, तुम जगत बंधु जीवन दयार॥
तुम नाम मंत्रतैं जगत जीव, वसु गति तैं दिव पद लह अतीव।
नर बुद्धिहीन तुम गुण जपंत, पंडित पदकौं पावै तुरन्त॥
हम स्वल्प बुद्धि गुण कहन चाह, मनसा धारौ स्वामी निवाह।
वैमानिकमैं जिनगेह जान, तिनकी जयमाल करौं सुजान॥
जै लख चौरासी अरु हजार, सत्यानव अरु तेईस धार।
जिनमन्दिर स्वर्गनिमैं रसार, इक ग्रह वसु अधिइक सै विचार॥
जिन बिंब विराजै पदमसान, पण सत धनु तुंग सु देहमान।
सबकौं मिलिकै गिनती करेह, जुग हस्त जोरि मस्तक नवेह॥
कल्पामर कल्पातीत भेद, सुरगनि की गिनती भरम छेद।
सौधर्मैशानक कल्प एक, अरु सनत्कुमार महेन्द्र तेक॥
ब्रह्मोत्तर जुग लांतव कपिष्ट, पुन शुक्र जान मह शुक्र इष्ट।
ग्यारम शतार सहस्रार बार, आनत प्राणत आरण अंतार॥

अच्युत लग षोडश कल्प भेद, अहिमिंद्रनि तिय विनु काम छेद ।
वीमान पटल त्रेसठि बखान, द्वादश दिवपति वसु युग्म आन ॥
इह सप्त तुंग राजू गिनेह, चित्रा पृथ्वी तैं अंत लेह ।
इह डेढ डेढ जुग कल्प तुंग, छह कल्पनिमैं त्रय अर्द्ध अंग ॥
इक राजूमैं ग्रीवक नवीन, अनुदिशि पंचोत्तर सिद्ध भौन ।
गिनती विमानकी सुनौं भाय, श्री नेमिचन्द्र जिन ग्रन्थ पाइ ॥
वर कल्प एक सौधर्म-सान, इकमैं इक तिस पाटल वखान ।
मधि इन्द्रक चव दिश श्रेणिबद्ध, प्रकीर्णक विदिशा मैं निवद्ध ॥
वत्तीस लक्ष अठ वीस जान, बारह वसु दूजे कल्प जान ।
ब्रह्मोत्तरमैं लख चार सोभ, आगै त्रयमैं जिन कहे ओभ ॥
पणचास और चालीस छेह, जुग अंत सेय सत सप्त लेह ।
ग्यारह इकसौ अधग्रीव जान, सौ सात अधिक मध्यम प्रमान ॥
इक्याणव ऊरध ग्रीव जेह, पचोत्तर अनुदिश नौ पंचेह ।
चौरासी सत्तानव हजार, तेइस ऊपर लख प्रथम धार ॥
पटलनिमैं ए वीमान जान, इतने ही जिनमन्दिर प्रधान ।
जो प्रथम स्वर्ग का प्रथम इन्द्र, सौधर्म नाम भाष्यौ कविंद्र ॥
ताकौ वरनन किंचित् वखान, सुनिकैं जिन वृषमैं प्रीति ठान ।
श्रेणी बध दक्षिण दिश विमान, अट्ठारममै दिवपति प्रधान ॥
जिस नगर कोट पण सभा ठाम, को कवि वरनैं बुधितैंऽभिराम ।
इकतीस पटल के अंतमाहि, राजै विमान सौधर्म जानि ॥
चौकोर नगर पण कोट जासु, गोपुर शोभित मधि गेह तासु ।
मंडप संस्थान कर वन अराम, सो सौ पचास जोजन विथास ॥

तसु तीन द्वार त्रय दिश मझार, पूरब दक्षिण उत्तर निहार।
ता मध्य सिंहासन अति उतंग, तापरि राजै ज्यों रवि अभंग॥

तसु निकट पट्ट देवी सु आठ, तिनके वसु सिंहासन सु ठाठ।
चल लोकपाल चव पै सुहात, त्रयत्रिंशत देवनि के विभात॥

इक लख अट्ठाइस सहस देवि, वल्लभका इनि माही लखेवि।
सामानिक देव जु आय तिष्ट, गिन तोननिकी इह विधि सु इष्ट॥

चवरासी सहस कहे जिनेश, अंगरक्षक सुर गन चव गुनेश।
लख तीन सहस छत्तीस जान, ए भद्रासन पै विद्यमान॥

त्रय सभा ज्ञात पारषद देव, वर सहस वियालिस तिष्ठ सेव।
अनीक फौजवत देव जान, महत्तरि तिनके सुसप्त आन॥

ये सात जातिके सैन भेद, गज घोटक रथ वृष सुभट लेद।
गंधर्व नृत्यकारनिय जान, इक कच्छ माहि सातौं निदान॥

इक भेद चौरासी सहस लेव, दूने दूने कर अंत तेव।
छिनवैं लख अरसठ सहस एक, छह कोटि छिहंतरि लक्ष नेक॥

अर सहस छिहंतरि और जान, दिवपतिकैं आगैं ठड़े आन।
आरोहक सुर वाहन चठेह, ते भी सुरपति के पद नमेह॥

सुर आभियोग वाहन नियोग, ये जानि असंखत हस्त योग।
सुर किल्विष दासातुल वखान, सुर जान असंखित नमै आन॥

रैवत प्रकीर्णक वर सुदेव, बत्तीस लक्ष विमान ठेव।
भवनत्रिक सुरपै हुकुम जान, देवो कुल वासनि नमैं आन॥

महत्तरि वेश्या सम जु आय, परिवार सहित दिवपति रिझाय।
जहां नृत्यगान कौतुक विनोद, सुख सागरमैं वोतै अहोइ॥

तिनकै चिंता नहि रोग आन, दुखको जहां नाम नहीं बखान ।
कदि धर्मदेसना सभा माहि, देवन प्रति भापैं प्रीति ठांहि ॥
कदि जिन चैत्यालय जाय इन्द्र, जिनवरकौं पूजैं जगतचन्द्र ।
सरवरकौ जल भरि करऽभिषेक, पूजा कर आरत सुख धरेह ॥
फिरि नृत्य करैं आनन्द पाय, सब साज बजैं मीठे सुराय ।
वसु पट्टदेवि देवीन सग, नाचत गावत सुरमैं अभंग ॥
ये एक कल्पपतिकौ बखान, सबकौ जानौं जिन श्रुत प्रमान ।
अहिमिंद्रनिकौं निज आत्मचिंत्य, लौकांतिक सुर भो अति विस्त्य ॥
ये वसैं स्वर्गमैं पुन्यभोग, श्रीजिनपद सेवै ते मनोग ।
तातै इह सुनि हम चित्त माहि, प्रभु आगै भक्ति करै सु आहि ॥
तुम अरज हमारी सुनौ देव, अपनी सेवा द्यौ ढिग धरेव ।
वैमानिक जिनग्रह बिंब जान, तिनकी महिमा अद्भुत महान ॥
सिंहासन पै आरूढ सोभ, सिर छत्र चंवर ढिग वक्ष मोभ ।
भामंडल दुति नभ सुमन वृद्धि, जय जय जय बाजैं दुंद इष्ट ॥
सब मंगल द्रव्य धरे अनूप, वर श्रीजिनराजै जगत भूप ।
तिनकौमैं इहां पूजन रचेह, विन शक्ति पुन्यतै होहु तेह ॥
श्रीनेमिचन्द कवि ग्रंथ माहि, टोडरमल वाचनिका लिखाहि ।
करि प्रेमराज उपकार एह, ग्रन्थ लाकै हम कर सहत देह ॥
प्रेरक सु उमेदीलाल भाइ, बहु वस्तुन का मथुरा सहाइ ।
श्री पारस प्रभु का लेइ नाम, जयमाल रची नन्दराम नाम ॥

घत्ता—

वैमानिक देवा तिनग्रह एवा श्रीजिनमन्दिर चैत्य परं ।
अद्भुत छवि धारं त्रिभुवन सार पुर अघ जार नमन करं ॥
(इति महार्घं०)

कवित्त—

मंगल अर्हंत सिद्ध साधु श्रुत चैत्य चैत्यालय जिनवृष जान ।
नाम थापना द्रव्य भाव क्षिति काल छहों अघ की कर हान ॥
पूजन इनका जासु पाठमैं मंगलपाठ कह्यौ भगवान ।
बांचैं सुनैं भाव सेती भवि जग सुख लहि पहुँचै निर्वान ॥
बालकपनतैं पढैं पाठ जे विद्या अधिको लहैं निदान ।
जात रूप कुल लावन वपुमैं रोग रहित संपति अधिकान ॥
पुत्र पौत्र युवती वर लक्षण राजमान वा राजमहान ।
सुर सुरपति खग नरपति ह्वै कैं कर्म काटि पहुंचै निरवान ॥
पूजन सप्त कहे सुपाठमैं भवनवासि पहलैं लखि लेह ।
व्यंतरलोक जिनालय पूजन मनुष क्षेत्र तिर्यग चंव एह ॥
ज्योतिषलोक जिनालय पूजन वैमानिक अर सिद्ध सिलेह ।
तीनलोक मैं पूज पदारथ पूजा ताकी सप्त भनेह ॥

(इत्याशीर्वादः)

॥ इति वैमानिक जिनालय पूजा संपूर्णा ॥

卐

अथ सिद्धक्षेत्र पूजा प्रारभ्यते—

अडिल्ल—

तीर्थंकर पद नमैं नमैं गणधर मुनी ।
इन्द्र चन्द्र नागेंद्र चक्रधर भू-धनी ॥

मुनिगण ध्यान धरैं तोरैं सब करमकौं ।
ऐसे सिद्ध महन्त संत तजि भरमकौं ॥
लोक शिखरनि बसत ज्ञान क्षायिक धरैं ।
दर्शन क्षायिक धार अष्ट गुण अघ हरें ॥
मैं सरधा जुत होय इहां थापन करू ।
आ तिष्ठौं मम निकट यातैं भवदधि तरू ॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं सिद्धपरमेष्ठिन् अत्रावतरावतर संवौषट् (आह्वाननं)

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं सिद्ध परमेष्ठिन् अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः (स्थापनं)

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं सिद्ध परमेष्ठिन् अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् (सन्निधीकरणं)

अडिल्ल—

ध्यान अग्नि वैराग्य पवन करि जिन दहे ।
कर्मेंधन कौ पुंज सहज निर्मल बहे ॥
लोक शिखरथिति कीन निराकुल सुखमई ।
थापन करि निज हेत सिद्ध जग दुखदई ॥

(परिपुष्पांजलिं क्षिपेत्)

अथाष्टकं—

मोह करम थिति नासिकैं निज क्षायिक भाव सुलीन ।
पद्मद्रहकौ नीर ले मैं पूजौं सिद्ध प्रवीन, पूजातैं सब सुख बढै ॥
पूजातैं दिवपद पाइ, पूजातैं शिवपद लहै ।
यातैं पूजौं मन लाय ॥ जलं० ॥

ज्ञानावरनी नासिकैं वर केवलज्ञान उपाय।
मलियागर चदन यजौं तुम सिद्ध महा सुखदाय ॥
पूजातैं सब सुख बढ़ै। चन्दनं० ॥

दर्शन आवरनी हतौ शुभ केवल दर्शन पाय।
मुक्ताफल अक्षत यजौं तुम सिद्ध महापद दाय ॥
पूजातैं सब सुख बढ़ै। अक्षतं० ॥

अंतरायकौं अंत करि, वीरज अनंतकौं लेइ।
अति सुगन्ध पुष्पनि थकी तुम पूजौं सिद्ध जिनेह ॥
पूजातै सब सुख बढ़ै। पुष्पं० ॥

नाम करम अरि नासिकैं लहि सूक्षमता निजभाव।
अन्न छहों रस करि यजौं तुम सिद्ध बुद्ध असहाव ॥
पूजातैं सब सुख बढ़ै। नैवेद्य० ॥

आयु कर्मकौं नासिकैं अवगाहन गुण भावंत।
दीप रतन तुम पद यजौं तुम सिद्ध सुद्ध गुणवन्त ॥
पूजातैं सब सुख बढ़ै। दीपं० ॥

गोत्र करम गिरि तोरिकैं लहि अगुरुलघु भंडार।
धूप सुगन्धी खेयकै तुम सिद्ध महासुखकार ॥
पूजातैं सब सुख बढ़ै। धूपं० ॥

कर्म वेदनी मिटि गयौ लहि अव्याबाध सुखन्त।
मिष्ट इष्ट रस फलनितैं मैं पूजौं सिद्ध महन्त ॥
पूजातैं सब सुख बढ़ै। फलं० ॥

वर अष्ट द्रव्य संजोइकै तुम अष्ट गुणातम जोय।

पूजा करि गुण थुति करौं मोहि अष्टम भूमि सु दोय ॥
पूजातैं सब सुख बढ़ै । अर्घं० ॥

जोगीरासा –

क्षायिक सम्यकज्ञान दरस वर बल अनंतके धारी ।
सूक्षमता अवगाह अटल गुन अगुरु अलघु भडारी ॥
अव्याबाध अष्ट गुण धारैं व्यवहारैं शिवकांता ।
निश्चैतैं अनंतगुन मंडित सिद्ध अनंत महत्ता ॥

दोहा—

सिद्धक्षेत्रमैं सिद्धप्रभु, निवसैं काल अनंत ।
नमौं सिद्ध सुख कारनैं अब गुणमाल रचंत ॥

कवित्त—

सिद्ध पूज्य सम पूज न कोई सिद्ध पूजा सम पूजा नाहि ।
पूजा करनवा सम जग नाही पूजाफल या सम फल काहि ॥
चारौं उत्तम पूज्य व पूजा पूजक पूजा फल सम नाहि ।
भाग बड़े अरु पुन्य उदयतैं पूजा करौं प्रीति उर लाहि ॥
ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं सिद्धपरमेष्ठिने अर्घं० ॥

जिन सिद्धनिकी श्रद्धातैं नर वृत नहीं धरै तो पण थुति जोग ।
एकोदेश धरै वृत सोई पूजत पद सुरगणतैं लोग ॥
मुनिव्रत धारि जपै निसवासर ध्यान धरै सिद्धनिको कौग ।
तीनलोक करि पूजनीक हुव जस गावैं मुनिगण गह योग ॥
ॐ ह्रीं सिद्धमहिमा श्रीसिद्धेभ्यः अर्घं० ॥

साधु पूज्यतैं अधिक पूर्वधर वासैं आचारज अधिकाय ।
गणधर आचारजपद धारैं अधिक पूज्य पूजौं मन लाय ॥
चवविधि कर्म जीतिकैं साधू अर्हत्पद लहि पूजपुजाइ ।
तीर्थंकर पद अधिक कही है सिद्धनितै सब न्यून कहाइ ॥

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धेभ्यः अर्घं० ॥

नाम पूज इनि सिद्ध प्रभूकौं मंगल कारण उत्तम थाइ ।
सरन सरव क्षेत्रनिमैं जानौं तिहूँकाल शिवपद सुखदाय ॥
नरक निगोद महा दुःखनितैं संकट पर्यौ बहुत विललाइ ।
ताकूं नाम महासुखदाई नाम लेइ पूजौं ह्यां भाइ ॥

ॐ ह्रीं नाम महिमा सिद्धेभ्यः अर्घं० ॥

जद्यपि सिद्ध अमूरति रूपी थापन तदाकार अदकार ।
भव्यजीव थापैं पूजा कर संस्तुत जपि बहु ध्यान सुधार ॥
बार बार सिद्धरूप विराजै सुद्ध आतमा त्यौं मैं सार ।
पावै शिव फल तातैं पूजौं सिद्धनिकौं निजहेत विचार ॥

ॐ ह्रीं सिद्धमहिमाये अर्घं० ॥

पुद्गलपिंड देह द्रव्य खिरना अंत नहीं फिरि ताका योग ।
चरमदेह ताहीकौं पूजौं निज चैत्यालय त्रन भवि लोग ॥
सिद्ध कथन का कथक पुरुष जो ताकौं भी द्रव्य वरना ओग ।
भाग बड़ेके योग हौंनतै सिद्धनितै पूजौं तिहुं जोग ॥
ॐ ह्रीं द्रव्यसिद्धेभ्यः अर्घं० ॥

सिद्ध भावका ज्ञाता जो नर सिद्ध भाव क्षायिक दृक ज्ञान ।
सहज अनंत सुखका अनुभव इन अनंत गुण तजि अज्ञान ॥
ऐसैं भाव थापना पूजौं मन वच तनतैं फिरि धरि ध्यान ।
सिद्धनि थोक वसैं शिवमाही ह्यां पूजौं भावनि परमान ॥

ॐ ह्रीं भावनाभ्यः अर्घं० ॥

क्षेत्र पूज हुव सिद्धनिहीतैं कारिज समयसार पद जान ।
तीर्थंकरके पचकल्यानक जिन क्षेत्रनिमैं तीरथ मान ॥
देह प्रमाण होइ सो नभमैं सो अकास बहु पूज प्रधान ।
सिद्धक्षेत्र वा सिद्धसिला क्षिति पूजौं मैं वसु अंग नयान ॥

ॐ ह्रीं क्षेत्रपूज्य श्रीसिद्धेभ्यः अर्घं० ॥

वर्ष मास तिथि वार नक्षत्तर योग करणमैं तीरथनाथ ।
कल्यानक उत्सव जा छिनमैं सो भी पूज धरौं सिर माथ ॥
पर्व अठाई जैनोत्सव हुव ताकौं पूजौं शिवपुर साथ ।
सिद्धपदकौं जा समय भए जिय ता छिन वंदौं जोरि जु हाथ ॥

ॐ ह्रीं कालसमयसिद्धेभ्यः अर्घं० ॥

तीन लोक के क्षेत्र मुकट सम सिद्धक्षेत्र तुंग सोभै एम ।
सिद्धसिला नरक्षेत्र मान जिन पैंतालीस लक्ष जोजेम ॥
फटिक रतन सित जोति पुंज इम पाप मैलतैं निर्मल तेम ।
ता परि अंतरीक्ष सिद्ध राजैं पूजौं नय अग धरि कैं येम ।

ॐ ह्रीं क्षेत्रसिद्धेभ्यः अर्घं० ॥

तीर्थंकर गणधर पदसैं मुनिपदसैं केवलपद पाइ ।
घोर वीर उपसर्ग जीतिकैं केई मुनि जिन पदमैं आय ॥
केई मुनि केवल शिव जुगपद एक ही बार अंतकृत थाय ।
सिद्ध भये सिद्धलोक विराजै ह्यां सिद्ध यजौं सिधवाय ॥
ॐ ह्रीं सिद्धेभ्यः अर्घं० ॥

पंच भरत वा पंचैरावत पंच महा विदेह वर थान ।
तिनतैं मोक्ष भये केवल जिन पूजौं मैं मन वच उर आन ॥
तीस कुलाचल पै तिस छेत्तर निज थल नभ उपवन वा गान ।
कछु कारन लहि मुनि शिव पहुँचै ऐमे सिद्ध यजों सुख खान ॥
ॐ ह्रीं श्री सिद्धेभ्यः अर्घं० ॥

सवा पांचसै धनुष मान तन उत्कृष्टे सिद्धनि अवगान ।
सप्त हस्त तन नूनवगाहन किंचित ऊन देहतैं मान ॥
क्षत्री ब्राह्मण वैश्य वरणतैं उत्कृष्ट संहनन संस्थान ।
नर भवतैं लहि जिनवर दीक्षा केवल होइ यजौं सिद्धान ॥
ॐ ह्रीं श्री सिद्धेभ्यः अर्घं० ॥

सिद्ध अनादिकालतैं हूवे होहैं वा होंगे जु अनन्त ।
तिनकी पूजा मन वच तनतैं करौं यहां निज भाल नमंत ॥
पूजा का इह वर मैं पाऊं भव भव तुम साहिब वरहुं अंत ।
कर्म काटि शिवपद जब पाऊं साहिब सेवक भेद न भंत ॥
ॐ ह्रीं श्री सिद्धेभ्यः अर्घं० ॥

समयसार इस जीव द्रव्यकौ वरना रिषि ग्रंथनिमैं भेद ।
बहिरातम अन्तर परमातम तीनि भांति ...

मिथ्यादृष्टी बहिरातम है सुदृष्टी बारम गुण तेद ।
तेरह चौद गुणातीत सिद्ध परमातम पूजौं जग छेद ॥

ॐ ह्रीं सिद्धमहिमागुणकथनाय अर्घं० ॥

दोहा—

उत्कृष्टे पदरेहसै भाग वसै सिद्धराज ।
नव-लख भाग जघन्यकौ, यजौं सिद्ध महाराज ॥

ॐ ह्रीं उत्कृष्टे पदरैसै भाग, जघन्य नव लख के भाग विषैं स्थित सिद्धेभ्यः अर्घं० ॥

जोगीरासा—

मोह असुरनैं जगत जीतिकैं जिय जग वंदी साता ।
डारिं महादुख निसदिन देवै परवस सहै असाता ॥
याकौं करि निरमूल जगततैं विकसि मोक्ष थल माही ।
क्षायिक सम्यक भाव धारि सिद्ध सुख अनंत विलसाही ॥

ॐ ह्रीं क्षायिक सम्यक्त्व सहित सिद्धेभ्यः अर्घं० ॥

ज्ञानावरणी ज्ञान रोकिकैं अंध कियौ जग जियकौं ।
ताकौ घात पाइ केवल शुद्ध क्षायिक ज्ञान सु लियकौ ॥
ताकरि लोक अलोक विलोकिति चर अरु अचर सकल कौं ।
ऐसे सिद्ध यजौं वसुविधि सौं थुति करि वसु अंग नयकौं ॥

ॐ ह्रीं क्षायिक केवलज्ञान सहित सिद्धेभ्यः अर्घं० ॥

दर्शन आवरनी क्रम हतकैं केवलदर्शन पायौ ।
जगत पदारथ जाकरि देखै क्षायिकभाव उपायौ ॥

ऐसे सिद्ध अनंत सिद्धमैं एक मांहि जु अनंते ।
तिनके चरण कमल निति पूजौं मन वच धरि हरषंते ॥

ॐ ह्रीं केवलदर्शनसहितसिद्धेभ्यः अर्घं० ॥

अन्तरायकौ घात पाय बल विलसै सिद्ध महंता ।
जानन देखन सकल अनंती धरैं कर्म गण हंता ॥
सिद्ध लोकमैं सिद्ध अनंते राजैं जग चूड़ामणि ।
पूजौं मैं जल चन्दन आदिक वसु द्रव्य नतैं सुध मन ॥

ॐ ह्रीं अनंतवीर्यसहितसिद्धेभ्यः अर्घं० ॥

सुन्दरी-छन्द—

नाम कर्म चितेरे वत कहा, जीवकौं मूरति करिवे रहा ।
तहां घाति अमूरति भावकौं, भये सिद्ध यजौं धर चावकौं ॥

ॐ ह्रीं अमूर्तत्वगुणसहितसिद्धेभ्यः अर्घं० ॥

आयु कर्म प्रबल जम मरणकौं, वाल जीवन जिय अंत करनकौं ।
ताहि नासि अचल अवगाहना, धारि सिद्ध यजौं मन भावना ॥

ॐ ह्रीं अवगाहनगुनसहितसिद्धेभ्यः अर्घं० ॥

गोत्र कर्म ऊंच निचता धरै, तास वपु गुरुता लघुता करै ।
नाशिकैं शिवथान ठये जिनैं, पूजिहुँ सिद्ध गुरु लघु ना तिनैं ॥

ॐ ह्रीं अगुरुलघुगुणसमन्वितसिद्धेभ्यः अर्घं० ॥

वेदनी जुगविधि जिनवर कही, वेद हैं सुख दुख जिय सही ।
नासिकैं गुण अव्याबाध लहैं, यजौं सिद्ध जु वसु द्रव्यनि तहैं ॥

ॐ ह्रीं अव्याबाधगुणसहित सिद्धेभ्यः अर्घं० ॥

—दोहा—

सिद्धनि थोक वसैं अमल, लोक अग्र जिय जाय।
तिनकी अब जयमालिका, रचौं स्वपर हितदाय ॥

—पद्धडी-छन्द—

जय सिद्ध शुद्ध अविरुद्ध जिन, यज तीन लोक तम मोह दिनं।
जय तीर्थनाथ तुम ध्यावत हैं, तुम सेव करैं सुख पावत हैं ॥
जय राग दोप मोहादि हतं, जय काम क्रोध रिपु मल्ल वतं।
जय जन्म जरा मरणादि जयं, सब सिद्धनिमै निजभाव मयं ॥
जय लोकालोक विकास सयं, चिन्मूर्ति मूरति रहित स्वयं।
जय अविचल पुरुषाकार थितं, इह सिद्धवगाहन नंत मतं ॥
सुख पिंड निराकुल सहज लसं, अवयं अमन अमलं जससं।
जय नंत गुणातम सुद्धरयं, सब सिद्ध नमौं दुख घाय अयं ॥
जय गणधर मुनि भवि जीव जयं, जय सुरपति नरपति सीस नयं।
सुख ज्ञान रु वीरज, दर्शसय, सम्यकयुत वंदन होहु तयं ॥
जय मोह नासि सम्यक सहित, जय चव क्रोधादिक कौं निहतं।
जय हाम्यादिक निर्मूल करं, जय वेद नासि निरवेद धरं ॥
जय ज्ञान तिरोधन नासनतै, केवल लहिकैं निजभाव थितैं।
दर्शनतैं नंता दर्श पयं, युगपत चर अचर लखाव स्वयं ॥
जय भोग स्वभाविक आतम रसं, बिन इन्द्री मन वच काय लसं।
जय अतरायकौं अंत करैं, अनुपम अनुचिंतत गुणनि धरैं ॥
सूक्षमता अवगाहन अटलं, अगुरू अलघू अनव्याध लसं।
जय नाम रु आयु जु गोत विदन, इनि नासि भयैं सिद्ध गुणलयन ॥

तुम नंत गुणालय सुद्धमतं, तुम पर नहि तुग पदस्थ धतं ।
तुम भव्यनि के हित काजसरं. तुम समयसार कृतकृत्य परं ॥
हम अरज दीन प्रति दीन प्रतं, करुणा करि कर गह तारि सितं ।
दुख सहतैं भवतैं और नतं, तातैं निज ढिग प्रभु लेह अतं ॥

दोहा—

समयसार शुद्धातमा, सिद्ध अनंत महंत ।
संस्तुति वंदन जो करै, सो सुख लहै अनंत ॥ (महार्घं०)

अडिल्ल—

जो वांचै यह पाठ महा मंगलमई ।
धरि सरधा जुत प्रीति वचन मनसौं कही ॥
सो बडभागी पुरुष महा संपति धरै ।
सुर नरके सुख भोगि बहुरि शिव तिय वरै ॥

पुष्पांजलि क्षिपेत् ॥

(इति सिद्ध पूजा सम्पूर्ण)

卐

कवित्त—

पूजन सप्त कहीय पाठमैं तिनका भेद सुनौं मन लाइ ।
भवनवासि जिनगेह प्रथम लखि व्यंतर देवनि द्वितीय सुनाइ ॥
त्रतीय मनुष्य क्षेत्रमैं जिनग्रह तूर्य जानि तिर्यंच पुजाइ ।
जोतिस अरु वैमानिक छटमी सप्तम सिद्धक्षेत्र सिद्धाय ॥
कोटि सप्त अरु लक्ष बहत्तरि मंदिर जिन भावन सुर जान ।
चार शतक अठ्यावन जानौं मनुष्य साठि पशु क्षेत्तर मान ॥

लक्ष चौरासी सहस सत्याणव तेईस ऊरध लोक वखान ।
व्यंतर ज्योतिष संख्य रहित ग्रह वंदौं अकृत्तम गुण खान ॥
सप्त गिणत की गिणती सुन्दर सप्त कहे जिन तत्व विधान ।
सप्त स्थानक धर्मके कारण सप्तक गुणथानै ध्यानान ॥
सप्तम तैं सप्तम तक गिनियै तामै थितिकर लहि निर्वान ।
सप्त थानकौ पावै सो नर ताकै बड़े भाग परमान ॥
नेमिचंद स्वामीनैं वरना प्राकृत गाथामय व्याख्यान ।
ग्रंथ जानि त्रैलोकसारमैं ताकी देश वचनिका मान ॥
श्रावक टोडरमल जिनधर्मी भिन्न भिन्न सब रहसि बतान ।
भाग योगतैं पुन्य उदयकर श्रीपारसप्रभु पद दरसान ॥
जैसें हीन पुरुष लछिमी विनु लछिमीवंत देखि नर कोय ।
ताकी सम्पतिमैं ललचावै कहै किसो विधि हमरै होय ॥
पुन्य विना वह कैसैं पावैं पर सेवातैं किंचित सोय ।
लेह हरष धारै मन माही त्यौं ही हमकौं साचवजोग ॥
नेमिचंद मंगल वंदन किय, नौ भेदन्तिं श्रीजिनदेव ।
अर्हंत सिद्ध सूरि पाठक यति श्रुत वृष जिन प्रतिमा मंदिरेव ॥
मैं भी भक्ति धारिकैं पूजौं वंदौं थुति बहुरि दै सेव ।
नाचि गाय मन वचन कायतैं ले ले बलिहारी अघ टेव ॥
भक्ति बढ़ी मेरे मन मांही श्रीपारसप्रभुजी की सार ।
तातैं पूजन इनिका करि हौं बुद्धि नहीं त्यौं भी पनवार ॥
इनके दर्शन सुख होवै नर सुर पद लहिकैं मोक्ष करार ।
तातैं भव भव सेवा मांगू जब तक मोक्ष लहौं नहि हार ॥

(इति)

अथ श्रीपार्श्वनाथ की पूजा—

दोहा—

शिवगामी तुम नामतै, कंचन होत कुधात ।
सो पारसप्रभु की करौं, अह्वानन हरषात ॥

ॐ ह्रीं पार्श्वनाथ जिनेन्द्र ! अत्रावतरावतर संवौषट् (आह्वानन)
ॐ „ „ अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः (स्थापनं)
ॐ „ „ अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्
(सन्निधिकरणं)

卐

अथाष्टकं

(ढाल—करि डारयौ री टौना)

विमल स्वच्छ कंचन झारी मैं, गंगा जीवन भरना ।
त्रिविध धार दे श्रीजिन आगैं, जन्म मृत्यु दुख हरना ॥
जिय धारौ हो करुणा । मेरी तीन लोक महाराज जी ।
जिय धारौ हो करुणा ॥
पारस सरसि कुधात कनक ह्वै नाम महातम वरना ।
निर्मल मन पूजौं पारस प्रभु ले चरननि का सरना ॥
जिय धारौ हो करुणा ॥ मेरी तीनलोक महाराज जी ॥ जलं०

मलियागर चंदन केशरि घसि कुंकुम गंध उपरना ।
चरचि जिनेश्वर तप्त दाह हनि शीतल भाव उवरना ॥
जिय धारौ हो करुणा ॥ गंध० ॥

अक्षत उज्जल चंद किरणवत कंचन थालनि धरना ।
अक्षय पद पावन के कारण चरचि जिनेश्वर चरना ॥
जिय धारौ हो, अक्षतं० ॥

सुमन सुवासित गंध योगतैं अलिगण ध्वनि झुन करना ।
कामबाण के नास करनकौं जिन चरणनि ढिग धरना ॥
जिय धारौ हो करुणा, पुष्पं० ॥

उचित अन्न सद रस षट मिश्रित स्वाद पुष्ट बल करना ।
मिष्ट वरिष्ट लेइ जिन आगैं क्षुधा रोग परिहरना ।
जिय धारौ हो करुणा, नैवेद्यं० ।

तम विघात दीपक मणि जोऊ वा कपूर की परना ।
श्रीजिन की आरति करिकैं तम नास ज्योति ऊफरना ॥
जिय धारौ हो करुणा, दीपं० ॥

दशविधि धूप बनाइ सुगंधी दश दिशमैं धूमरना ।
अगनि मांहि खेवत श्रीजिनढिग अष्ट कर्म अघ जरना ॥
जिय धारौ हो करुणा, धूपं० ॥

श्रीफल दाख छुहारे पिस्ता किसमिस लौंग अनरना ।
श्रीजिनके पद अग्र धारिकैं मोक्ष महाफल धरना ॥
जिय धारौ हो करुणा, फलं० ॥

जल चन्दन अक्षत प्रसून चरु दीप धूप फल करना ।
अर्घ बनाइ करौं श्रीजिनपद नाच गाय थुति तरना ॥
जिय धारौ हो करुणा, अर्घं० ॥

—कवित्त—

अर्हंत् सिद्ध सूरि पाठक यति श्रुत वृष जिनप्रतिमा जिनगेह।
निश्चैनय इक शुद्ध चिदानन्द समयसार पारसप्रभु सेह ॥
समोसरनमैं राजै छयालिस गुणनिकेत गुणगण क्रम छेह।
सिद्ध होय सिद्धालय राजै साधक पदमैं त्रय साधेह ॥

दिव्यध्वनि जिन सोइ शुद्ध श्रुत जिन सुभाव सोई वृष जान।
चिह्न वरन अरु ध्यान स्थिति छवि प्रतिमा सो जिन प्रतिमा मान ॥
जा मन्दिरमैं शोभै प्रतिमा ताकौं कहिये जिन गेहान।
इन नव थानक पूजौं भिन भिन पारसप्रभु कौ ले सरनान ॥

ॐ ह्रीं श्रीपारसप्रभु नव क्रमतैं पूजन श्रीजिनाय अर्घं० ॥

छयालिस गुण करि मंडित स्वामी दश जनमत केवल दश जान।
देवों कृत चौदह वसु प्रातिहार्य अनन्त चतुष्टय मान ॥
केवल लब्धि पाय नव राजै समोसरन मैं वृष वरषान।
द्वादश सभा भव्य कमलनिकौं रवि पारसप्रभु जिन प्रमुलान ॥

ॐ ह्रीं अर्हंत पदस्थ श्रीपार्श्वजिनाय अर्घं० ॥

सप्त प्रकृतिकौ नास कियो जिन सप्तम गुणथानैं प्रभुसार।
तीन आयु अरु छत्तिस परकति नवमै गुणथानैं करि छार ॥
दशमैं सूक्ष्मलोभ विदारै बारममैं सोलह अधिमार।
केवल लहि बहत्तरि तेरह क्षय करि सिद्ध अवस्था धार ॥

ॐ ह्रीं सिद्ध अवस्थित श्रीपार्श्वजिनाय अर्घं० ॥

गुरु करि दिया संघ अधिपति पन आचारजपद सो कह भव्य।
दीक्षा शिक्षा मुनिगण देवैं प्रायश्चित दे शुध करतव्य ॥

दर्शन ज्ञान चरन तप वीरज पंचाचार धरैं जीतव्य ।
पारसप्रभु साधक पदमाही आप आप करैं करतव्य ॥

ॐ ह्रीं पारसजिन साधक अवस्था मैं आचार्यपद दीक्षा शिक्षा प्रायश्चित्तादि आप आप सहिताय अर्घं० ॥

केवल पूरव श्रुतकेवलि पद उपाध्याय पद जिनकैं होइ ।
ग्यारह अंग पूर्व चौदह की कथनी रहसि आतमसुख टोइ ॥
ध्यानाध्ययन रहै निसवासर जब तक केवलज्ञान न जोइ ।
साधक पदमैं पारस प्रभुकौं पूजौं मन वच तन कर दोइ ॥

ॐ ह्रीं श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय साधक पदस्थ उपाध्याय पद धारक श्रीजिनाय अर्घं० ॥

जगत काय भोगनि नृप पदतैं संपति नेक भांति विधि थाय ।
कछु कारनतैं होय उदासी लौकांतिक थुति करनैं आय ॥
इन्द्रादिक निःक्रमण कल्याणक करि पूजा निज थलकौं जाय ।
होय निरांबर भाग योग प्रभु पारस साधक पद साधाय ॥
ॐ ह्रीं श्रीपारसप्रभु साधक अवस्था साधकपदप्राप्ताय अर्घं० ॥

केवलज्ञान रु केवलदर्शन क्षायिक सम्यक वीर्य अनन्त ।
आत्मीक सुख नंत धारकैं ताकी दिव्यध्वनि श्रीमन्त ॥
तीनकाल तिहुं लोक पदारथ गुण परजय धारैं भनि संत ।
ताहीकौं जिनवानी कहियै वक्ता श्री पारस शिवकंत ॥
ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वजिन दिव्यध्वनिसहिताय अर्घं० ॥

वस्तु स्वभाव सधे सोई वृष पारसप्रभु निजभाव सु लेइ ।
वा रतनत्रय दशलक्षण अरु जीवदया आदिक भापेइ ॥

निज स्वभावसैं रहित सदा जिय धर्मवंत सो नाहि सचेइ।
निज स्वभाव सोई वृष जानौ पारसप्रभु पूजौं कर सेइ॥
ॐ ह्रीं श्रीपारसप्रभु निजधर्मस्वभावसमन्विताय अर्घं०॥

दोहा—

शांति रूप मुद्रा निरखि, हियैं पुन्य वैराग।
प्रतिमा जिनप्रतिमा भसी, कृत्तम अकृत्तमांग॥
पारसप्रभु छवि निरखतैं, आनन्द वृक्ष फलंत।
स्वर्ग मुक्ति फल फूल गण, लगैं सु जिनगण भंत॥
ॐ ह्रीं श्री पारसजिनबिम्बेभ्यः अर्घं०॥

जोगीरासा—

पारसप्रभु राजै मन्दिरमैं आंगनितैं भवि जोवैं।
अथवा जिनप्रतिमा जहां शोभै तहांही अशुभ विखोवैं॥
कृत्तिम और अकृत्तिम जिनग्रह पूजनीक तिहुं जगतैं।
मै पूजौं जल चन्दन आदिक वसुविधि ले सतमततैं॥
ॐ ह्रीं पार्श्वनाथमन्दिरेभ्यः अर्घं०॥

पद्धडी—छन्द—

दोइज वर असित वैशाख जान, जिनगर्भ विषैं आये विधान।
सुर सुरपति कीनौं मात तात, अभिषेक पूर्व यज ह्यां जजात॥
ॐ ह्रीं वैशाख वदी दोयज गर्भकल्याणकमंडिताय श्रीपार्श्वनाथ जिनेन्द्राय अर्घं०॥
वर असित एकादशि पोह दिना, जन्मे श्री पारस देव जिना।
दिवपति गिरपति अभिषेक जनं, हम शक्ति हीन ह्यां पूज युजं॥

ॐ ह्रीं पोहवदी एकादशि जन्मोत्सव प्राप्त श्रीपार्श्वनाथाय अर्घं० ॥

जिन कुंवरपने हत काम बली, सम्राज तज्यौ कारण कछुली ।
तिथि जन्मतनी प्रभु योग धरयौ, पूजै दिवपति हम पूज करौ ॥

ॐ ह्रीं पौषवदी एकादशि तप कल्याणक मंडिताय श्रीपार्श्वनाथाय अर्घं० ॥

वदि चौथि लियौ जिन चैततनी, केवल उपज्यौ सुर आयगनी ।
पूजै समवसृत पार्श्व जिनं, वसुविधि ह्यां पूजत हैं सुमनं ॥

ॐ ह्रीं चेतकृष्णचोथ केवलज्ञान प्राप्त श्रीपार्श्वनाथाय अर्घं० ॥

सप्तमि सावन सुभसेत दिनं, पहुंचे समेदतें मुक्ति जिनं ।
सुरगण यज हर्षित होइ मनं, हम पूजत श्रीजिननाथ अनं ॥

ॐ ह्रीं श्रावण सुदी सप्तमी मोक्षकल्याणक मंडित श्रीपार्श्व-नाथाय अर्घं० ॥

गीता—छन्द—

सुरगणनि पूजत देवपदमैं गर्भ पहलैं पूजितं ।
जिन गर्भमैं वा जन्म होतैं तीन लोक सु हूजितं ॥
जिनराजपद वा त्याग करतैं पूज हुव लहु ज्ञानजी ।
सिद्धपदमैं जा विराजै पूजि कर पूजान जी ॥

ॐ ह्रीं सर्व अवस्थामैं पूज्य श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अर्घं० ॥

तुम देहु दुतिसौं अमल दश दिश तेजतै नसि तेज जी ।
जा रूप अनुपम जगत मोहन वपु सुगन्धित हेतजी ॥
दिव्यध्वनि तुम सुनत घटतम नास लच्छन तन सुभं ।
ज्ञानादि गुण तुम नंत राजै जजौं वसुविधि सुभ लभं ॥

ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्रेभ्यो अर्घं० ॥

दोहा—

बाहिज महिमा करनकौं, थके च्यार धर ज्ञान।
अंतरकी कहा वार्ता, कहत लजत किन जान॥
भक्ति लाइकै किमपि हम, ज्यौं पिक अंब प्रभाव।
तुम चरणनिकौं सेवतैं, गुण गावैं धरि चाव॥

पद्धडी—छन्द—

जय जय जय पारस श्रीजिनेश, सुर सुरपति खग ध्यावैं गनेश।
जय ब्रह्मा विष्णु महेश देव, चंकी बलि हरि नित करैं सेव॥
जय छ्यालिस गुण मंडित महान, जय ज्ञानवन्त अति भागवान।
जय अर्हन्पदमैं थिति करेह, दिव्यध्वनि भवि जिय मेघ जेह॥
जय गर्भागम षट् मास आग, रतनादिक वर्षा होन लाग।
नव मास तई सुरदेव्य आय, नानाविधि सेवा करैं माय॥
केइ सेज सवारैं भक्ति लाय, केइ स्नान विलेपन करैं भाय।
केइ वस्त्राभूषण पान देइ, केइ छत्र चमर दर्पन धरेइ॥
केइ सभा समारत प्रीति लाय, केइ पगचंपी केइ सुजस गाय।
केइ साज बजावत नृत्य ठान, माताकौं बहु कौतिक दिखान॥
प्रश्नोत्तर करि फुनि हाथ जोर, उत्तर सुनि बहु सुख लहै घोर।
तुम जन्म भयौ जगपति महेश, तब चिह्न सहज सुरलोक एस॥
सुरपति जिनपतिकौ जन्म जान, तब सात पैंड उस दिश नमान।
फुनि आज्ञा दीनी हो तयार, गजपतिकै ऊपरि ह्वै सवार॥
इन्द्राणी सुर गण दश विभेद, वा भावन व्यंतर ज्योतिकेद।
आये काशी परदक्षि देय, ग्रह जा इन्द्राणी गोद लेय॥

जथ जिनको सुरपति कर पसार, ले चाले नभसैं हो तयार ।
ईशान इन्द्र जब छत्र देइ, सुरपति जुग ढारैं चमर सेइ ॥
बाकी जय जय ध्वनि करै मोद, वह समय अमम सुखको जु होद ।
लख जोजन गज विस्तार होइ, शत मुख मुख प्रति वसु दंत जोइ ॥
दंतन प्रति सर सर कमल जान, पच्चीस शतक गिनती प्रमान ।
कमलनि प्रति कमल पचीस भेद, वसु अधिक एकसौ दल गिनेह ॥
दल दल परि अपछरा नृत्य ठान, तेतीस कोडि गिनि नंद खान ।
चव विधि सुरसै वहु भेद जान, परिवार सहित आनंद ठान ॥
केइ गावैं सुर मीठे उठान, केइ साज वजावैं हर्षमान ।
केइ नृत्य करै केइ नकल ठान, केइ जय जय बोलैं ऊचमान ॥
जहं सख नहीं सुरसुरिय गान, वा समया देखै भागवान ।

त्रोटक—छन्द—

दमद दमद मिरदग बजै, सननं सननं सारंगि गजै ।
किनन किनन किननीय रट, घननं घननं घटान अटं ॥
ननन नननं तुम रूर घुरं, तननं तननं तन तान उरं ।
मुहचं सुरच शुभवीन सुर, अनन अननं मधुरेय धुरं ॥
चम चम चम चम चमचमकिधरं, छम छम छम छम छमकि करं।
नम नम नम नम नम सुर ललनं, फिरि फिरि फिरि फिरि फिरकी लयतं॥
जिन सीसफूल माथे दमकै, आभूषण भूपित अंग चमकै ।
यो अद्भुत रस नभ मारगमैं, गिरिपति पर रचि दिवपति मगमैं ॥
मंडप शोभा लखत रतनं, मोती माला आदिक लटनं ।
सिंहासन तिथि करि जिन अमलं, इक सहस अठोतर कलस ढलं ।

इन्द्रानी मंगलपाठ पढं, गंधर्वनि गीत सुरान कढं ।
जिन जन्मोत्सव करि हर्षधरं, फिर कासी कौ सन्मुख चलनं ॥

पित मात सौंपि नाटक नयतं, थुति नुति करि निज थानक सटयं ।
प्रभु बाल अवस्था ज्ञानत्रयं, धरि कुंवर अवस्थित राजक्रयं ॥

वन क्रीडनकौं सुरसेन समं, आवत मगतैं तपसी अशुभं ।
अहि दग्ध अंध जिन मंत्र दियौ, सो पद्मावति धरनेन्द्र भयौ ॥

कारण लहि जिन वैराग्य धरौ, लौकांतिक आय सु नमन करौ ।
फिर इन्द्रादिक कल्यानकरं, प्रभु जोग धारि जो अचलगिरं ॥

ध्यानस्थित ह्वै चवघात हनी, केवल लहिकैं बोधे अगणी ।
जब समोसर्न रचना रचिया, अद्भुत शोभाकौं बुध बुधया ॥

जब ज्ञान अनंतानंत लहा, चर अचर पदारथ सेस कहा ?
दर्शन सुख वीर्य अनत चतुष्ट, सिंहासन परिशोभैं अति सु सुष्ट ॥

त्रय छत्र विराजैं चन्द्रकिरन, ढलकैं चौसठि सुर करि चमरन ।
भामंडल सप्तक भव्य भवा, नभमैं पुष्पनिकी वृष्ठि हुवा ॥

ढिगि सोक हरै तरु सोक सुजी, नभमैं बाजैं दुंदुभि अति जी ।
दिव्यध्वनितैं भवि मोह हरै, जग के बांधव हम जोर करैं ॥

सब देशनिमैं विहरत वृषकर, भवि जीवनि शिव मगमैं थिति धर ।
सम्मेद शिखरतैं मुक्ति गये, सुर मघवा कल्यानक ठये ॥

तुम कल्यानक शोभा अनुपम, त्रय ज्ञान धरैं पग कइ न सक्कम ।
हम मंदबुद्धिकी गिनति किमं, पर भक्ति लाइ थुति मिसि वरनं ॥

हम भाग योगतैं दर्श लहा, तुम कृपा नाथ जगबंधु महा ।
हम अरज यही जग दुःख दहा, भव भव सेवा द्यौ चरण गहा ॥

तुम तारि तारि भव उदधि थकी, हम जारि जारि वसुकर्म जथी ।
जिन मार मार इह कामबली, शिव सार सार दे मोक्षथली ॥

घत्ता—

तुम त्रिभुवन नामी अंतरजामी, जग विख्यामी पार्श्वपती ।
हम शिवसुख दीजै ढील न कीजै, दया करीजै जगतपती ॥

(इति जयमालादि महार्घं०)

शिखरिणी—छन्द—

यही पूजा कोई पढइ पढवावै सुमनसा ।
तथा श्रोता धारैं करनपुर द्वारं शुभ रसा ॥

लहै धीमान श्रेयं दधति सुभ पुत्रं प्रिय महान् ।
पुनः स्वर्गं सौख्यं किल प्रहति कल्याणक प्रहान् ॥

(इत्याशीर्वादः)

कवित्त—

नर नरपति वा मुनिजन संघकौं श्रावकजन वा श्रावकनीय ।
देश नगर वा वन उपवनकौं शहर बजार प्रहन पंकतीय ॥

शांति करनकौं विघन हरनकौं सुख उत्सवकौं हौंन सदीय ।
पार्श्वप्रभूके चरण कमल प्रति त्रय जल धारा दे भविनीय ॥

(इति शांतिधारा)

卐

अन्तिम-मंगल

कवित्त—

सकल लोक संबंधी संपत्ति सकल सुखनि की पंकति आय ।
पुत्रपौत्र कामनि वर लंछिन इक छत राजै करैं सुख पाय ॥
गज घोटक रथ पाइक बहु गुण चमर छत्र सिंहासन ठाय ।
नितप्रति उदय बहुरि दिवपति लह अनुक्रम लहि शिवपुरकौं जाय ॥
जल चन्दन अक्षत वर पुष्प सु चरु अरु दीप धूप फल जान ।
भिन्न भिन्न करि पूजौं पारस वा मिश्रित करि दे अरघान ॥
हाथ जोड़ पुनि खड़े होयकैं गुण गावैं हियमैं हित आन ।
वसु शत नाम जपौं थिर होके नाचौं गावौं आरति ठान ॥
मंगल पूजापाठ भविनकौ वृष वर्द्धनकौं दधि ज्यौं चन्द ।
कल्पवृक्ष कल्पनितैं पूरित चिंतामणि चिंतत अघ मन्द ॥
कामधेनु ज्यौं करै कामना त्यौं सुख पूरित नन्द अनन्द ।
सुरगिर चन्द सूरजवत थिर होकरहौं पाठ सुखकन्द ॥
ईति भीति सप्तकहै जगमैं शुक मूषक टीडीदल जोइ ।
अति वर्षा वा मेघ बरस ना नरपति वा पर चक्री होइ ॥
गज हरि अहि जलधरकी बाधा रोग जुद्ध अति अग्नि बधोइ ।
पारसप्रभु की पूजा सेवैं सब सुख, दुख नासै अघ खोइ ॥

दोहा—

नन्दराम सेवक अधम, ताकौ करौ उधार ।
तौ हम अधम उधारता, नाम जपैं विस्तार ॥

(आगै शांति, ताकौ विशेष भेद वर्णन)

कवित्त—

प्रणव पूर्व धरि नीचै मायासुर दूजा जपि श्री तीर्थेश ।
अनुक्रम तीजा पंचम छटमा सप्तम अष्टम दशमा तेस ॥
अन्त बारमा आठ थानमैं पञ्च परमगुरु मन्त्र विशेष ।
सम्यक्दर्शन ज्ञान चरण त्रय ये भी आठमनौं जगतेश ॥

अथ महामन्त्र—

१—ॐ ह्रां णमो अरहन्ताणं,
२—ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं,
३—ॐ ह्रुं णमो आइरियाणं,
४—ॐ ह्रूं णमो उवज्झायाणं,
५—ॐ ह्रें णमो लोए सव्व साहूणम्,
६—ॐ ह्रैं सम्यग्दर्शनाय नमः .
७—ॐ ह्रौं सम्यग्ज्ञानाय नमः,
८—ॐ ह्रः सम्यक्चारित्राय नमः.

एकबार उच्चारण—

ॐ ह्रां ह्रिं ह्रुं ह्रूं ह्रें ह्रैं ह्रौं ह्रः असि आ उ सा सम्यग्दर्शन-ज्ञानचारित्रेभ्यो ह्रीं नमः ।

कवित्त—

महामन्त्र अपराजित वरना पैंतिस अक्षर मित परवान ।
जपै भव्य थिरता मन आन ॥
पूज मालिका आदि अन्त मधि जपै भव्य थिरता मन आन ॥
ब्रह्मचर्य जुत प्राशुक जलतैं शुचि तन करि सित वस्त्र उढान ।
मन्द स्वासतैं खड़ा होइकैं व्रतनि विनय फल फलित सुजान ॥

सिरोभाग मस्तक लोचन जुग और नासिका मुख रक्षेय ।
हृदय नाभि चरणौं तक आठौं महामन्त्र रक्षा वर लेय ॥
अष्ट अंग रक्षक आठौं पद मनमैं ऐसौ धरि वंछेइ ।
ध्यान धारि पद्मासन बैठे बहुत ज्ञान संपति रिधि लेइ ॥
ह्रींकारमैं ये षट् गर्भित मुनिसुव्रत नेमी विंदु जान ।
चन्द्रप्रभु अरु पुष्पदंत जुत अर्द्धचन्द्र आकार बखान ॥
पद्मप्रभ अर वासुपूज्य जिन पार्श्व सुपार्श्व अप्र परवान ।
शेष जिनेश्वर शेष थानमैं माया बीजाक्षर जपियान ॥
श्याम श्वेत अरु लाल हरित ये जुग जुग जिन वसु शेष जिनान ।
सुवरनमय षोडश जिन वरनत वरण इसौं मनमैं धरियान ॥
'अ' आदिक षोडश स्वर वरने 'कचटतप' नय सु सप्त उचान ।
ह भ म र घ झ स ख मवलव्र्यूं भण ये वसु बीजाक्षर उर आन ॥
पूज्य पंच गुरु तीन रतन भणि पूज्य पदारथकौं उर आन ।
देवनपति चव श्रुत देशावधि परमावधि सरवावधि जान ॥
बुद्धि रिद्धिधर अर सर्वौषध और अनंतबली धरमान ।
सप्त रिद्धि रस वैक्रीयक रिधि क्षेत्र अक्षीण महानस खान ॥

ॐ ह्रीं णमो अरहंताणं आदि पंच परमेष्ठी रत्नत्रय धर्माय नमः अर्घं० ॥

कवित्त—

श्री देवी ह्री धृति लछिमी वर, गौरी, और चंडिका देव्य ।
सरस्वती पुनि जया अंबिका विजया क्लिन्ना अर अजितेव्य ॥

नित्या मदद्रवा कामांगी कामवाण सानदा जेव्य ।
नन्दमालिनी मायादेवी मायाविन्य रौद्र कलितेव्य ॥

दोहा—

कल्पकलिप्रिय देवते, गिनती चिसवावीस ।
प्रणव मायया बीज भणि, नमि जिनवर चौवीस ॥

ॐ ह्रीं असि आ उ सा सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रेभ्यो ह्रीं नमः अर्घं० ॥

(१०८ शतोत्तरवसु नाम मंत्र जाप)

ॐ ह्रीं अकार हकार पर्यंत स्वर ह्रस्व बीजाक्षर समन्वित उचारन मन्त्र नमः ॥

ॐ ह्रीं भावनेंद्र व्यतरेन्द्र ज्योतिषेंद्र कल्पेन्द्र देशावधि श्रुतावधि परमावधि सर्वावधि बुद्धिऋद्धि सर्वौषधिऋद्धि अनन्तबलऋद्धि रसऋद्धि वैक्रियकऋद्धि क्षेत्रऋद्धि अक्षीणमहानस ऋद्धिप्राप्तमुनिभ्यो नमः ॥

श्री देवी आदि कलिप्रिय पर्यंत चतुर्विंशति देवी जिनमत अधिष्ठिताय नमः ॥ अकृत्रिमजिनालयेभ्योः नमः ॥ जिनबिंबेभ्यो नमः ॥ उत्कृष्टविनयलायकआर्यिका श्राविकाभ्यः शतकार शांतिं कुरु ॥

कवित्त—

पन्नग नागिन और गौनसाक काकिनि धाकिनि जान ।
थाकिनि राकिनि लाकिनि डाकिनि शाकिनि हाकिनि येभी मान ॥
जंगम राक्षसभेषज दुमह किन्नर संगन मूलेछ बखान ।
व्याधं व्यंतर देवत तस्कार अगनि अंगन द्रुष्ट प्रमान ॥

रेपल भक्षण मुकुल जृंभक हिंसक जलधि सिंह भय मान ।
सूकर चित्रक हस्ति भूमिया शत्रु ग्रामणी ईति सु जान ॥

स्वचक्र दुर्जन भास्कर ध्यासय उष्ट्र आन ।
देशज भूत अष्टचालिस गिनि जिन पूजनतै टरैं निदान ॥

शांति करहु चब विधि संघकौ तुम शांति करहु सब देश रु काल ।
मरी चौर दुर्भिक्ष रोगतैं सब जीवनि कौ करि प्रतिपाल ॥

जैनधर्म श्रावक कुलमैं जिम जन्म होय होइ तो जग जंजाल ।
बार बार हम मस्तक नावैं कर्म काटि द्यौ शिवपद हाल ॥

(इति पूजन सम्पूर्ण)

दोहा—

पंच परम गुरु जिन शुभनि, जिनधर गेह महान ।
कल्याणक पद देव जिन, नमौं नमौं धरि ध्यान ॥

कवित्त—

नभ अनंत मधि तीन लोक हैं तामैं मध्यलोक मधि जान ।
जम्बूद्वीप मध्य गिरिराजा ताजगंज बस्ती उर आन ॥

शाहजहां कर रच्यौ मुकरवा ता नीचैं कालिंदी जान ।
नाम दूसरा यमुनाजी सो वहै मिष्ट जल अति सोभान ॥

बाग वनादिक कूप वापिका हाट बाजार गेह पंक्तान ।
चौक मध्य श्रीजिनग्रह शोभै पार्श्वनाथ राजैं भगवान ॥

सैली-वडी जैनजनकी जहां पूजन शास्त्र श्रवण तप दान ।
चरचा आगममय आरति हुव भजन नृत्य गायैं वाजान ॥

आपसमैं अति प्रीति धरै अैसे श्रावक श्रावकनी मान ।
नाम तिनौंके किंचित वरनौं जा कारणतैं पाठ रचान ॥

अग्रवाल जैनीजनमैं इक नाम उमेदी मल्ल इकत्रार ।
नंदग्राम तुम नाम तीर्थंकर तीस चौवीसी के लखि सार ॥

सुनिकै हमनैं मनमैं हरिकैं श्रीजिनकौ मन मंत्र उचार ।
रच्यौ पाठ पूजा मंगल इह तुच्छ बुद्धि अरु शक्ति न सार ॥

प्रेमराज भाईनैं हमकौं नाम त्रिलोकसार ग्रंथान ।
आनि दियौ ताकौ नमि देख्यौ तामैं कथन अपूरव मान ॥

नेमिचंद आचारज करता भाष वचन टोडरमल्ल जान ।
स्वल्प बुद्धि वासनवत लेकै रच्यौ भूल वुध करौं सुधान ॥

उपगार वडा है पंचगुरुनिका वा श्रुत जिन कीनौं व्यख्यान ।
नेमिचंद जिन तत्व विकासा टोडरमलनैं दियौ दिखान ॥

जैनधर्म सैली भव्यनिकी तिनमैं वल्लामल वखान ।
मथुरानैं कागद स्याही का प्रेरक तातैं ये भी जान ॥

त्रोटक-छन्द—

संवत्सर उनइस शतक गिनं ।
बाहन सालक सत्रैम भनं ॥

सत्तार ता ऊपरि अवर धरं ।
रिति चैत्रमास भाद्वसुवरं ॥

ता असित पक्ष तिथि त्रोदसिया ।
सुभ वार शनिश्चर जानि निया ॥
नक्षत्तर योग करण धरिया ।
वर पूरण मंगल पाठ किया ॥
तहां राज करै अंगरेज नृपं ।
सूरजवत् तेज प्रताप कपं ॥
कोइ ईति भीति नहि राजभयं ।
उपगार तिनौंका इह लहियं ॥
अति मंदमती नंदराम नरं ।
ज्यौं अंध हिया सुनि निकट धरं ॥
ता वस्तुनि निरखत जाननभ्य ।
त्यौं हम परिजनिता भन जीवत्य ॥

सोरठा—

जैवंते जिन होहु, पंच परमगुरु जिन वचन ।
इह अरदास सु लोहु, भव भवद्यौ सेवा चरण ॥

इति त्रिलोकसम्बंधी पूजनयुक्त श्रीमगल पूजापाठ सम्पूर्ण ॥